मंगल-ग्रन्थ-माला का चतुर्थ पुष्प ।

वृक्ष में जीव है

[सचित्र पुस्तक]

लेखक

श्री स्वामी मंगलानन्द पुरी जी ।

प्रकाशक

एल० एस० वर्मा ऐन्ड कम्पनी

१२८ अतरसूया, प्रयाग ।

सं० १९८१ वि० सन् १९२४ ई० ।

सृ० सं० १,९७,२९,४९,०२४ आब्द ।

प्रथमावृत्ति

सजिल्द २)

विषय-सूची।

१ खंड–तर्कवाद

२ खंड—वेदादि के प्रमाण

३ खंड—आक्षेपों के उत्तर ।

......

पुस्तक सूची ।

जिनकी सहायता से यह पुस्तक तैयार की गई है ।

सं०	ग्रन्थकर्ता, अनु०, या प्रका०
संस्कृत पुस्तकें	
१ ऋग्वेद दयानन्द भाष्य	वैदिक यन्त्रालय अजमेर
२ यजुर्वेद ,, ,,	,, ,, ,,
३ ऋक् अथर्वेद	सायण भाष्य ।
४ छान्दोग्य उपनिषद्	पं० शिवशंकर जी काव्यतीर्थ
५ मानव धर्म शास्त्र	स्वर्गवासी पं० भीमसेन शर्मा जी ।
६ मनुस्मृति सांख्य वैशेषिक	,, पं० तुलसीराम जी ।
७ वेदान्त शांकर भाष्य	आनन्दाश्रम पूना
८ ,,	,, ,,
९ ,,	श्री पं० आर्य मुनि जी काशी ।
१० न्याय वैशेषिक सांख्य	स्वर्ग० पं० प्रभुदयाल जी [वेंकटेश्वर यन्त्रालय, बम्बई]

११ वैशेषिक उर्दू भाष्य	स्वामी दर्शनानन्द जी
१२ " अंगरेजी भाष्य	पाणिनि आफिस प्रयाग
१३ " संस्कृत भाष्य	श्री पं० चन्द्रकान्त जी तर्कालंकार
१४ भगवद्गीता रहस्य	लोकमान्य प० बालगंगाधर तिलक महाराज।
१५ आपटे का कोष	आपटे, बम्बई।
१६ वृहद्विष्णु पुराण	वेंकटेश्वर यं० बम्बई
१७ श्री मद्भागवत पुराण	वेंकटेश्वर यं० बम्बई
१८ महाभारत	निर्णय सागर यं० "
१९ बृहत् संहिता	" " "
२० अष्टाध्यायी	वेदप्रकाश इटावा।
२१ शास्त्रार्थ पं० गणपति शर्मा और श्री स्वामी दर्शनानन्द जी	प्रकाशक महाविद्यालय ज्वालापुर [हरद्वार]
२२ स्थावर में जीव विचार	स्व० पं० भीमसेन शर्मा जी
२३ " " "	श्री बा० श्यामसुन्दर लाल जी बी० ए० प्रोफेसर वकील मैनपुरी।
२४ " " "	स्वामी दर्शनान्द जी कृत उर्दू ट्रैक्ट (इसका हिन्दी पं०

	गोकुलचन्द जी दीक्षित के दर्शनानन्द ग्रन्थ संग्रह पृष्ठ ६४३ से ६७० तक आया है।
२५ वृक्षों में जीव विचार	श्री पं० बी० एल० शर्मा जी
२६ ,, ,, ,, निर्णय	,, ,, गणेशप्रसाद शर्मा जी फर्रुखाबाद।
२७ दयानन्द प्रकाश	,, स्वामी सत्यानन्द महाराज लाहौर।
२८ ऋषि दयानन्द के पत्र और विज्ञापन द्वितीय भाग	पं० भगवद्दत्त जी बी० ए० रिसर्च स्कालर डी० ए० बी० कालिज लाहौर
२९ आत्म-दर्शन	महात्मा नारायण स्वामी
३० सत्यार्थ प्रकाश	वैदिक यन्त्रालय अजमेर
३१ विकासवाद	पं० विनायक गणेश साठे जी [प्र० सद्धर्म प्र० यन्त्रा० गुरुकुल कांगड़ी हरद्वार]
३२ वैज्ञानिक खेती	श्री मती हेमन्तकुमारी देवी जी लखनऊ।
३३ मेरी कैलाश यात्रा	,, स्वामी सत्य देव महाराज।
३५ अक्षर विज्ञान	,, पं० रघुनन्दन शर्मा जी (प्र० शूर जी वल्लभदास

ऐंड कं० बड़गादी बम्बई।

३५ डा० सर जगदीश चन्द्र वसु और उन के आविष्कार — श्री सुख सम्पतिराय जी भण्डारी (प्र० श्री मध्य भारत पुस्तक एजेन्सी इन्दौर)

३६ जसवन्त जसो भूषण ग्रन्थ मारवाड़ — राव राजा श्री रघुनाथसिंह जी ठेकाना जीवन्द(सामेश्वर रेल स्टेशन) जोधपुर राज्य के पास मैंने इस पुस्तक को देखा था।

स्कूली पुस्तकें।

नं०	ग्रन्थकर्ता या अनुवादक
३२ Observation Lessons Reader No: 3 का उर्दू अनुवाद	
३८ Nature-study No: 1	अनुवादक स्वर्ग वासी बाबू माणिक चन्द्र जी बी० ए० सी० टी० (प्राधन सिटी आर्य समाज लखनऊ !)
३८ Nature Study (of Burmah)	E. Thompstons B. Sc. Deputy Director of

Agriculture, Burmah)
Pub: Longman Green
and Co,

[illegible] Or Primer of Physical science — पं० लक्ष्मी शंकर मिश्र जी एम० ए० काशी।

समाचार पत्र।

	ग्रन्थकर्ता अनुवादक या प्रकाशक
ब्राह्मण सर्वस्व	मासिक इटावा
माधुरी	„ लखनऊ
आर्य सिद्धान्त	„ (उर्दू) बदायूं (बन्द हो गया)
इन्द्र	„ (उर्दू) श्री धर्म पाल (अब्दुल गफूर जी) निकालते थे।
मस्ताना योगी	„ उर्दू फीरोज़पुर
आर्य गज़ट	साप्ताहिक „ लाहौर
आर्यमित्र	„ हिन्दी आगरा

अंगरेजी पुस्तकें।

The Plant Life Plant and its Food — J. Bretland Farmer, Prof. of Botany -rial College

and technology London

५०)	The Animal World	F. W. Gamble F. R. S. Pro: of Zoology Bermin-gham University (Publisher Williams or Norgate London.)
(५१)	Germs of mind in plants	R.H. France (Pub: Charles H. Kerrs -co Chicago U. S. A)
(५२)	Evolution of Plants	Dunkin field Henry Scott M. A. L. L. D. President, Linnean Society London.
(५३)	Response in plants	Doctor Sir J. C, Bose Calcutta
(५४)	The Positive Seiences of the Ancient Hindus	Dr. Bragendra Nath Seal M. A. Ph.D. Prof: of Philosophy Caloutta University (Pub: Long-mans,Green and Co., Calcutta).

(५५)	Original Sans-krit Text——	Prof: Muir.
(५६)	Origin and Grow-th of Religions	Prof: F. Max Muller.
(५७)	Life and Works of Pt. Guru Datta M. A.	Vedic Book Depot: Lahore.
(५८)	The Arya Samaj	Lala Lajpat Rai Ji (Pub: Longmans & Co
(५९)	Ayeen Akbary	Trans: by F. Gladwin.
(६०)	Importance of Vegetarian diet	श्रीमान् सेठ लल्लू भाई गुल-चन्द जौहरी आनेरेरी मन्त्री जदया ज्ञान प्रसारक फंड २०६ सराफा बाजार बम्बई
(६१)	Sanitation in India.	Dr. J. A. Turner M. D. Executive Health Officer Bombay Municipality co)
(६२)	Rig veda Atharva Veda	Trans: by Griffith
(६३)	Rig Veda	H. H. Wilson

प्रकाशक का निवेदन ।

श्री स्वामी मंगलानन्द जी पुरी महाराज ने निज रचित पुस्तकों के प्रकाशन के लिए चन्दा एकत्रित कर मुझे सिपुर्द कर दिया है अतः मैं स्वामी जी महाराज की सम्पूर्ण पुस्तकें क्रमशः प्रकाशित करूंगा ।

इस समय पाठकों की सेवा में "वृक्ष में जीव है" शीर्षक पुस्तक सप्रेम उपस्थित किया जाता है। इस पुस्तक को आप के हाथों में देते हुए मैं यह निवेदन कर देना चाहता हूं कि इस ५०० से भी अधिक पृ० की पुस्तक का दाम केवल २) है। इतने अल्प मू० में इतनी अधिक पृ० संख्या की पुस्तक शायद ही किसी उदार पुस्तक प्रकाशक के यहां मिल सके ।

स्वामी जी की पुस्तकें प्रकाशित करने से मेरा यह मतलब नहीं है कि मैं प्रकाशक बन कर कुछ आर्थिक लाभ कर सकूं बल्कि मेरी यह आन्तरिक अभिलाषा है कि मैं वयोवृद्ध अनुभवी स्वामी जी की पुस्तकों को प्रकाशित कर उन के विचारों का भारत के घर घर में प्रचार करूं । स्वामी जी देश में धार्मिक जागृति उत्पन्न करना चाहते हैं। अतः मैं भी उनकी पुस्तकों को प्रकाशित करना अपना सौभाग्य समझता हूं ।

स्वामी जी की पुस्तकें दान के धन से प्रकाशित हो रही हैं, अतः उन्होंने विचार किया है कि पुस्तकों की बिक्री से जो आर्थिक लाभ होगा वह सब आर्य समाज कानपूर को दे दिया जायगा। स्वामी जी की पुस्तकें देश की सम्पत्ति हैं, अर्थात् इन को छपाने का प्रत्येक को अधिकार है। आशा है पाठक अपनी सहायता से प्रकाशन-कार्य में मुझे उत्साह देते रहेंगे।

विनीत

लक्ष्मीशंकर वर्मा

मैनेजर एल॰ एस॰ वर्मा ऐण्ड कम्पनी

१३८, अतरसूया प्रयाग।

अग्रवाल-कुल भूषण, सनातन-धर्म के स्तम्भ,

हिन्दू शास्त्रों पर श्रद्धा रखने वाले,

शिक्षा-प्रेमी, ऐंग्लो-संस्कृत-फूलचन्द-बागला

हाई स्कूल, हाथरस के संस्थापक और

संचालक, श्रीमान् रायबहादुर

सेठ चिरंजी लाल जी बागला

के

कर कमलों में सादर

समर्पित ।

सहजानन्द पुरी ।

बागला-कुल भूषण, सनातन-धर्म के स्तम्भ,

साधु ब्राह्मणों पर श्रद्धा रखने वाले ,

विद्या-प्रेमी, ऐंग्लो-संस्कृत-फूलचन्द्-बागला

हाई स्कूल, हाथरस के संस्थापक और

सञ्चालक, श्रीमान् रायबहादुर

सेठ चिरंजी लाल जी बागला

के

कर कमलों में सादर

समर्पित ।

मङ्गलानन्द पुरी ।

धन्यवाद।

मङ्गलग्रन्थमाला की पुस्तकों को छपाने के लिए जिन सज्जनों ने आर्थिक सहायता दी है, उनको शतशः धन्यवाद है। इन सज्जनों की नामावली परिशिष्ट में प्रकाशित कर दी गई है।

श्रीमान् पं० केशव राव जी जज हाईकोर्ट (भूतपूर्व प्रधान आर्य समाज) हैदराबाद दक्षिण के हम विशेष बाधित हैं; क्योंकि जिस उदारता से आपने इस पुस्तक के प्रकाशन में सहायता दी है वह सराहनीय है।

२—इस पुस्तक को मैंने हैदराबाद से प्रताप प्रेस के मैनेजर और ट्रस्टी श्री पं० शिवनारायण जी मिश्र के पास भेजा था, आपने इसे कमर्शल प्रेस में छपवा दिया।

मिश्र जी ने जिस प्रेम और श्रद्धा के साथ पुस्तक प्रकाशन में सहायता दी, उसके लिए आप को धन्यवाद है।

३—लाला भगवानदास जी गुप्त कमर्शल प्रेस कानपुर, श्री पं० किशोरीदत्त जी शास्त्री राजवैद्य, नयागंज, कानपुर को भाषा की अशुद्धियां ठीक करने के लिए धन्यवाद है।

चिरंजीव शान्तिप्रिय द्विवेदी काशी निवासी, और क० प्रेस के चिरञ्जीव देवीदीन को सहायता के लिए आशीर्वाद।

४—इस पुस्तक के अनेक प्रमाणों की खोज में मेरी सहायता श्री पं० लक्ष्मीशंकर शर्मा जी उपदेशक हैदराबाद दक्षिण (आनरेरी प्रबन्धकर्ता, श्री देवीदत्त संस्कृत पाठशाला, रावतपुर सिकन्दरपुर जि० उन्नाव) ने की है, अतः आप भी धन्यवाद के पात्र हैं।

५—जिन पुस्तकों से मैंने इस पुस्तक-रचना में सहायता ली है, अन्त में मैं उनके लेखक, अनुवादक, प्रकाशक महाशयों को सहस्रशः धन्यवाद देता हूं। सच तो यह है कि मैंने उन की ग्रन्थ-वाटिका से कुछ सुमन चुन २ कर एक गुलदस्ता तैयार किया है जो आज प्रस्तुत रूप में आप के सामने है।

लेखक।

प्रस्तावना ।

यह पुस्तक आप की सेवा में उपस्थित की जाती है। इसकी तैयारी की राम कहानी सुनाना कदाचित अरोचक होगा।

संवत् १६७२ विक्रमी में सीतापुर (अवध) आर्यसमाज के वार्षिकोत्सव में मैं भी शरीक था। वहां शङ्का—समाधान के अवसर पर एक महाशय ने प्रश्न किया कि "क्या वृक्ष जीवधारी हैं ?" उत्तर मैंने ही दे दिया कि "हां !" प्रश्न कर्त्ता को तो सन्तोष हो गया, परन्तु उस समाज के प्रधान श्री रामानन्द जी ने यह घोषणा कर दी कि "समाज के उपदेशकों में इस विषय पर मत भेद है इसलिए इस प्रश्नोत्तर को समाज की ओर से न समझा जाय।"

इस घोषणा का परिणाम जैसा कुछ होना चाहिए था वैसा ही हुआ। अर्थात उसी समय एक सनातन धर्मी प्रश्न कर्त्ता ने उक्त 'प्रधान जी को आड़े हाथों लिया' और कहा कि आप का कुछ ठीक ठिकाना भी है ? आप की वेदी से एक संन्यासी उत्तर देते हैं और आप झट खड़े हो कर कहते हैं कि उस को आर्य समाज की ओर से न माना जाय !! इत्यादि।

यह शोचनीय दशा देख कर मेरे मन में बड़ा खेद उत्पन्न हुआ और मैंने अनुसन्धान किया तो ज्ञात हुआ कि ऐसे कई विषय हैं जिन पर आर्य सामाजिक विद्वानों का मत भेद है और अगर उनका निर्णय न हो गया तो विपक्षियों को आर्य समाज पर ठट्ठा उड़ाने का उचित मिलता ही रहेगा, इसलिए मेरा यह विचार दृढ़ हो गया कि इस एक विषय का तो मैं पूरा २ अनुसन्धान कर डालूं कि " वस्तुतः वृक्ष का जीवधारी होना ठीक है या नहीं ?

इसी अभिप्राय से मैंने पक्ष और विपक्ष की सारी पुस्तकें मंगाईं और उन सब को पढ़ने तथा यथोचित मनन पर इसी परिणाम पर पहुंचा कि वृक्ष में जीव का होना ही प्राचीन और अर्वाचीन विद्वानों के युक्तियों, प्रमाण तथा निर्णयों से सिद्ध है।

निदान इस प्रकार के परिश्रम से मैंने इस विषय की पुस्तक का पूरा सामान तैयार कर लिया। पुस्तक तो तैयार गई परन्तु इसको स्वतः प्रकाशित करना मेरी शक्ति से था, इसलिए मैंने कई सभा समाजों तथा पुस्तक-प्रकाशकों पत्र व्यवहार किया पर सारा परिश्रम व्यर्थ गया।

२—इसी बीच में एक घटना इस प्रकार घटित हुई पुस्तक लिखे जाने पर श्रीमती आर्य प्रतिनिधि सभा संयुक्त प्रान्त इसको मंगवा लिया और वृन्दावन गुरुकुल के

ान् नारायण प्रसाद (वर्तमान महात्मा नारायण स्वामी जी)
सेवा में सम्मति प्रकाशनार्थ भेज दिया। भवत महात्मा
ने मेरे लेखों को पढ़ कर जो सम्मति प्रकट की वह सभा
पत्र संख्या ५६ ता० १ अक्टूबर १९१८ द्वारा मुझे सूचित
गई जिसका प्रति लिपि निम्न प्रकार है—

"श्रीमती आर्य प्रतिनिधि सभा के योग्य मन्त्री जी की
ज्ञानुसार मैंने स्वामी मंगलानन्द जी पुरी कृत "पुराणों में ओव
" नाम वाली पुस्तक को पढ़ा है।

पुस्तक बहुत उपयोगी है, युक्तियों और प्रमाणों—दोनों
ा अच्छा संग्रह किया गया है।१ इस बात का पूरा २
योग किया गया है कि कोई आक्षेप इस सिद्धान्त के विरुद्ध
त्तर देने से बाकी न रहे। *केवल एक ही दोष पुस्तक में है
ौर वह यह कि भाषा बहुत खराब और अशुद्धियों से भरी
। यदि सभा इसका छपाना स्वीकार करे तो भाषा दुरुस्त
कराई जा सकती है †।"

गुरुकुल
२०।८।१९१८ } (ह०) न० प्रसाद

---

*जिस समय यह पुस्तक लिखी गयी थी उस समय से इस
में और भी नवीन युक्तियों तथा प्रमाणों का समावेश कर दिया
गया है। (मंगलानन्द)

† यथा सम्भव भाषा दुरुस्त कराई है।
मंगलानन्द

अब पुस्तक को छपाने का प्रश्न सभा की अन्तरंग बैठक में उपस्थित किया गया। परन्तु निर्णय हुआ कि सभा इस पुस्तक को नहीं छपा सकती" क्यों? जब कि सभा ही के एक प्रतिष्ठित साय ने इसको बहुत उपयोगी मान लिया है तो पुस्तक के छपाने से इनकारी क्यों?—सभा ने तो मेरे इस प्रश्न का कुछ उत्तर न दिया, परन्तु उसके एक सभ्य श्रीमान् पं० गंगाप्रसाद जी एम० ए० हेड मास्टर डी० ए०वी० स्कूल प्रधान आर्य समाज चौक प्रयाग ने यों बतलाया—

"आप की पुस्तक को सभा की ओर से छपने का मैंने ही विरोध किया था। मेरा कथन यह था कि जब कि सभा के सभ्यों में इस विषय पर दो पक्ष हैं तो ऐसे झगड़ालू विषय की पुस्तक को छपा कर सभा क्यों एक तरफ़ा डिग्री दे देवे। इस से दूसरे पक्ष वालों में मनोमालिन्यता आ जायगी।

सभा की अन्तरंग बैठक की उपयुक्त व्यवस्था सुन कर मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ! अगर ऐसे विवाद ग्रस्त विषयों की छानबीन researches का काम ये सभायें न कराएंगी, तो फिर वे कैसे तय होंगे? सभा के बड़े २ धुरन्धर विद्वान्गण (ग्रेजुएट साहबान) यह क्यों नहीं विचार करते कि अगर झगड़ालू मामले न तय हुए तो फिर किस मुंह से सारे संसार को वैदिक धर्म में आने का निमंत्रण दे सकते हैं। मुसलमान ईसाई, जैन, बौद्ध पारसी आदि जब कभी ऐसे ही जटिल प्रश्नों को

माप से ओप पहवास करेंगे तो उनसे क्या यह कहोगे कि
ष में जीव के होने के प्रश्न पर हमारे यहां दो पक्ष हैं अतः
स विषय पर हम कोई विचार नहीं कर सकते । क्या आप क
स उत्तर से वे सन्तुष्ट हो जायंगे ? अगर नहीं तो फिर क्या
समाजों तथा सभाओं का यह परम कर्तव्य नहीं है कि अन्य
कार्यों की अपेक्षा सबसे प्रथम इन्हीं विवादास्पद विषयों का
नेपटारा करा डालें ।

हां ! यह प्रश्न हो सकता है कि इन झगड़ालू विषयों को
कैसे निपटावें ? उत्तर यह है कि सभा को चाहिए था कि
मेरी इस पुस्तक को ऐसे रिमार्क Remark (टिप्पणी) के
साथ छपवा देती कि—"वृक्षमें जीव है या नहीं ?" इस विषय प
सभा की निजकी कोई सम्मति नहीं है, सभा इस विषय
से ओर से उदासीन है, अतः इस पुस्तक को सभा
विद्वानों के विचारार्थ प्रकाशित कराती है' क्यों कि सभा
के सभ्य का कथन है कि लेखक ने "युक्तियाँ प्रमाणों
अच्छा संग्रह कर दिया है और पुस्तक बहुत उपयोगी है।
र इस पुस्तक को पढ़ कर विपक्षी लोग यह समझें कि
इन युक्तियों प्रमाणों का खण्डन कर सकते हैं तो व
ना लेख सभा के पास भेज दें और यदि वह उपयोगी
ना जायगा तो सभा दूसरे संस्करण में उन को भी छपा देगी"
इस प्रकार इस विषय पर काफी वाद विवाद हो कर कुछ

सिद्धान्त निर्देश होकर सबको सुगमता से ज्ञात हो जाता। ऐसे निर्णय के साथ सभा मेरी पुस्तक को अगर छपा देती तो वह अपना कर्तव्य पालन करने वाली मानी जा सकती थी। परन्तु।

३---सब ओर से निराश हो जाने पर मैंने अपनी इस पुस्तक और अन्य पुस्तकों को छपाने के लिए पेशगी मूल्य तथा दान प्राप्त करने की ठान ली और इस प्रकार दाताओं की सहायता से (जिनकी नामावली परिशिष्ट में छपी है) यह पुस्तक आठ वर्षपश्चात् अब प्रकाशित हो सकी है।

पाठक ! यह थोड़े में इस पुस्तक के प्रकाशित होने का इतिहास है। मुझे आशा है कि आप लोग इस पुस्तक को अपना कर मुझे आगे और भी पुस्तकें लिखने के लिए उत्साहित करेंगे। पुस्तक कैसी है ? इसका निर्णय तो आप स्वयं कर लेंगे।

४—मैंने यथा सम्भव इस बात की कोशिश की है कि पुस्तक में विपक्षियों के सम्पूर्ण प्रश्नों के उत्तर दे दिये जांय। सन १९१६ से आज (१९२४) तक अनेक स्थानों पर वृक्षों के जीवधारी होने पर व्याख्यान देने तथा इस विषय पर होने वाली शङ्काओं के समाधान करने से जो जो निष्कर्ष निकले उन्हें इस पुस्तक में उत्तर सहित सम्मिलित किया गया है। दिल्ली के सद्धर्म प्रचारक में मैंने इसी अभिप्राय का एक विज्ञापन

छपाया था कि जिन लोगों को इस विषय पर कुछ शङ्कायें हों वे लिख भेजें। इस सूचनानुसार दो पत्र आए उन में जो शङ्कायें की गई थीं उन के उत्तर पूर्व से ही लिखे जा चुके थे। पुस्तकें छपते २ कई नवीन शङ्कायें सुनी गईं, उनको भी उत्तर सहित सम्मिलित कर लिया गया। कई छपने योग्य बातें पुस्तक के छप जाने पर पाई गईं, मैंने उनको भी परिशिष्ट में स्थान दे दिया है। आगे जो शङ्कायें सुनी जायंगी उनको पुनरावृत्ति में शामिल करने का प्रयत्न करता रहूंगा।

५—इस पुस्तक में मेरी निज की कोई सामग्री नहीं है। प्रथम खण्ड तो अंगरेजी पुस्तकों के आधार पर लिखा गया है और अन्य खंडों में शास्त्रों के प्रमाणों की भरमार है। हाँ टीका टिप्पणी द्वारा विषय को सरल बनाने की यथा सम्भव कोशिश की गई है।

जहां अन्य विद्वानों के वाक्यों पर किसी टीका टिप्पणी की आवश्यकता पड़ी है वहां मैंने उन टिप्पणियों के अन्त में अपना नाम भी दे दिया है। ऐसा रिवाज हिन्दी पुस्तकों में कम देखा जाता है किन्तु अंगरेजी पुस्तकों में यह प्रणाली बड़ी सावधानी से वर्ती जाती है।

आज कल हिन्दी पुस्तकों के लिखने वाले सज्जनों की बेपरवाही से पाठकों को कई उलझनों में पड़ना पड़ता है (मैं स्वयं बहुत बार ऐसे झमेलों में पड़ा हूं) खास कर जिन विषयों में संस्कृत श्लोकों का उद्धरण होता है प्रायः हिन्दी पुस्तकों में उन प्रमाणों के अर्थ और ग्रन्थकर्ता की सम्मति इतनी मिली जुली हुई रहती है कि जो पाठक यह पता लगाना चाहे कि प्राचीन उद्धरणों का आशय कहां तक है और नवीन ग्रन्थकर्ता महाशय

की राय क्या है तो यह जानने में बड़ी कठिनाई पड़ती है। हम संस्कृतज्ञ यूरोपियनों (मोक्ष मूलरादि) को प्रशंसा किये बिना नहीं रह सकते कि वे मूल पुस्तक से जहां अपनी ओर से एक शब्द भी अधिक कहना चाहते हैं फौरन अपने हस्ताक्षरों द्वारा स्पष्ट कर देते हैं यह प्रणाली अनुकरणीय है।

जहां कहीं कोई टिप्पणी अपने ही वाक्यों पर देना पड़ा है वहां हस्ताक्षर नहीं किया इस से पाठक गण दूसरों के उद्धरणों को जो इस पुस्तक में बहुतायत के साथ हैं आसानी से भेद कर सकेंगे।

६—अन्तिम निवेदन मुझे यह करना है कि इस बात की बहुत कोशिश की गई कि पुस्तक में अशुद्धियाँ न रहें परन्तु फिर भी कुछ गलतियां रह ही गईं, जिन में से कुछ भारी भारी अशुद्धियों का "शुद्धि पत्र" परिशिष्ट में जोड़ दिया गया है। पाठक शुद्धि पत्र से सँशोधन कर के पढ़ लें तो ठीक होगा। इस कष्ट के लिए मैं पाठकों से क्षमा-प्रार्थी हूं। आशा है कि आप विषय की गम्भीरता के सम्मुख भाषा व। प्रूफ की गलतियों की परवाह न करेंगे। इत्योम् शान्तिः॥

आर्यसमाज कानपुर
ए० बी० रोड

ता० २६ मार्च १६२४

सर्व-हितैषी

मंगलानन्द पुरी

भूमिका

(श्रीमान् माननीय पण्डित केशव राव जी
जज हाईकोर्ट हैदराबाद दक्षिण लिखित)

वास्तव में इस पुस्तक की भूमिका राव आत्माराम जी
ौदा निवासी लिखने वाले थे। जिस योग्यता से वे इस
र्य को सम्पादन करते, आर्य भाषा के सेवकों में वैसा
रा कोई मुझे नहीं दिखलाई पड़ता। अर्वाचीन विज्ञान-
स्त्र रूपी यन्त्रों के द्वारा प्राचीन आर्य सभ्यता की खानों
से चमकीले रत्नों को निकालने में जैसी उनकी निपुणता
ी जाती है, वैसी बहुत ही कम लोगों में है। और इसी
पुणता के आधार पर वृक्षों में जीव के अस्तित्व को स
ाण सिद्ध करने वाला इस स्वर्णमयी पुस्तक पर जिस योग्य
ाति से राव जी सुहागा लगा सकते थे मुझे खेद है कि
स योग्यता से मैं इस कार्य को नहीं कर सकता। राव
ी के बहुत अधिक बीमार होने के कारण ग्रन्थ-कर्ता ने
ह कार्य मुझ से सम्पादित कराने की अभिलाषा की।

इस कार्य-भार का मेरे सिर पर पड़ने का एक और

की राय क्या है तो यह जानने में बड़ी कठिनाई पड़ती है। हम
संकुचित यूरोपियनों (मोक्ष मूलरादि) की प्रशंसा किये बिना नहीं
रह सकते कि वे मूल पुस्तक में जहां अपनी ओर से एक शब्द
भी अधिक कहना चाहते हैं कोष्ठक अपने हस्ताक्षरों द्वारा
स्पष्ट कर देते हैं यह प्रणाली अनुकरणीय है।

जहां कहीं कोई टिप्पणी एक दो वाक्यों पर देना पड़ा
है वहां हस्ताक्षर नहीं किया इस से पाठक गण दूसरों के उद्धरणों
को जो इस पुस्तक में बहुतायत से भरे हैं आसानी से भेद
कर सकेंगे।

६—अन्तिम निवेदन मुझे यह करना है कि इस बात की
बहुत कोशिश की गई कि पुस्तक में अशुद्धियाँ न रहें परन्तु फिर
भी कुछ गलतियां रह ही गईं, जिन में से कुछ भारी भारी
अशुद्धियों का "शुद्धि पत्र" परिशिष्ट में जोड़ दिया गया है।
पाठक शुद्धि पत्र से संशोधन कर के पढ़ लें तो ठीक होगा।
इस कष्ट के लिए मैं पाठकों से क्षमा-प्रार्थी हूं। आशा है कि
आप विषय की गम्भीरता के सम्मुख भाषा व प्रूफ की गल-
तियों की परवाह न करेंगे। इत्योम् शान्तिः॥

आर्यसमाज कानपुर
ए० वी० रोड

ता० २६ मार्च १६२६

सर्व-हितैषी

मंगलानन्द पुरी

ा किया है। पहिला विभाग उन्होंने तर्कवाद के सम-
ज्या है। इस विभाग में उन्होंने अनेक वनस्पति शास्त्र
के आविष्कारों को सूत्र रूप से संग्रहीत किया है
न बातों से यह दर्शाने की कोशिश की है कि वन-
में ऐसी विचित्र विचित्र बातें जो देखी जाती हैं
स्पष्टी-करण और किसी तौर पर नहीं किया जा
सिवाय इस के कि वृक्षों में जीवात्मा के अस्तित्व
ान लिया जाय।

दूसरे भाग में उन्होंने यह दर्शाया है कि जिस सिद्धान्त
ा अपने अखण्डनीय तर्क से प्रथम भाग में स्थापित कर
हैं, वह आप्त-प्रमाण अर्थात् अनेक वृद्ध-विद्वानों के
च्यों से भी सिद्ध होता है। इस भाग में उन्होंने महा
ादि सर्व मान्य ग्रन्थों के, पुराणादि सनातन धर्म-शास्त्रों
ौर वेदादि प्राचीन आर्ष-ग्रन्थों के प्रमाणों से यह दर्शाने
प्रयत्न किया है कि इन ग्रन्थों के कर्ता भी वृक्षों में
के अस्तित्व को मानने वाले थे। इस के सिवाय अनेक
रणों द्वारा उन्होंने यह भी दर्शाया है कि महर्षि दयानन्द,
ेसर गुरुदत्त, लोकमान्य पं० बाल गङ्गाधर तिलक तथा
गव आर्य-मुनि सरीखे आधुनिक भारतीय विद्वान् भी इसी
मति के हैं।

तीसरा भाग इस पुस्तक का मेरी समझ में सब से
धिक महत्व का है। वृक्ष में जीव मान लेना बहुत

कारण भी है, जिसे मैं यहाँ लिखे बगैर नहीं रह सकता। वह यह है कि इस पुस्तक का उत्पत्ति-स्थान वही है जो मेरा निवास-स्थान है। इस पुस्तक का बीजारोपण कहीं भी क्यों न हुआ हो, पर इस का सर्वांश दिया जाना और वर्तमान रूप में आना हैदराबाद में ही हुआ था। इस बात का हम हैदराबाद वासियों को हर समय अभिमान रहेगा कि एक परिव्राजक संन्यासी को लोकोपकार के कार्य में प्रवृत्त होने के लिए हम स्थान और सहायता दे सके।

जैसा कि मैंने अभी लिखा है कि इस पुस्तक का आदि स्थान वही है जो मेरा निवास-स्थान है, इसलिए मुझे इस पुस्तक के आदिम-स्वरूप को देखने का भी अवसर मिला। जब मैंने स्वामी मङ्गलानन्द जी महाराज के संचित आधुनिक वैज्ञानिकों के वर्णाश्रित मत और वेदादि शास्त्र के प्रमाणों के समुदाय को देखा था, उसी समय मुझे उनकी विद्वत्ता और सत्य-शोधकता पर आश्चर्य हुआ था। फिर भी मुझे सन्देह था कि वे अपने ज्ञान-भण्डार के इन मुक्ता फलों को मालिका के रूप में आर्य-भाषा प्रेमियों को धारण करने के लिए इतनी जल्दी किस प्रकार दे सकेंगे, पर स्वामी जी महाराज के परिश्रम और एकाग्रता को धन्य कि यह शुभ दिन हमें इतनी शीघ्र देखने को मिल गया।

स्वामी जी महाराज ने अपनी पुस्तक को चार हिस्सों

विभक्त किया है। पहिला विभाग उन्होंने तर्कवाद के सम-
त किया है। इस विभाग में उन्होंने अनेक वनस्पति शास्त्र
ोधकों के आविष्कारों को सूत्र रूप से संग्रहीत किया है
ौर उन बातों को यह दर्शाने की कोशिश की है कि वन-
तियों में ऐसी विचित्र विचित्र बातें जो देखी जाती हैं
सका स्पष्टीकरण और किसी तौर पर नहीं किया जा
कता सिवाय इस के कि वृक्षों में जीवात्मा के अस्तित्व
ो मान लिया जाय।

दूसरे भाग में उन्होंने यह दर्शाया है कि जिस सिद्धान्त
को वे अपने अखण्डनीय तर्क से प्रथम भाग में स्थापित कर
आये हैं, वह आप्त-प्रमाण अर्थात् अनेक ऋ-विद्वानों के
मन्तव्यों से भी सिद्ध होता है। इस भाग में उन्होंने महा
भारतादि सर्व मान्य ग्रन्थों के, पुराणादि सनातन धर्म-शास्त्रों
के, और वेदादि प्राचीन आर्ष-ग्रन्थों के प्रमाणों से यह दर्शाने
का प्रयत्न किया है कि इन ग्रन्थों के कर्ता भी वृक्षों में
जीव के अस्तित्व को मानने वाले थे। इस के सिवाय अनेक
उद्धरणों द्वारा उन्होंने यह भी दर्शाया है कि महर्षि दयानन्द,
प्रोफेसर गुरुदत्त, लोकमान्य पं० बाल गङ्गाधर तिलक तथा
पण्डित आर्य-मुनि सरीखे आधुनिक भारतीय विद्वान् भी इसी
सम्मति के हैं।

तीसरा भाग इस पुस्तक का मेरी समझ में सब से
अधिक महत्व का है। वृक्ष में जीव मान लेना बहुत

कठिन नहीं, पर इस सिद्धान्त को मान कर मन को स्थिर रखना बहुत मुश्किल है। अनेक आनुषांगिक प्रश्न उत्पन्न होते हैं जो कि हमें इस सिद्धान्त पर खड़े नहीं रहने देते। स्वामी जी महाराज ने अपनी पुस्तक के तीसरे भाग में प्रत्येक प्रश्न का एक एक कर के उत्तर दिया है— यह भाग इस पुस्तक के प्रत्येक वाचक को बड़े ध्यान पूर्वक पढ़ना चाहिये।

वृक्षों में जीव मानने पर जो अनेक प्रश्न उत्पन्न होते हैं उन में से शाकाहारियों के लिये जो भयङ्कर प्रश्न खड़ा होता है वह यह है कि—"अगर वृक्षों में जीव है तो उन को खाने में पाप होता है या नहीं?" ग्रन्थ-कर्ता स्वतः आर्य-समाजी और शाकाहारी हैं, इस लिए यह प्रश्न उन के सामने भी इतने भयंकर रूप में खड़ा हुआ कि उस को दूर करने के लिए उन्होंने अपनी पुस्तक का एक भाग समर्पण कर दिया है। उन के उत्तर का सारांश यह मालूम होता है, कि "क्योंकि परमात्मा ने मनुष्य के लिए यही खाद्य पदार्थ बनाया है, इसलिए वनस्पतियों के खाने में हम कोई पाप नहीं करते वरन् केवल परमात्मा की आज्ञा का पालन करते हैं।"

यह उत्तर जिज्ञासु को कहां तक शान्ति प्रदान कर सकता है, यह हर एक जिज्ञासु की संशय वृत्ति पर निर्भर है। वेदों [illegible] वर-प्रणीत मानने वाले आर्यों के लिए तो यह उत्तर एक

मुँहतोड़ जवाब है, परन्तु आर्यावर्त में और उस से बाहर भी वैदिक सिद्धान्त को मानने वाले आर्यों के सिवाय दूसरे भी बहुतेरे शाकाहारी लोग हैं, जिनके लिये यह उत्तर उतना समाधान कारक नहीं हो सकता। इतने पर भी मैं यह नहीं समझता कि स्वामी जी महाराज इस भाग के लिखने में असफल रहे; क्योंकि इस आक्षेप को दूर करने के लिए इस से उत्तम दूसरा जवाब नहीं दिया जा सकता। तो भी यह भाग बहुत उत्तम सधता, अगर ग्रन्थकर्ता यह दिखलाने का भी प्रयत्न करते कि वैदिक धर्म के अतिरिक्त दूसरे पुरातन धर्मों में भी मनुष्य का खाद्य पदार्थ वनस्पति ही बतलाया गया है।

अन्त में मैं दो शब्द पुस्तक की उपयोगिता पर लिख कर अपनी भूमिका को समाप्त करूंगा। बहुत से वाचकों को यह होगा कि—"इस पुस्तक का संसार में क्या उपयोग है, मैं जीव हो या न हो हमारे साधारण जीवन क्रम पर कोई प्रभाव नहीं पड़ सकता, परन्तु मैं स्वतः ऐसी पुस्तकों एक नितान्त दूसरी दृष्टि से देखता हूं। मैं ऐसी पुस्तकों निष्काम कर्म का एक उत्तम उदाहरण समझता हूं। जिस प्रकार से ऐसी पुस्तकों का लिखना कर्मों में उत्तम कर्म — निष्काम कर्म — का करना है, उसी प्रकार ऐसी पुस्तकों पढ़ना भी एक प्रकार से निष्काम कर्म है। जैसा कि इस पुस्तक के लिखने से स्वामी मंगलानन्द जी महाराज का एक [illegible] से मालूम होता है कि आर्य भाषा के सेवकों में स्थान

कठिन नहीं, पर इस सिद्धान्त
स्थिर रखना बहुत मुश्किल है।
उत्पन्न होते हैं जो कि हमें हम मि
देते। स्वामी जी महाराज ने अपनी
में प्रत्येक प्रश्न का एक एक कर
यह भाग इस पुस्तक के प्रत्येक वा
पढ़ना चाहिये।

वृक्षों में जीव मानने पर जो
हैं उन में से शाकाहारियों के लिये
होता है वह यह है कि — "अ
तो उन को खाने में पाप होत
ग्रन्थ-कर्ता स्वतः आर्य-समाजी ओ
लिए यह प्रश्न उन के सामने भी इत
हुआ कि उस को दूर करने के लि
का एक भाग समर्पण कर दिया है।
यह मालूम होता है, कि "क्योंकि
लिए यही खाद्य पदार्थ बनाया है, इस
में हम कोई पाप नहीं करते वरन्
का पालन करते हैं।"

यह उत्तर जिज्ञासु को कहां तक
है, यह हर एक जिज्ञासु की संशय व
को ईश्वर-प्रणीत मानने वाले आर्यों व

पहला खण्ड ।

तर्कवाद ।

॥ ओ३म् ॥

वृक्ष में जीव है।

पहला अध्याय।

कुछ आरम्भिक बातें।

१—पहला अनुवाक।

'वृक्ष में जीव है या नहीं,' इस प्रश्न पर हम दो कार से विचार करेंगे—एक तो युक्तियों और तर्कों द्वारा, दूसरे ास्त्रीय प्रमाणों द्वारा। हम प्रथम खण्ड में तर्कों को ही स्तुत करना चाहते हैं, क्योंकि आजकल लोगों की प्रवृत्ति र्कप्रधान हो रही है। दूसरे खण्ड में हम वेदादि के प्रमाणों ो दर्शायेंगे। और तीसरे खण्ड में विपक्षियों के आक्षेपों के तर सुनायेंगे। फिर चौथे या अन्तिम खण्ड में यह विचार ाठकों की सेवा में प्रस्तुत करेंगे कि अगर वृक्ष में जीव का ोना सिद्ध है तो क्या हम मनुष्यों को उनके फल, फूल, डाली,

पत्तों आदि खाने से हिंसा का पाप लगता है या नहीं ?

अच्छा, अब हम प्रथम " तर्कवाद " खण्ड में युक्तियां प्रकट करनी चाहिये कि किन दलीलों से यह हो सकता है कि वृक्ष में जीव विद्यमान है ? हम यहां वनस्पति-विद्या (बोटानी Botany) की कुछ स्कूली पु में से यथोचित युक्तियां दर्शायेंगे । कृषि-विद्या तथा कई विज्ञान-वेत्ताओं की पुस्तकों से अनेक सिद्धान्तों को प्रस्तुत गे और बड़े रोचक, मनोहर और आश्चर्यदायक शब्दों महात्मा, डाक्टर, सर जगदीशचन्द्र बसु महाराज के का भी संक्षेप में वर्णन कर देंगे। निदान युक्तियों की तक सम्भावना है, पाठकगण इस प्रथम खण्ड में उनकी न पायेंगे । और हम दावे के साथ कह सकते हैं कि क्षियों को भी अगर वे पक्षपात छोड़कर हमारी बातों पर देंगे, तो अपना मत परिवर्तन कर देना पड़ेगा ।

दूसरा अनुवाक ।

—:o:—

हमारा साध्य विषय यह है कि " वृक्ष में जीव है इस से हमारा अभिप्राय अभिमानी जीव का है । हम लोग आवागमन-सिद्धान्त के मानने वाले ऐसा

वते हैं कि हम मनुष्यों के जीवात्मायें अपने कर्मानुसार
भी पशु, पक्षी के शरीर पाते हैं, तो कभी वृक्ष की भी
नि में चले जाते हैं। अतः ज्ञात रहे कि हम एक वृक्ष
जड़ से फुनगी तक में उसका एक जीवात्मा मानते हैं।
से मानुष-शरीर में एक अभिमानी जीवात्मा इसका मालिक,
भु या राजा बना बैठा है। जो वृक्षों में अनेकों जीव
न्तु घर बना कर जा बैठते हैं, या सड़े फलों में जा
ड़े पड़ जाते हैं, या गूलर के फल में जो सैकड़ों मच्छड़
वद्यमान रहते हैं, उन से हमारे विषय का कुछ सरोकार
हीं है। वे वहां वैसे ही निवास करते हैं जैसे हमारे
रीर में भी अनेक कीड़े पड़े रहते हैं। खास कर फोड़े आदि
सैकड़ों कीड़े पड़े हुए प्रत्यक्ष दीखते हैं। और जो अनु-
ायी जीव कहलाते हैं उन से भी हमारा कोई सरोकार
हीं है। पाठकगण उनका हाल तीसरे खण्ड के अध्याय—
"बीज में अनुशयी जीव"—में पढ़ेंगे।

निदान् जिस प्रकार हम अपने मानुषी शरीर के मालिक
जीवात्मा हैं उसी प्रकार वृक्ष के अन्दर एक जीवात्मा उस
गारे शरीर का मालिक बना बैठा रहता है, जो उसे जिंदा
(हरा भरा) बनाये रखता है। इसी मन्तव्य की पुष्टि
हम इस प्रथम खण्ड में वैज्ञानिक युक्तियों से और दूसरे
तीसरे खण्डों में वेदादि के प्रमाणों से करेंगे।

पक्षी आदि खाने से हिंसा का पाप लगता है या नहीं ?

अच्छा, अब इस प्रथम " तर्कवाद " खण्ड में हमें युक्तियां प्रकट करनी चाहिये कि किन दलीलों से यह साबित हो सकता है कि वृक्ष में जीव विद्यमान है ? हम यहां पर वनस्पति-विद्या (बोटानी Botany) की कुछ स्कूली पुस्तकों में से यथोचित युक्तियां दर्शायेंगे । कृषि-विद्या तथा कई अंगरेज विज्ञान-वेत्ताओं की पुस्तकों से अनेक विचारों को प्रस्तुत करेंगे और बड़े रोचक, मनोहर और आश्चर्यदायक शब्दों में महात्मा, डाक्टर, सर जगदीशचन्द्र वसु महाराज के अन्वेषणों का भी संक्षेप में वर्णन कर देंगे। निदान् युक्तियों की जहां तक सम्भावना है, पाठकगण इस प्रथम खण्ड में उनकी त्रुटि न पायेंगे । और हम दावे के साथ कह सकते हैं कि विपक्षियों को भी अगर वे पक्षपात छोड़कर हमारी बातों पर कान देंगे, तो अपना मत परिवर्तन कर देना पड़ेगा ।

दूसरा अनुवाक ।

—:o:—

हमारा साध्य विषय यह है कि " वृक्ष में जीव है " । इस से हमारा अभिप्राय अभिमानी जीव का है। अर्थात् हम लोग आवागमन-सिद्धान्त के माननेवाले ऐसा निश्चय

रखते हैं कि हम मनुष्यों के जीवात्मायें अपने कर्मानुसार कभी पशु, पत्ती के शरीर पाते हैं, तो कभी वृक्ष की भी योनि में चले जाते हैं। अतः ज्ञात रहे कि हम एक वृक्ष में जड़ से फुनगी तक में उसका एक जीवात्मा मानते हैं। जैसे मानुष-शरीर में एक अभिमानी जीवात्मा इसका मालिक, प्रभु या राजा बना बैठा है। जो वृक्षों में अनेकों जीव जन्तु घर बना कर आ बैठते हैं, या सड़े फल में जा कीड़े पड़ जाते हैं, या गूलर के फल में जो सैकड़ों मच्छड़ विद्यमान रहते हैं, उन से हमारे विषय का कुछ सरोकार नहीं है। वे वहां वैसे ही निवास करते हैं जैसे हमारे शरीर में भी अनेक कीड़े पड़े रहते हैं। खास कर फोड़े आदि में सैकड़ों कीड़े पड़े हुए प्रत्यक्ष दीखते हैं। और जो अनुशयी जीव कहलाते हैं उन से भी हमारा कोई सरोकार नहीं है। पाठकगण उनका हाल तीसरे खण्ड के अध्याय— "बीज में अनुशयी जीव"—में पढ़ेंगे।

निदान् जिस प्रकार हम अपने मानुषी शरीर के मालिक जीवात्मा हैं उसी प्रकार वृक्ष के अन्दर एक जीवात्मा उस सारे शरीर का मालिक बना बैठा रहता है, जो उसे जिंदा (हरा भरा) बनाये रखता है। इसी मन्तव्य की पुष्टि हम इस प्रथम खण्ड में वैज्ञानिक युक्तियों से और दूसरे तीसरे खण्डों में वेदादि के प्रमाणों से करेंगे।

तीसरा अनुवाक।

यद्यपि हम इस प्रथम खण्ड में वैज्ञानिक (ख़ासकर पाश्चात्य विज्ञान) की युक्तियों को प्रस्तुत करेंगे, परन्तु यह बात स्मरण रखने योग्य है कि जीवात्मा की परिभाषा में हमारे शास्त्रों और पाश्चात्य वैज्ञानिकों का भारी मत-भेद है। जहां हम एक शरीर (मनुष्य, पशु या वृक्ष) में एक जीवात्मा को उस सारे शरीर का "अभि-मानी"—मालिक, प्रभु या राजा मानते हैं, वहां वे शरीर में रुधिर के एक एक बूंद को सैकड़ों जीवात्माओं का समूह मान रहे हैं।* अतः वे लोग वृक्षों के भी पत्ती पत्ती में जीवों का होना (और शायद एक २ पत्ती को जीवों का समूह) मानते हैं। इसलिए पाठकगण कहीं भ्रम में न पड़ जायं, क्योंकि हम उन वैज्ञानिकों की सारी बातों को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं हैं। हमारा अभिप्राय इन वैज्ञानिक युक्तियों को उपस्थित करने से केवल यह दर्शाने का है कि प्राचीन ऋषियों का सिद्धान्त

* सूक्ष्म-दर्शक यन्त्र Mycroscope से हमने भी रुधिर के उन रेंगनेवाले व्यक्तियों को देखा है जिन्हें वे पाश्चात्य डाक्टर लोग "जीव" मान बैठे हैं।

वृक्ष के जीवधारी होने का ऐसा अकाट्य और यथार्थ है कि आधुनिक विज्ञान ने भी उसके आगे सिर झुका दिया है।

प्रश्न—अगर विज्ञान का यह निर्णय 'कि शरीर सहस्रों जीवों का एक समूह है' युक्तियों से ठीक सिद्ध हो रहा है, तो आप को उसे स्वीकार करने में क्यों एतराज है?

उत्तर—इस प्रश्न पर वाद विवाद करना हमारे इस पुस्तक का उद्देश्य नहीं है। "शरीर अनेको जीवों का समूह है" यह विज्ञान का निर्णय कहां तक सत्य है, इस पर तत्वज्ञानी (फ़िलासफ़र) लोग विचार करेंगे। हमें तो इस पुस्तक में केवल यह दर्शाना है कि मनुष्य या पशु पक्षी की सादृश्यता वृक्ष भी रखते हैं। शास्त्रों ने जहाँ मानुषी-शरीर का एक अभिमानी जीवात्मा माना है, वहां वृक्ष-शरीर का भी एक अभिमानी जीव माना है। और विज्ञान जहां मानुषीशरीर के एक एक बूँद को अनेक जीवों का समूह मानता है, वहां वृक्ष के भी एक एक पत्ते को सैकड़ों जीवों से भरा हुआ मान रहा है। ऐसी दशा में यह विषय निर्विवाद है। अर्थात् जिन्हें विज्ञान का निर्णय प्रिय* हो, वे वैसा ही मान लें और सब

* मुझे या मुझ जैसे शास्त्रीय प्रमाणों को प्रामाणिक माननेवालों को [illegible] प्रिय हो नहीं सकता।

मानना होगा कि मानुषी शरीर लाखों जीवों का समूह है।
इसी प्रकार वृक्ष-शरीर भी करोड़ों जीवों से तैयार हो सक
है। परन्तु हमारे साथी महाशयगण (वेदों, शास्त्रों, पुरा
आदि को माननेवाले) का मन्तव्य यों होगा कि वि
प्रकार हम एक जीवात्मा इस मानुषी शरीर में बैठे
इसी प्रकार वृक्ष-शरीर में भी एक जीवात्मा बैठा है।

प्रश्न—आप जब कि विज्ञान के निर्णय को पूरा
नहीं मानते तो आप का क्या हक़ है कि उसकी यु
का यहां उल्लेख करने लगे हैं ?

उत्तर—विज्ञान की जितनी बातें हमारे शास्त्रों के
एकता रखती हैं, उन्हें प्रकट करना इसलिए उचि
आवश्यक है कि तर्कवाद के प्रेमियों पर हम यह
डालना चाहते हैं कि उन के तर्क और युक्ति भ
पक्ष के पोषक ही हैं।

प्रश्न—परन्तु विज्ञान की यह बात कि रुधि
एक बूंद जीवों से भरा पड़ा है, आप लोगों को
नहीं है ? क्या युक्ति, अक़ली दलील और प्रत्य
जो बातें सिद्ध हों उनसे भी इनकार कर देना बुद्धिम

उत्तर—विज्ञान की उक्त बात को संसार के
ओं ने अभी तक तसलीम नहीं किया है।
हैं उन्हें हम जीवात्मा नहीं

क्योंकि "जीवात्मा" के लक्षण और परिभाषा उन पर नहीं घटते। वे वैज्ञानिक तो खून की हरारत को ही जीव मानते हैं, अतः उनके मत में शरीर के साथ साथ जीव भी मर जाता है; परन्तु हम लोग (समस्त हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, पारसी, बौद्ध, जैनी*) शरीरान्त पर जीवात्मा का अमर बना रहना मान रहे हैं। हमारे इस मन्तव्य की पुष्टि में युक्तियों की बड़ी भरमार दर्शनों आदि में पाई जाती है। परन्तु हमारे इस पुस्तक का वह विषय नहीं है इस कारण इस विषयान्तर को यहीं समाप्त करते हैं।†

चौथा अनुवाक।

—:o:—

"वृक्ष"—पौधों की कई किस्मों में से एक है, परन्तु इस पुस्तक के नाम में "वृक्ष" शब्द से हमारा अभिप्राय समस्त प्रकार के नबातात (Vegetable kingdom) से है।

---

* इन मत वालों की पुस्तकों का यही निर्णय है, किन्तु अगर कोई ऐसा न मानता होगा तो वह उसकी व्यक्तिगत मति मानी जायगी।

† आगे तीसरे खण्ड (आक्षेपों के उत्तर) में अध्यायों—"वृक्ष में अभिमानी जीव है" और "बीज में अनुशयी जीव है"—में इस विषय पर अधिक प्रकाश डाला जायगा।

उन क़िस्मों की सूची मनुस्मृति में अङ्कित है; अतः हम यहां उन श्लोकों को उद्धृत करना उचित समझते हैं :—

१—उद्भिज्जाः स्थावराः सर्वे, बीज काण्ड प्ररोहिणः ।
ओषध्यः फल पाकान्ता, बहु पुष्प फलोपगाः ॥४०॥
२—अपुष्पाः फलवन्तो ये, ते वनस्पतयः स्मृताः ।
पुष्पिणः फलिनश्चैव वृक्षास्तू भयतःस्मृताः ॥४७॥
३—गुच्छं गुल्मं तु विविधं, तथैव तृण जातयः ।
बीज काण्ड रुहाण्येव प्रताना बल्ल्य एव च ॥४८॥

(मनु॰ अ॰ १ श्लोक ४६—८)

अर्थ—इन तीन श्लोकों में पौधों के अनेक प्रकार बतलाये गये हैं जिन्हें हम एक चक्र में नीचे प्रकट किये देते हैं :—

१—ओषधि	...	जो फल देने पर सूख कर मर जायं जैसे—गेहूं, जौ, चना, धान आदि सारे अनाज ।
२—बीजकाण्ड प्ररोहिणः		जिन के कलम लगाने से लग जाय जैसे—गुलाब, गेंदा, बेला आदि ।
३—वनस्पति	...	जिन में फूल न हों, पर फल लग जायं जैसे—गूलर ।
४—वृक्ष	...	जिन में फूल फल दोनों उपजें—जैसे आम, जामुन आदि ।
५—गुच्छ	...	गुच्छेदार जिन में शाखा आदि न हों

और जो जड़ से ही अनेक भाग में उपजें—जैसे घीकुंवार इत्यादि ।

ल्म ... जिनमें न फूल हों न फल, जैसे—गन्ना (ईख), बेंत, सरकन्डा आदि ।

ण ... जो आप ही आप बिना बीज बोये उपजें—अर्थात् घास इत्यादि ।

ल्ली ... जो दूसरों के सहारे फैलें, इन्हें लता या बेल कहा जाता है, जैसे—गुरिच, इश्क-पेंचा, अंगूर, सोमलता इत्यादि ।

तताना ... वे लतायें जिन में सूत जैसा निकलता है, जैसे—कद्दू, खीरा, खरबूजा इत्यादि ।

पहला अध्याय।

पौधों की किस्में।

प्रथम अनुवाक।

—:०:—

कई प्रकार के ऐसे पौधे देखे जाते हैं जो अपने
जीवन के प्रत्यक्ष प्रमाण दे देते हैं। उनमें से कुछ
का हाल यहां प्रकट किया जाता है :—

(क) सूर्यमुखी।

यह पौधा बहुत विख्यात है। सभों ने देखा होगा
मुखी का पौधा प्रातःकाल में पूरब की ओर झुका
उसके पत्ते इस प्रकार घूम जाते हैं कि प्रत्येक प
की किरणें पूर्ण रूप से पड़ सकें। कोई पत्ता ऊपर
बैठ जाता है, कोई दाहिनी ओर, और कोई बाईं
जाता है; जिसमें सब के सब सूर्य की किरणों
से आलिङ्गन कर सकें।

फिर सायंकाल में ऐसा जान पड़ेगा कि
पौधे की पत्तियां पश्चिम की ओर झुक गई
बातें प्रकट करती हैं कि सूर्यमुखी पौधे में ज

सूर्यमुखी को अँगरेज़ी (लेटिन) में "हीलियो ट्रोपिज़म" (Helio tropism) कहा जाता है।

(ख) कमल।

कमल के बारे में भी यह विख्यात है कि प्रातःकाल सूर्य के उदय होने पर उसका फूल खिलता है और सूर्यास्त पर बन्द हो जाता है।

(ग) बिच्छू पौधा।

यह एक छोटा पौधा है जिसको पत्ती छू लेने से ऐसा कष्ट प्रतीत होता है जैसे बिच्छू के डङ्क मारने पर। हमने स्वयं भी पूर्वीय अफ्रीका देश में देखा और छूकर कष्ट भी सहन किया था, और स्वामी सत्यदेवजी ने मेरी कैलाश यात्रा के पृष्ठ ३५ पर इसका यों वर्णन किया है —

"...... एक प्रकार के वन्य पौधे के पत्तों से मेरी टाँगें छू गईं। मानों बिच्छू काट गया, बड़ी जलन होने लगी। यह बिच्छी घास कहलाती है। पहाड़ों में यह बहुत होती है। सूखने पर इसके रेशों की रस्सियां बनाई जाती हैं। हरी हरी पत्तियों का शाक भी लोग खाते हैं।"

इससे पता लगता है कि इस पौधे में तीक्ष्ण स्पर्श इन्द्रिय मौजूद है जो किसी का छूना पसन्द नहीं करता, अतः यह नदन जीवधारी ही के हो सकते हैं।

(घ) प्रार्थना करने वाला पेड़।

आर्यमित्र आगरा ता० ३१ मई १९१७ ई० के अङ्क में पृष्ठ ४, कालम ३ पर यों छपा है—

"विचित्र पौधा

फ़रीदपुर जिले में एक अद्भुत पेड़ है जो सवेरे तो खड़ा रहता है पर संध्या होते ही लेट जाता है । इस का नाम महात्मा जगदीशचन्द्र जी ने (Praying plant) प्रार्थना करने वाला पेड़ रख दिया है ।"

क्या बिना जीवात्मा की सत्ता के कभी ऐसा हो सकता है ?

(ङ) बार्बेरी पौधा।

इस (Barberry) बार्बेरी पौधे की पत्तियां खूब नोकदार होती हैं और उनमें गति (Movement) का वर्णन आया है

दूसरा अनुवाक।

लाजवन्ती।

पाठकों ने लाजवन्ती या छुई मुई का छोटा पौधा देखा होगा । इस को अंगरेज़ी में Mimosa कहते हैं

इस में बड़ी विचित्रता यह पाई जाती है कि इसको अगर हम छू दें या फूंक मार दें तो वह अपनी पत्तियों को सिकोड़ लेगा। ऐसा वह क्यों करता है ? शत्रुओं से अपनी रक्षा करने के लिए । पशुओं में कछुआ को आपने देखा होगा कि वह जरा भी भय प्रतीत होते ही अपना सिर झट सिकोड़ कर अन्दर कर लेता है । उस वक्त उसकी पीठ मात्र दीखती है जो इतनी मजबूत होती है कि कोई शस्त्र उसे नहीं काट सकता । इसी कारण युद्धवाले उसी की ढाल बनवाने लगे हैं। निदान् जैसे कछुआ अपने अङ्गों को सिकोड़ कर शत्रु के भय से अपनी रक्षा करता है , उसी प्रकार यह लाजवन्ती भी अपने अङ्गों (पत्तियों) को सिकोड़ लेती है ।

वृक्ष-सम्बन्धी जांच पड़ताल करनेवालों के लिए यह पौधा बहुत ही उपयोगी सिद्ध हो रहा है, क्योंकि इस बात पर सहजतया परीक्षायें हो सकती हैं। इसका आगे चलकर विस्तार से वर्णन आवेगा ।

तीसरा अनुवाक।

सब से ऊंचा पेड़।

वन्देमातरम् (उर्दू) लाहौर ता० ७ जनवरी १९२३ ई०
अङ्क में पृष्ठ ८ पर "दुनिया में सब से ऊंचे और मोटे
त "—शीर्षक लेख छपा है। इसमें कहा गया है:—
"कोलम्बिया (अमेरिका) में मेरीशोज़ नाम का एक
न है। यह सान्फ्राँसिस्को शहर से २०० मील पर है।
हां एक प्रकार का वृक्ष बहुत ऊंचा होता है जो चौ
सा प्रतीत होता है। इसकी ऊंचाई ३०० तीन सौ फी
और चौड़ाई यानी तनों का लपेट ९० फ़ीट है
ऊंचाई में वह मानों हमारे कुतुबमीनार दिल्ली की बराबरी
कर रहा है। आंधी से गिरे हुये एक ऐसे वृक्ष के तने
से एक सुरंग बना दी गई है क्योंकि वह अन्दर से पोल
रहता है। इस सुरंग से (जो ९० फ़ीट के घेरे के पो
वाला है) एक घोड़ा सवार बड़ी आसानी से च
जा सकता है।" इत्यादि बड़ी अद्भुत महिमा इस
की लिखी है। ३०० फ़ीट की ऊंचाई तक जड़ से
द्रव्यों का पहुंचाया जा कर हरा भरा बनाए रखना
बिना जीवात्मा की सत्ता के कभी होना सम्भव है?

चौथा अनुवाक ।

—:o:—

तार का पौधा ।

महात्मा जगदीश चन्द्र महाराज अपनी पुस्तक "प्लान्ट रिस्पान्स" (Plant response) में पृष्ठ ४ पर कहते हैं :—

"नसों की गति या नाड़ियों के चलती रहने के अनेक दृष्टान्त हम पौधों में पाते हैं । एक पौधा बहुत स्पष्ट निर्णय कर देता है जिसका नाम डेस्मोडियम ग्राइरोन्स या तार का पौधा (Desmodium Gyrans or Telegraph plant) है । यह पौधा गङ्गा किनारे के जङ्गलों में उगता है जहां इसका देशी नाम "बोन चरल है" अर्थात् जङ्गल से पृथक किया हुआ । इस पौधे के पास अगर ताली बजाई जाय तो इसकी पत्तियां नाचने लगती हैं । यह तेवली के जैसा तीन पत्तियों वाला पौधा है । जिन में से अन्तिम तीसरी पत्ती बड़ी होती है, किन्तु दूसरी दोनों किनारोंवाली पत्तियां बहुत छोटी होती हैं ।

प्रोफेसर फ्रान्स भी इस पौधे का वर्णन अपनी पुस्तक "Germs of mind in plants." पौधों की मानसिक दशा में करते हैं । उनका कथन है कि महाभारत

और अलिफलैला (अर्बी पुस्तक सहस्र रजनी चरित्र) में भी इस पौधे का वर्णन आया है। इस पौधे की तीन पत्तियों में से दो (किनारे वाली) छोटी पत्तियां सदा अपनी Normal (आरोग्यता की ठीक) दशा में बराबर हिलती रहा करती हैं—अतः पौधे की ऊंची नीची गति को प्रकट कर देती हैं जिसमें दो से चार मिनट तक लग जाते हैं।

इस पौधे की पत्तियों के नोक से हम उसके नाड़ी की गति का पता पाते हैं, जो प्रत्यक्ष पशुओं (या मनुष्यों) के हृदय के सञ्चालन के ही सदृश है।

तीसरा अध्याय।

—:०:—

मांसाहारी पौधों की क़िस्में।

पहला अनुवाक।

कइ वृक्ष या छोटे पौधे मांस खानेवाले पाये गये हैं, उनके नाम सुनिये —

(क) कालो पहाड़ (मांसाहारी)।

स्वामी फतेहराम जी स्थान नीमाज़ा (सोमेश्वर रेल स्टेशन) जोधपुर राज्य ने हमें बतलाया कि मारवाड़ देश में एक पौधा ऐसा "काली पहाड़" नाम का होता है जिस में यह गुण है कि छोटी छोटी मक्खियां और मच्छड़ इत्यादि जो उसके नीचे चली जाती हैं वे फिर वापस नहीं आ सकतीं, बस वहां ही उनकी मौत हो जाती है। अतः इसे मांसाहारी पौधा मानना चाहिये।

क्या यह क्रिया बिना जीवात्मा के कभी सम्भव है?

(ख) तैरनेवाले हिंसक पौधे।

प्रोफ़ेसर फ़्रॉम अपनी पुस्तक (Germs of mind in Plants) "पौधों की मानसिक दशा" में यों वर्णन कर रहे हैं:—

"प्रायः सरोवरों आदि में एक प्रकार के तैरनेवाले पौधे
जाते हैं। इनकी जड़ें धरती में जमी हुई नहीं रहतीं,
एक इधर उधर तैरती रहा करती हैं। और हवा के
हाथ से इधर उधर झोंकों के साथ बहती रहती हैं।
इस पौधे पर अनेक पानी के जीव जन्तु यथा जल-पिस्सू,
स्कीपर Skipper और मच्छड़ आदि मंडराते रहते हैं।
परन्तु वे जब इस पौधे के बालों द्वारा जकड़ लिये जाते
हैं, तो कदापि छूट नहीं सकते, और उनका भक्षण कर
डाला जाता है।

(ग) मक्खी पकड़नेवाला पौधा।

अमेरिका में यह (Fly trap) पौधा होता है
मक्खियां इस के पत्तों पर बैठें तो बस उनकी मौत
गई समझो। इसका विशेष वृत्तान्त आगे १४ वें अध्याय
के ४ थे अनुवाक में पढ़िये।

(घ) सन्डिघ शिकारी पौधा।

यह Sun Dew याने "सूर्य का ओस" नामी पौधा
मच्छड़, मक्खी आदि को, जो उसका ओस चाटने के लिए
उस पर आ बैठती हैं, अपना शिकार बना लेता है। यह जर्मनी
देश में उपजता है जहां इसका देशी नाम Drose rarotum
defolia है।

(इसका विवरण १४ वें अध्याय के दूसरे अनुवाक में पढ़िये)।

(ङ) प्रोटिस्टा पौधा।

इस पौधे का आहार रक्त व मांस है। यदि इन को रक्त चूसने और मांस खाने को न मिले तो ये सूख कर मुरझा जायें अर्थात मर जायंगे।

इन प्रोटिस्टाओं के समीप जब कोई पक्षी पहुंचता है, या छोटा जानवर आता है तो इनकी शाखायें हिलने लगती हैं और पशु पक्षी इनकी ओर स्वयं खिंच जाते हैं। इनका मुंह खुल जाता है और वे अपनी शाखाओं से उसे पकड़ कर उसका सम्पूर्ण रक्त और मांस निचोड़ लेते हैं। केवल हड्डियां पृथ्वी पर गिर पड़ती हैं।

क्या ये बातें बिना जीव के हो सकती हैं?

दूसरा अनुवाक।

लड़की खाने वाला पेड़।

आर्य गजट ता० १४ दिसम्बर १९२२ ई० के अङ्क में श्रीयुत पण्डित सन्तरामजी बी० ए० का एक लेख "लड़कियां

मानेशाना राम्न " छपा है। इसमें मडेगास्कर द्वीप के उक्त वृक्ष का हाल लिखा गया है। हमारे पण्डित सम्प्रदाय भी बतलाते हैं कि उस देश के बाशिन्दे खास खास अवसरों पर इस वृक्ष रूपी देवता को एक क्वांरी कन्या की भेंट चढ़ाया करते हैं। उनके लेख को हम यहाँ उद्धृत करते हैं :—

"यह वृक्ष १० फीट ऊँचा होता है और इसमें इतनी ताक़त है कि यह आदमी को अपने जाल की झफरी में फँसा कर उसका काम तमाम कर सकता है। मौत के इस दरख्त की शकल बड़ी ही अनोखी है। इसका तना (पेड़) लगभग १० फीट ऊँचा होता है। तने की शकल पेड़े की सी होती है। इसकी छाल पर अजीब चित्रकारी की हुई होती है। जिससे यह एक बड़ा भारी अननास सा मालूम होता है। इस के तने के ऊपर एक बहुत बड़ा थाल सा लगा रहता है। तने की चोटी से जमीन तक आठ पत्ते लटके रहते हैं, उनकी लम्बाई दस बारह फुट होती है। निकलने की जगह उनकी चौड़ाई एक फीट से दो तक हो जाती है आखिर में सूंड की तरह जाकर उनकी नोक सुई की तरह तेज हो जाती है। इन पत्तों पर बड़े बड़े जहरीले कांटे बहुत अधिक संख्या में निकले रहते हैं। उनकी मोटाई बीच में १५ इञ्च से कम नहीं होती। उनकी नोकें बड़ी

को छुये रहती हैं। तने पर के थाल के नीचे से कोई आधे दरजन सूत, आगे रहते हैं। ये देखने में बहुत कमज़ोर मालूम पड़ते हैं। इनके सिर ऊपर की ओर उठे रहते हैं। ऐसा मालूम होता है कि तने की चोटी पर के उस थाल में से गाढ़ा और मीठा रस कुछ निकलता रहता है। यह रस शायद पक्षियों को लुभाने के लिए पैदा होता है। इस में तेज़ नशा रहता है, यहाँ तक कि थोड़ा सा चखनेवाला उसी समय बेहोश हो जाता है।

जर्मनी के एक यात्री का आँखों देखा हाल इस प्रकार है :—

"इस टापू में एक जंगली जाति रहती है। वह वृक्ष रक्त को पूजती है और इस पर अपनी क्वांरी लड़कियों का बलिदान देती है। इस बलिप्रदान का तरीक़ा बड़ा ख़ौफ़नाक होता है। अर्थात् उस लड़की को इस वृक्ष पर चढ़ने और उस का रस पीने पर विवश किया जाता है। ... ...मुझे मालूम नहीं था कि दरख़्त लड़की को ऊपर से कूद पड़ने से कैसे रोकता है। परन्तु, आखिर मुझे इस का भी पता लग गया। ... ...मैंने उस लड़की को देखा जिस की बलि होने वाली थी। उस के चेहरे से ख़ौफ़ के निशानात साफ़ दिखलाई देते थे। उस के जातिवाले नाचते, कूदते, शराब पीते और ख़ुशी मनाते रहे। अन्त में वे

इस बद क़िसमत लड़की पर झपट पड़े। उन्हों ने इसे घेर लिया और इशारों से तथा चिल्ला चिल्ला कर दरख़्त पर चढ़ जाने की आज्ञा देने लगे।

परन्तु वह बेचारी डर कर पीछे हट गई, और दया के लिए प्रार्थना करने लगी। इस पर वे लोग क्रूरता के साथ उसे डराने धमकाने लगे। और आज्ञा मानने पर विवश किया, मगर लड़की ने न माना और बचने की कोशिश की। इस पर वे हाथों में भाले लेकर उसको उस मौत के वृक्ष की ओर हांकने लगे।

अखीरकार सब तरह से हार कर वह बेचारी उस वृक्ष के पास चली गई। थोड़ी देर वह चुप चाप खड़ी रही, फिर दिल की सारी ताक़त को जमा करके एक दम दरख़्त की तरफ़ उछली और हांथों के सहारे ऊपर चढ़ गई और ऊपर चढ़ कर उसने उस रस को पी लिया।

एक बार वह फिर ऊपर को उछली। मुझे आशा थी कि वह नीचे कूद पड़ेगी क्योंकि मैं समझता था कि काम समाप्त हो चुका है। इस धुंधली रोशनी में मैं यह न देख सका कि उसके चिल्लाने का क्या कारण था। वहां जो कार्य हो रहा था, मैं अचानक इसे समझ गया, अर्थात जो वृक्ष एक मिनट पूर्व गुप चुप सुन्न जैसा मालूम होता

ा, वह जी उठा। जो सूत कमजोर मालूम पड़ते थे उनका हिलना बन्द हो गया और उन्होंने लड़की के सिर और कन्धों पर कुंडली डाल कर उसे ऐसी मजबूती से जकड़ लिया था कि उनसे छूटने की उसकी सारी कोशिश बे फायदा हुई।

हरी हरी टहनियां जो पहले बहुत कड़ी थीं ऐंठने लगीं। उन्होंने सांपों की तरह चारों ओर कुंडली मार ली। वे बड़े बूड़े पत्ते धीरे धीरे उठने लगे, उनके लम्बे लम्बे खौफ़नाक कांटे अन्दर की ओर हो गये थे। उनकी नोकें लड़की के शरीर में घुस गई और उन्होंने शिकञ्जे की तरह उसको कस लिया।

जिस समय ये एक दूसरे से मिल गये तब उसके तने से गुलाबी रंग का पानी सा टपकने लगा*। इस पर वे सब (बलि देनेवाले) लोग बड़ी खुशी से फिर खाने पीने लगे, उन्होंने समझा कि देवता प्रसन्न होगया।

इस कथा को सुना कर पं० सन्तराम जी लिखते हैं कि इस वृत्तान्त ने वनस्पतिविद्या के विद्वानों में एक बड़ी हलचल उत्पन्न कर दी है, और विद्वानों का समूह जल्दी ही मैडेगास्कर द्वीप को जा कर इस वृक्ष के भेदों को ज्ञात करने की कोशिश करेगा।

---

* अवश्य यह उस लड़की का रुधिर था। (मंगलानन्द)

इस उद्धरण को पढ़ कर कौन समझदार मनुष्य उस हिंसक "मनुष्य-भक्षक" वृक्ष के जीवधारी होने से इनकार कर सकता है ?

चौथा अध्याय ।

पौधा कहें या जन्तु ?

पहला अनुवाक ।

कुछ ऐसे पौधे हैं जिनके बारे में अभी तक यह निश्चय नहीं हुआ कि इन्हें जीव जन्तु, कीड़े मकोड़ों की श्रेणी में रक्खा जाय या वृक्षों में। पुस्तक (The animal World) "पाशविक जगत" में प्रोफ़ेसर गेम्बल (F.W. Gamble) साहब कहते हैं :—

"अनेकों पशु-शरीर-विद्या (Zoology) की पुस्तकों में यह वर्णन आया है कि ऐसे अनेक पदार्थ हैं जो जन्तु भी ज्ञात होते हैं और वनस्पति भी। या दोनों न माने जायं। वे सृष्टि-उत्पत्ति के विकास में धीरे धीरे, उन्नति करते हुये एक खास दरजे तक ही पहुंच पाये हैं। हम उन के कुछ दृष्टांत यहां प्रकट किये देते हैं।

दूसरा अनुवाक ।

वलेसनारिया ।

वलेसनारिया Volesnaria नाम की घास पानी में पैदा होती है । इसे सूक्ष्म वीक्षण यन्त्र (माइक्रासकोप) की सहायता से देखा जाय तो जिस प्रकार प्राणियों के शरीर में खून की धारा बहती है उसी प्रकार इन वनस्पतियों के अन्दर चेतनोत्पादक प्रोटोप्लाज़्म (Protoplasm) की धारा बहती हुई प्रत्यक्ष दिखाई देती है ।

देखो पुस्तक विकासवाद पृष्ठ ३८ ।

२—ट्रेडस्काशिया ।

Tradescantia नाम के पौधे का भी वृत्तान्त उस प्रकार का ही है ।

३—मानेर यमोबा आदि ।

ये कीटाणु नाग बेल, मानेर तथा यमोबा आदि अब तक सन्दिग्ध दशा में हैं । कोई इन्हें कीट कहता है, कोई वनस्पति । पर कट जाने पर इनके दोनों खण्डों का जीवित रहना प्रगट करता है कि ये कीट नहीं किन्तु वनस्पति हैं । क्योंकि वनस्पति में यह गुण पाया जाता है कि वह कटकर दूसरी जगह लगाई जाय और जीवित रहे, परन्तु कोई जन्तु कट-

कर जीता नहीं रहता, इस व्यापक नियम के अनुसार ये कीटाणु नहीं हैं। वे निस्सन्देह वनस्पति हैं।

देखो अक्षरविज्ञान पृष्ठ १९।

४—वाकोल।

यह Vocuole अत्यन्त सूक्ष्म जन्तु भी अन्य साधारण पशुओं की श्रेणी में रक्खा जा सकता है, यद्यपि इसका मिलान अत्यन्त सूक्ष्म पौधों से है।

प्रोटोप्लाज्म (Protoplasm) में एक अत्यन्त छोटा सा स्थान रहता है, जिसे केन्द्र कहना चाहिये। यह बड़ा उपयोगी अवयव है लेकिन वह पशुओं तथा पौधों दोनों में विद्यमान रहता है। इस (प्रोटोप्लाज्म) का दूसरा भाग हरे रंग का होता है जिससे यह पौधा प्रतीत होता है। विशेषतः इस लिये कि इसके बीच में दो आंखों के पलकों के चिन्ह मिलते हैं। अतः उनमें भूरे या पीले रंग की आखें (Eye spots) भी मौजूद हैं।

निदान इसकी गणना भी पौधों और पशुओं दोनों में की जा रही है।

५—अनिमोनिस।

यह (Anomones) एक जंगली फल समुद्री तट पर होता है। इसको लोग पौधा मानते थे, परन्तु पेरिस की

विज्ञान-समिति (Academy of science) में प्रोफ़ेसर रयूमर Reaumur ने यह सिद्ध कर दिया कि वह पौधा नहीं बल्कि पशु श्रेणी में है। वस्तुतः यह इतना अधिक पौधों के गुणों से मिलता जुलता सा है कि कोई भेद वृक्ष से इसमें नहीं जान पड़ता। प्रो० फ़ान्स पुस्तक (Germs of mind in plants) "पौधों की मानसिक दशा" के पृष्ठ २१ पर कहते हैं:—

"सहस्रों प्रकार के जन्तु सरोवरों, पर्वतों में तथा समुद्र की तहों में ऐसे ऐसे भरे पड़े हैं, जो रेंगते हैं, नाचते हैं, चक्कर लगाते हैं, या पानी में तीर के सदृश तन जाया करते हैं। परन्तु इतने पर भी विज्ञानवेत्तागण उन्हें "पौधा" ही नाम दे रहे हैं।" अवश्यही इससे वृक्ष का जीवधारी होना सिद्ध है।

६—प्रोटिस्टा पौधा।

आर्य मित्र ता० १७ मई १९१७ ई० में श्री म० रामलाल साह जी नैनीनिवासी का एक लेख निम्न प्रकार छपा था:—

"... ... इस बात को हैकल साहब ने सूक्ष्मदर्शक यन्त्र द्वारा सिद्ध कर दिया है कि इस पृथ्वी में बहुत ऐसे जीव हैं जिनको हम न जानवर ही कह सकते हैं न वनस्पति।

दुनिया के कई भागों में अनेक प्रकार के ऐसे वृक्ष पाये जाते हैं जिनकी गणना पशुओं में है न वृक्षों में। इनको अंगरेज़ी में Protista प्रोटिस्टा अर्थात जानवर व

वनस्पति के अन्य के जीव कहते हैं। ये अद्भुत प्राणी वृक्ष के आकार में हैं।"

७—नाग बेल।

इसे अमर बौरिया या अमर बेल भी कहते हैं। अंगरेजी में इसका नाम Roots king plant है। यह पेड़ों के ऊपर ऊपर लपटी रहती है। यह अपनी जड़ भूमि में नहीं रखती, किन्तु अन्य वृक्षों के ऊपर २ ही सर्प की भांति रेंगती रहती है। यह जिस पेड़ का आधार रखती है उसी को खाकर स्वयं बढ़ती है। टूटजाने पर टूटा हुआ टुकड़ा अलग एक लता बन कर अपना विस्तार करने लगता है।

यद्यपि यह वनस्पति सर्प आदि जन्तुओं से बहुत कुछ मिलता है, और इसे "नाग बेल" कहते भी हैं; पर वनस्पति के गुण इसमें आधे से अधिक पाये जाते हैं, इसलिए इसे वनस्पति ही कहते हैं।

यह गरमी में उपजता है और शीत काल में फलता फूलता है — यद्यपि अन्य सारे वृक्ष उन दिनों पाला मार जाते और ठिठुरे हुये पड़े रहते हैं। देखो पुस्तक वनस्पति-विज्ञान पृष्ठ १८।

८—बिल्ली बावड़िया।

इस नाम की एक लता मारवाड़ देश में होती है, जो अमर बेल सदृश ही है। अर्थात् इसकी जड़ भूमि में नहीं होती

बल्कि यह घास या छोटे छोटे पौधों के ऊपर फैल जाती है, और उन्हें ही खा कर पुष्ट होती है।

अवश्य ही यह चेतन्यता का लक्षण है।

६—फोसिल पौधा।

मिस्टर स्काट D. H. Scoth कहते हैं:—

"......फोसिल नाम वाले पौधों का हाल बहुत ज्ञात नहीं है, परन्तु ऐतिहासिकों की दृष्टि में इस पौधे का बड़ा मान्य (Importance) है। वे पशुओं के सदृश ही प्रायः पाए जा रहे हैं। अगर कुछ बातों में वह पौधा मालूम होता है तो दूसरी बातों के विचार से पशु ज्ञात हो रहा है।

यद्यपि पौधों में पशुओं की हड्डी (skeleton) जैसी कोई वस्तु नहीं होती, तथापि इस "फोसिल" नाम वाले पौधे में वह भी पाया जा रहा है।

पत्तियों और डालियों आदि के होने के सिवाय हम इस फोसिल पौधे में एक बड़ी विचित्र बात यह देखते हैं कि इसके उत्तम प्रकारों में ऐसे नमूने देखे जाते हैं जो पत्थर जैसे जम गये हैं। अर्थात् इनमें खनिज पदार्थ इतना अधिक प्रवेश कर जाता है कि इनके अवशेष भाग को सुरक्षित रख सकता है*।

* [illegible] (अंगलानन्द)।

दूसरा अनुवाक ।

१—मेंढक ।

कई ऐसे जीव जन्तु हैं जिनकी उत्पत्ति वृक्ष सदृश होती है। उन में से एक "मेंढक" है।

मेंढक का मुरदा शरीर पीस कर चूरा पास रख लो फिर जब बरसात की ऋतु आवे तब उस चूरा को पृथ्वी पर छितराय दो जैसे गेहूँ आदि के बीज बोए जाते हैं, तो देखोगे कि मेंढकियां सैकड़ों पैदा हो जायंगी। इस से सिद्ध होगा कि मेंढक जैसे प्रत्यक्ष उछलने कूदनेवाले जीवधारी की उत्पत्ति वृक्ष सदृश ही है, अतः वृक्षों को मेंढकों सदृश जीवधारी मानने में क्यों असमञ्जस है ?

२—बीर बहूटी ।

इसी प्रकार बीर बहूटी का चूरा बोने से भी उसकी उत्पत्ति हो जायगी।

३—केंचुआ ।

इसी प्रकार केंचुवे की भी उत्पत्ति सम्भव है। इस विवरण पुस्तक- अंतरविज्ञान पृष्ठ २१ पर एक टिप्पणी यों दिया हुआ है कि:—

"केंचुये कभी कभी दो टूट के भी देखे ग

है। ये जमीन पर ११-१२ दिन में तैयार होते हैं। १ जमीन ऊंची होती है, २ गोल होती है। ३ कठिन होती है, ४ रँग बदलती है, ५, चमकता है ६ जमीन से लगाव छूट जाता है, ७ वृद्धि होती है, ८ चैतन्यता होती है, ९ गति होती है, १० रेंगने लगता है।"

अब पाठक गण विचार करें कि वृक्षों की भांति भूमि फोड़ कर उत्पन्न होने वाला केंचुवा अगर जीवधारी है तो फिर वृक्षों के जीवधारी होने में क्या सन्देह हो सकता है।

तीसरा अनुवाक।

प्रोफेसर जे० ग्रेट्लन्ड फार्मर साहब अपनी पुस्तक (Plant-Life) वृक्षजीवन के पृष्ठ ९-१० पर यों लिखते हैं कि:—

"हम अन्त में इसी परिणाम पर पहुंचते हैं कि वनस्पति तथा पशु-वर्ग के बीच में कोई भारी भेद नहीं है। बल्कि इन दोनों प्रकार के जीवधारियों में जो समानता दृष्टि गोचर होती है, वह हमें अचम्भे में डाल रही है। जो कुछ भेद भाव है, वह केवल स्थितियों या बाहरी बनावट (Features) में है, और वह इस कारण से है, कि दोनों "आहार" प्राप्ति की प्रक्रियायें भिन्न भिन्न प्रकार की हैं

अगर हम Organic & inorganic अङ्गों वाले और बिना अङ्गों वाले संसार पर दृष्टिपात करें तो ज्ञात होगा कि अब इन की सीमाओं का पूर्व काल से अधिक यथार्थ पता लग गया है। और बहुतेरे कार्यों का जो इन में जीवन और गति इत्यादि को सिद्धकर रहे हैं, अब भली प्रकार जान लिया गया है। यह बात भी मालूम हो गई है कि हरारत या सञ्चालन उन की गति का आधार रूप है। जिन से उन के शरीर की बनावट या पालन पोषण में सहायता मिलती है। और वे Catolytic वर्ग के (बिना अङ्गोंवाले शरीरों के) सदृश भासित होती हैं। जो उन परमाणुओं के सदृश अपने अन्दर रासायनिक परिवर्तन करते हुए शरीर के ह्रास से बचे रहते हैं।

पांचवां अध्याय।

वृक्ष की अन्य जन्तुओं से समानता है।

जो लोग यह कहा करते हैं कि वृक्षों में ज्ञान-इन्द्रियों का अभाव है, इसलिये वे चेतन नहीं माने जा सकते; उन्हें जानना चाहिये कि वृक्ष तो क्या कई जीव जन्तु भी जिनके जीवधारी होने में किसी को कभी शङ्का नहीं हो सकती, सारी ज्ञान-इन्द्रियां नहीं रखते। इस बारे में प्राफ़ेसर गैम्बूल साहब अपनी पुस्तक Animal world (पशु संसार) में यों कथन कर रहे हैं :—

क—परामेशियम।

ये Paramecium या स्लिपर Slipper फिसिलने वाले नाम के अत्यन्त छोटे छोटे जन्तु; जो सूक्ष्म-दर्शक-यन्त्र के बिना नहीं देखे जा सकते, तीन सम्बन्ध या डोरे रखते हैं, जिनकी सहायता से किसी भी सहारे की वस्तु पर लटक रहते हैं; यद्यपि वे उस (सहारे) का तनिक भी ज्ञान नहीं रखते (क्योंकि ज्ञान-इन्द्रियों का उन के शरीर में अभाव है।)

ख—मेडूसा।

इस Medusae या Rhizastoma में केवल एकही प्रकार की गति है—अर्थात् लहराना, हिलना, डोलना। परन्तु वह इस एकही गति से अपने आवश्यकता की सारी बातें पूरी कर लेता है—याने वह पानी पर तैरता रहता है, अपने मुंह में खुराक ले लेता है और अपने अवयवों को हवा खिलाता है (यद्यपि इसमें भी ज्ञाने इन्द्रियों का अभाव है)।

ग—पृथ्वी के कीड़े।

इन Earth worm का यह हाल है कि वे अच्छी तरह जीवन बिताते हैं। इनकी आखें नहीं होतीं, परन्तु प्रकाश और अन्धकार में भेद जान लेते हैं। वे रात्रि के अन्धकार में अपने बिलों में घुस जाते हैं और सूर्योदय होने पर उनमें से बाहर निकल आते हैं। गरमी सरदी का उन पर यथेष्ट प्रभाव पड़ता है। वे गरमी से घबराकर भूमि से बाहर निकल आते हैं और सरदी पड़ने पर वे अपने बिलों के अन्दर चले जाते हैं।

निदान् इन जीव जन्तुओं और पशुओं में यह बात पाई जाती है कि यद्यपि उनमें वाह्य-इन्द्रियां प्रत्यक्ष रूप में नहीं प्रतीत होतीं (तथापि वे जीवन को भली प्रकार जारी रख सकते हैं)।

घ—स्पञ्ज।

इस Sponge स्पञ्ज का हाल यों है कि वह
गति वाला कार्य सम्पादन करता हुआ नहीं देखा जाता

ङ—पोलाइप।

यह Polype याने मूंगे वाला जन्तु केवल अ
जिह्वा को बाहर निकालता है (जिससे कुछ खा सके)

च—हामस्टर।

यह Hamster नाम का जन्तु छः मास तक पड़ा स
ही रहता है।

छ—स्केल।

यह Scale नामी जन्तु बिलकुल टस से मस
नहीं करता।

इन दृष्टान्तों से ज्ञात हो रहा है कि जिन के जीवध
होने में तनिक भी सन्देह नहीं हो सकता, उन पशुओं
भी प्रयत्न की न्यूनता पाई जाती है, तो फिर भला वृ
की तो बातही क्या कही जाय।

छठवां अध्याय।

वृक्ष श्वास लेता है।

पहला अनुवाक।

वृक्ष को हम जीवधारी इस कारण कहते हैं कि जिस प्रकार अन्य जीवधारी लोग (पशु, पक्षी, मनुष्य) वायु का सेवन करते हैं — याने श्वासा अन्दर खींचते हैं और बाहर फेंकते हैं। उसी प्रकार ये वृक्ष भी करते हैं।

अवश्यही जीवधारियों के जीवन का मूल वायु ही है। वे अन्न पानी बिना कई दिनों तक जीवित रह सकते हैं परन्तु हवा के बिना थोड़े मिनटों भी जीवित रहना असम्भव है। ऐसे परम उपयोगी वस्तु की, जैसी हम मनुष्यों को आवश्यकता है, वैसे ही वृक्षों को भी है। अच्छा अब इसका विवरण सुनिये :—

एक स्कूली पुस्तक पदार्थ-विज्ञान विटप (Primer of Physical science) में लिखा है कि :—

हम लोग जो सांस बाहर फेंकते हैं वह अन्दर की मलावत लेकर बाहर आती है। इसका नाम कार्बोनिक ऐसिड

गेस (Carbonic Acid Gas) या प्राण नाशकवायु * है। इसको वृक्ष पी लेते हैं (याने अपने अन्दर खींच लेते हैं) और वह उनको मुफ़ीद (लाभदायक) है, इसी प्रकार वृक्ष में से जो हवा निकलती है वह आक्सिजन (oxygine) अर्थात प्राणप्रद वायु †) है जो हम लोगों के लिये लाभदायक है (अतः मनुष्य उसे अपने अन्दर खींच ले जाया करता है) ।

इससे सिद्ध हुआ कि वृक्ष भी हमारे सदृश श्वासा लेते फिर जब दोनों में समानता है तो यह कैसे हो सकता कि इन दोनों (वायु से श्वासा लेनेवालों) में से तो जीवधारी हो पर दूसरा निर्जीव ?

फिर उसी पुस्तक के पृ० ८० पर देखिये यों लिखा

" यह तत्व (कार्बन) आदमी और जानवरों के के लिये निहायत जरूरी है । लकड़ी जलाने से को निकलता है और गोश्त जलाने से भी कोयला बन जाता है।

यहां भी दोनों की समानता सिद्ध है अर्थात वृक्ष लकड़ी और पशु का मांस दोनों जलने पर "कोयला" बन जाते हैं ।

---

* १ शास्त्रों में इसे अपान वायु कहा गया है ।

† २ ,, ,, प्राण ,, ,,

प्रश्न—अगर इन दोनों के सिवाय अन्य वस्तुएं जैसे कंकड़ पत्थर आदि को भी जला दें तो उनसे भी कोयला ही तो बनेगा ?

उत्तर—लकड़ी और मांस से जो कोयला बनता है वह carbon कार्बन तत्व वाला है, पर अन्यों में यह गुण नहीं है। इस तत्व का वर्णन इसी पुस्तक में इस प्रकार आया है:—

"सब खाने की चीजों में यह (कोयला) रहता है और अगर दुनियां में यह तत्व न होता तो जानवर और दरख्त न होते।"

अब पाठक-गण विचार करें कि जहां इस तत्व के न होने पर जानवर न होते, वहां वृक्ष भी न रह सकते। इस लिये अवश्य ही पशु और वृक्ष समान हैं अतः वृक्ष भी जीवधारी हैं।

हवा पीने में समानता होने के सिवाय प्रकाश या अग्नि तेज को ग्रहण करने में भी इनकी ऐसीही सादृश्यता है। देखिये उसी पुस्तक के पृष्ठ ७६ पर यों लिखा है:—

"जानवरों में से हर वक्त गरमी बाहर निकला करती है और हकीकत में रासायनिक संयोग से वे हर वक्त जला करते हैं पर दरख्त सूरज की गरमी और रोशनी अपने अन्दर ले लेते हैं और उनमें ऐसी चीजें बना करती हैं जो जलें।"

फिर उसी पुस्तक में यों लिखा है :—

"पत्तियों के नीचे की ओर बहुत छोटे छोटे छेद रहा करते हैं, जिन्हें तुम नहीं देख सकते क्योंकि वे अत्यन्त सूक्ष्म हैं। वे छेद उनके मुख सदृश हैं; परन्तु उनके द्वारा खाने का काम नहीं होता। उनसे वे श्वासा भीतर खींच और बाहर फेंकते हैं और अपने अन्दर की ठंडक (या पानी के भाग) Moisture को वे (छेद) Gas गैस (एक प्रकार के भाफ़) के रूप में बाहर निकालते हैं।"

दूसरा अनुवाक।

—:o:—

वृक्ष श्वासा किस प्रकार लेते होंगे ? इस प्रश्न का उत्तर श्रीमती हेमन्त कुमारी देवी जी अपनी पुस्तक "वैज्ञानिक खेती" प्रथम भाग में यों दे रही हैं :—

"वृक्ष सूर्य की रोशनी से कार्बोनिक एसिड गैस लेकर अपनी देह को तन्दुरुस्त करते हैं और आक्सिजन छोड़ते जाते हैं। अंधेरे में वे कार्बोनिक एसिड छोड़ते हैं। श्वास के ज़रिये मनुष्य जिस कार्बोनिक एसिड गैस को छोड़ते हैं, वृक्ष उसे पाकर बलवान होते हैं। वृक्षों के द्वारा छोड़ी हुई आक्सिजन से मनुष्यों की रक्षा होती है। यदि मनुष्यों के साथ वृक्षों का यह सम्बन्ध न रहे तो संसार में प्राणियों का ज़िन्दा बना रहना मुश्किल है।

कार्बोनिक एसिड वृक्षों की एक खास श्वासा है। आग जलाने, जीवों के श्वास लेने और सड़े गले जीव जन्तुओं से कार्बोनिक ऐसिड गैस निकलती रहती है। वायु मण्डल के ३३०० हिस्सों में एक हिस्सा कार्बोनिक ऐसिड गैस है। .....कार्बोनिक ऐसिड गैस से वृक्ष की अंगारक शक्ति पुष्ट होती है।

पौधे, जल और वायु से ये दोनों चीजें अम्लजन, उद्‌जन (Oxygen Hydrogen) अपनी जरूरत के मुताबिक लेते हैं। ये चीजें पौधों के लिये निहायत जरूरी हैं।

शोराजन (Nitrogen) पौधों की एक खास खुराक है। ज़मीन की हवा में यह खूब रहता है। पौधे इसे तीन रीतियों से लेते हैं (१) वायु मण्डल से शोराजन (नाइट्रोजन) की सूरत में और (२) दूसरे एमोनिया की सूरत में और (३) तीसरे मट्टी से नाइट्रिक एसिड की सूरत में .....शोराजन से पौधे की पत्तियां और टहनियां मज़बूत हो कर हरी रंगत प्राप्त करती हैं।"

फिर पृष्ठ २० पर यह लिखती हैं :—

"ज़मीन के छेद खुल जाने से आक्सिजन जम के भीतर घड़ियों को लाभदायक हो जाता है। खास कर Oxygen आक्सिजन का और एक गुण यह है कि वह

से ज़मीन में नाइट्रेट Nitrate बनता है। यह नाइट्रेट पौधों की ज़िन्दगी को बहुत फ़ायदेमन्द है। "

इन बातों का सारांश यही है कि वृक्ष भी हम लोगों की भांति श्वास लेते और छोड़ते हैं, अतः वे भी हमारे सदृश जीवधारी हैं।

३—अनुवाक।

हम एक चक्र यहां दर्शाते हैं जिस के द्वारा पाठकगण आसानी से यह जान सकेंगे कि वायु के किस क़िस्म से क्या क्या कार्य सम्पादन हो रहे हैं:—

नाम वायु का	कार्यविशेष
१ Carbonic Acid Gas. कारबोनिक एसिड गैस (प्राणनाशक वायु)	मनुष्य इसे भीतर से बाहर फेंकता है और वृक्ष पी लेता है। यह वायुमंडल में १/३३०० भाग है (अपान वायु)
२ Oxygen. (अम्ल जन) (प्राणप्रद वायु)	वृक्ष इसे फेंकते हैं और हम मनुष्य लोग अपने भीतर खींचते हैं (प्राण वायु)
३ Carbon.	लकड़ी या मांस को जलाने

नाम वायु का	कार्यविशेष
(कोयला तत्व) (कार्बन)	से जो तत्व उत्पन्न होता है वह कार्बन है, जो खाने की प्रत्येक वस्तु में विद्यमान रहता है।
Hydrogen, हाइड्रोजन (उद्जन)	पौधे इस धातु को वायु में से खींचते हैं।
Nitrogen, नाइट्रोजन (शोराजन)	पुष्टिकारक पदार्थ। इसे वृक्ष पीते हैं जिससे उन की पत्तियां पुष्ट होकर हरा रंग ग्रहण करती हैं। यह मनुष्य के लिये भी बलकारक है।
Phosphorus, फास्फरस	यह पौधों को पुष्ट करता है।
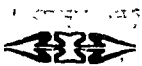
सातवां अध्याय।

वृक्ष देखता, सुनता सूंघता है।

पहला अनुवाक।

ऊपरी पांचवीं अध्याय से यह प्रगट हो रहा है कि अनेक जीवधारी छोटे छोटे कीड़े मकोड़े आदि भी ऐसे हैं जिनमें सारी ज्ञान-इन्द्रियां विद्यमान नहीं हैं, अतः अगर वृक्षों में भी सब इन्द्रियां मौजूद न हों तो इससे उनके जीवधारी होने में सन्देह नहीं हो सकता। परन्तु विद्वानों ने दर्शाया है कि उनमें किसी न किसी अंश तक ज्ञान इन्द्रियों की विद्यमानता पाई जाती है। अतः इस अध्याय में हम यह दर्शायेंगे कि वृक्षों में किस प्रकार आँख कान आदि के कार्य हो रहे हैं। अच्छा सुनिये:—

दूसरा अनुवाक।

वृक्ष देखते हैं।

प्रो० फ्रान्स अपनी पुस्तक Germs of mind in plants (पौधों की मानसिक दशा) पृष्ठ २५—३० पर यों कथन कर रहे हैं :—

"पौधों में आँख या देखने की शक्ति विद्यमान है। ... ... लताओं पर ध्यान दो कि वे अपना सहारा ढूंढ़ती रहती हैं और जिस ओर — दाहिने, बायें, आगे, पीछे, ऊपर, नीचे, जहां कहीं कोई आश्रय देनेवाली वस्तु दीख पड़ती है तो वे उसी पर लपट जाने के लिए आगे बढ़ती हैं। यह देखा जाता है कि लताओं की टहनियां बहुधा हवा में लहराती रहती हैं और उस समय वे इस खोज में लगी रहती हैं कि जो वस्तु सहारे की मिल जाय उसी पर चढ़ जायें। अगर कोई द्राक्ष (अंगूर) की लता को दोपहर तक ध्यान से देखे तो ज्ञात कर सकेगा कि उसकी टहनियां सचमुच उस प्रकार की खोज में व्यग्र रहती हुई प्रत्येक ६—७ मिनटों पर अपने नोकों को घुमाया करती हैं (यही खोज में प्रवृत्त रहने का चिह्न है) और उसी समय में उनके नोक (Tendrils) धीमी चाल से हवा में ऊंचे उठते हैं; और एक के पीछे दूसरे भी सब के सब ऐसा ही करते रहते हैं। परन्तु जब उन्हें कोई वृक्ष, खम्भा, दीवार या अन्य ऊंची वस्तु नहीं मिलती कि उसके इर्द गिर्द लपट जायें और इसी प्रकार लपटते हुये बढ़ें, तो फिर लाचार हो कर वे नीचे को झुकती हैं कि वहीं शायद कोई दीवार आदि मिल जाय। परन्तु अगर नीचे भी ऐसा कोई सहारा न मिलता तो वे लतायें फिर अपनी नोकों को ऊपर उठा

और जहां तक ऊंची उठ सकती हैं उठती हैं, इत्यादि
नायें अवश्य यह सिद्ध कर रही हैं कि लतायें देखती
, क्योंकि जब वह किसी के आश्रय को प्राप्त कर लेती
, तो उसके चारों ओर लपटती हुई आगे बढ़ती हुई चली
ाती हैं । और उसे वे ऐसी मजबूती से जकड़ लेती हैं
के बिना जखम दिये हुये क्या मजाल कि कोई उन्हें उस
से अलग कर सके ।"

निदान् वृक्षों का देखना सिद्ध हो रहा है ।

पौधों में प्रकाश का ज्ञान ।

प्रो०. फ्रान्स सांहब फिर पृष्ट ६३ पर कहते हैं कि:—
"प्रकाश अर्थात् देखने के कार्य में पौधे ऐसे कुशल
हैं, कि उनकी इस अद्भुत शक्ति पर मनुष्यों को पूरा यकी
नहीं होता। यह ज्ञान इन्द्रिय उनकी इतनी उत्तम और ह
है कि अन्धकार में जो पत्तियां बढ़ती हैं, वे प्रक
(उजियाले) के उन सूक्ष्म से सूक्ष्म भेदों तक को भी
लेती हैं, जिन्हें हमारे वैज्ञानिक यन्त्र (Scientific
paratus) तक भी नहीं भांप पाते । और तो क

* अगर देखने की शक्ति न होती, तो रास्ता कैसे पा जाते ।
... में भी लिखी है जिसे हम उसी प्रकरण में उपस्थित करेंगे । (

हम से भी कहीं अधिक (प्रकाश के सूक्ष्म अवयवों को) देख सकती हैं।

नरगिस (Violet) नाम के फूल के पौधे की किरणें ऐसी तीक्ष्ण होती हैं कि मनुष्य की आंखों को चौंधिया देती हैं। और इन किरणों का प्रभाव उन फूलों, पत्तियों पर बहुत ज्यादा पड़ता है। यद्यपि उसकी लाली जो हमारी आंखों को सहन नहीं हो सकती, उन (फूलों, पत्तियों) पर कुछ प्रभाव नहीं डालती।

उन किरणों के भेद, जो हमें रंग बिरंगे ज्ञात पड़ते हैं; पौधों पर भी हमारे ही समान प्रभाव डालते हैं।"

इत्यादि बातों से वृक्षों मे चक्षु-इन्द्रिय का होना सिद्ध है।

तीसरा अनुवाक।

वृक्ष सुनता है।

प्रो० फ्रांस अपनी पुस्तक "पौधों की मानसिक दशा" के पृष्ठ ९६ पर कहते हैं:—

"वृक्षों में सुनने की शक्ति विद्यमान है। यद्यपि वे

सदृश सब प्रकार के शब्दों को नहीं सुनते, परन्तु
सन्देह नहीं कि वे जोर की आवाज़ों पर सचेत रहते
हवा के बहने, आंधी के झोंके तथा अन्य ऐसी प्रा·
तिक घटनाओं के शब्दों को अवश्य वे सुनते और प्रभावित
ते हैं। बहुत सम्भव है कि उनकी तुलना मछलियों के
ाथ इस विषय में की जाय क्योंकि इन के भी सुनने पर
बड़ा झगड़ा है। * ”

पाठकगण ! आप ने प्रायः यह ज्ञात किया हो
कि ज़ोर के शब्दों का प्रभाव पशु, पक्षियों और मनुष्यों पर
किस प्रकार पड़ता है। हम देखते हैं कि अगर शिकारी
मनुष्य किसी पक्षी को मारने की ग़रज़ से बन्दूक़ चलाता
है तो चाहे उस के निशाने वाला पक्षी उस निशाने की
ही गोली से मरता हो, परन्तु निकट की सैकड़ों चिड़ियां
उड़ कर भागने लगती हैं और कई उस शब्द के प्रभाव
से मर जातीं और कई मूर्च्छित हो जाती हैं। इतना ही
क्यों, हम तो यह भी देख रहे हैं कि घोर ज़ोरदा
शब्दों, कड़ाके की आवाज़ों और बिजली की कड़क आ
के द्वारा गर्भवती स्त्रियों के गर्भों तक का नाश (गर्भ-पात)
जाया करता है। अतः इस में क्यों सन्देह किया जाय कि

* अर्थात् कई विद्वानों का मत है कि मछली में श्रवणशक्ति नहीं है।
(मंगलानन्द)

इसी प्रकार भारी आवाज़ों का प्रभाव वृक्षों पर पड़ता है। यही उनका सुनना है।

चौथा अनुवाक।

—:o:—

वृक्ष सूंघता है।

प्रोफ़ेसर फ्रान्स साहब अपनी पुस्तक (पौधों) के पृष्ठ ५९ पर वृक्षों में "सूंघने" की शक्ति का होना भी प्रगट कर रहे हैं।

" वे पौधे जो मांसाहारी हैं अपने शिकार वाले जन्तुओं का गन्ध सूंघ कर उनका निकट होना ताड़ लेते हैं, और तब उन्हें शिकार करने की चेष्टा में प्रवृत्त होते हैं। यह चेष्टा उन पौधों का उन जन्तुओं की ओर (Crawl) 'रेंगना' ही है। " इस के सिवाय हम देखते हैं कि अगर सरसों की खली छोटे पौधों की जड़ों पर खाद के रूप में डाल दी जाय तो वे उसके झार को न सहन कर सकने के कारण मुरझा जाते हैं या मर जाते हैं। ऐसा क्यों ? अवश्य ही इस से उन के घ्राण-इन्द्रिय का पता लगता है। वे उस खली की झार को सूंघते हैं और प्रभावित हो जाते हैं, ठीक जिस प्रकार हम मनुष्य लोग

दुर्गन्ध से व्याकुल हुआ करते हैं। यहां तक कि अगर दुर्गन्ध युक्त वायु से ही हमें बार बार श्वास लेने के लिये विवश होना पड़े तो हमारी मौत का कारण होता है। जो मंज़ों पर हैज़ा इत्यादि रोग फैल कर सैंकड़ों मनुष्यों की मृत्यु देखने में आती है यह इस का प्रत्यक्ष प्रमाण है।

निदान जैसे दुर्गन्ध से हमारी मौत होती है उ प्रकार वृक्षों के लिये जो वस्तु दुर्गन्ध है उस से उन भी मौत हो जाती है, अतः उन में घ्राण-इन्द्रिय या "सूंघने" की शक्ति का विद्यमान होना मानना पड़ेगा।

आठवां अध्याय।

वृक्ष खाता है।

पहला अनुवाक।

—○:○:○—

वृक्ष का श्वास लेना और देखना, सुनना, सूँघना बतला चुकने के पश्चात् अब हम यह प्रगट करेंगे कि उस में रसना यानें स्वाद लेने की इन्द्रिय भी मौजूद है और वह खाना खाता और हज़म करता है। अच्छा सुनिये:—

पुस्तक, (Nature Study Book No. 1) प्राकृतिक पाठ संख्या १ में यों लिखा है:—

पृष्ठ ४० पर — दरख़्त की दो छोटी पत्तियों में से एक को तोड़ लो। अब देखोगे कि तोड़ी हुई पत्ती नहीं बढ़ती परन्तु लगी हुई पत्ती बढ़ती जाती है।

नतीजा— हरे पौधे के हिस्से बढ़ते रहते हैं।

पृष्ठ ४१— पत्ती या छोटे पौधे में बाहर से गिज़ा (भोजन) आने के कारण वज़न अधिक हो जाता है।

प्रश्न— भीगी हुई लकड़ी और दरख़्त की शाख के बढ़ने में फ़र्क़ बतलाओ ?

दुर्गन्ध से व्याकुल हुआ करते हैं । यहां तक कि उ
युक्त वायु से ही हमें बार बार श्वास लेने के लि
होना पड़े तो हमारी मौत का कारण होता है ।
पर हैजा इत्यादि रोग फैल कर सैकड़ों मनुष्यों
देखने में आती है यह इस का प्रत्यक्ष प्रमाण है

निदान जैसे दुर्गन्ध से हमारी मौत होती
प्रकार वृक्षों के लिये जो वस्तु दुर्गन्ध है उस से
भी मौत हो जाती है, अतः उन में घ्राण-इन्द्रि
" सूंघने " की शक्ति का विद्यमान होना मानना पड़ेग

पत्तियों के रेशों में होते हुये वृक्ष के सारे नस नाड़ियों में प्रवेश करते हैं। और तब सारे भाग—तना डालियां आदि में पहुंच जाते हैं। परन्तु इन का भारी खजाना जड़ और तना में ही सुरक्षित रहता है।"

तीसरा अनुवाक।

—o:—

प्रो० जे० ग्रेटलैण्ड फार्मर साहब अपनी पुस्तक (Plant Life) वृक्ष जीवन पृष्ठ २८—२९ पर यों कथन कर रहे हैं:—

"पौधों के ऊपरी छाल (Skin) में छोटे छोटे छिद्र (cells) रहते हैं, उन्हीं के द्वारा वह अपने खाद्य द्रव्यों को अपने अन्दर प्रविष्ट करता है। और यह प्रकृया ऐसी उत्तमता से सम्पादन होती है, कि उसकी खुराक रस के रूप में अन्दर पहुंच जाती है (कि पचाने में कष्ट न पड़े) क्षार और अन्य ठोस पदार्थों का भी रस बन जाता है, तब वे पौधों के अन्दर जज्ब होते हैं। और गैसें यानें आक्सिजिन, कार्बन इत्यादि भी इसी प्रकार उस में प्रवेश करते हैं।

परन्तु पौधों में पानी का कार्य कुछ भिन्न प्रकार से

उत्तर— भीगी हुई लकड़ी में पानी जज्ब हो जाता है मगर उस से कोई नये हिस्से नहीं निकलते, बढ़ती हुई शाख के अन्दर हलके और रेशे सब बढ़ जाते हैं।

नतीजा— पौधे खाना हज्म करते हैं। ...... पौधे में खाना हज्म हो जाने के कारण रेशे और हलके बढ़ जाते हैं।

दूसरा अनुवाक।

—:o:—

फिर देखो पुस्तक Nature study of Burmah पृष्ठ २८ पर यों लिखा है:—

" वृक्षों की जड़ों में से पत्तियों में पानी आता है। जिस में अन्य तत्वों के परमाणु अत्यन्त सूक्ष्म रूप में मिले हुये रहते हैं। पत्तिओं में उन के (छोटे २) मुखों याने छिद्रों द्वारा वायु प्रवेश करता है। हरे रङ्ग का पदार्थ (Chlorophyll) जड़ों वाले रसयुक्त पदार्थ में से और हवा में से भी (Starch) अर्थात् जीवन सत्व या निशास्ता और शकर (मिठास) को पैदा करता है।

मिठास और स्टार्च वृक्षों के मुख्य खाद्य द्रव्य हैं और वे पत्तियों में बन कर जब तैयार हो जाते हैं, तब वे पानी में रस के रूप में घुल कर पौधों के नसों और

त्तियों के रेशों में होते हुये वृक्ष के सारे नस नाड़ियों में
वरा करते हैं । और तब सारे भाग—तना डालियां आदि
पहुंच जाते हैं । परन्तु इन का भारी खज़ाना जड़
और तना में ही सुरक्षित रहता है ।"

तीसरा अनुवाक।

—:o:—

प्रो० जे० ब्रेटलैण्ड फार्मर साहब अपनी पुस्तक
(Plant Life) वृक्ष जीवन पृष्ठ २८—२९ पर यों कथन कर
रहे हैं:—

"पौधों के ऊपरी छाल (Skin) में छोटे-छोटे
छिद्र (cells) रहते हैं, उन्हीं के द्वारा वह अपने खाद्य
द्रव्यों को अपने अन्दर प्रविष्ट करता है । और यह प्रक्रिया
ऐसी उत्तमता से सम्पादन होती है, कि उसकी खुराक रस
के रूप में अन्दर पहुंच जाती है (कि पचाने में कष्ट न
पड़े) क्षार और अन्य ठोस पदार्थों का भी रस बन जाता
है, तब वे पौधों के अन्दर जज्ब होते हैं । और गैसें याने
आक्सिजिन, कार्बन इत्यादि भी इसी प्रकार उस में प्रवेश
करते हैं ।

परन्तु पौधों में पानी का कार्य कुछ भिन्न प्रकार से

रह सकते। मनुष्य और दूसरे जीव जन्तु अपने अ
मुंह से खूराक खाते हैं और खाई हुई चीज़ गले की
अन्न की थैली में पहुंच कर हज़्म होने के बाद तंदुरु
को क़ायम रखती हुई देह को मोटा ताज़ा करती है
अगर जीव जन्तुओं के पेट में मुंह के द्वारा खूराक
पहुंचे तो वे जीवित ही न रह सकेंगे। परन्तु पौधों में भोज
करने के लिये कोई खास इन्द्री मुकर्रर नहीं है। उन
कई मुंह होते हैं। पौधे की हर एक टहनी और फूल
पत्ती यह काम करती है। ये कार्वन (Carbon) वा
से अपनी खास खूराक खींचा करती हैं। पौधे मिट्टी
जिस रस को खींचा करते हैं, उसी में उनका आहा
मिला रहता है। यह रस जड़ से लेकर वृक्ष की चोटी
तक पहले छाल और फिर डालियों तथा टहनियों में होत
हुआ हज़्म होता है। नलियां इतनी महीन होती हैं कि
बिना खुर्दबीन के आंख से देख ही नहीं पड़तीं। प्रत्येक नली
बहुत पतली झिल्ली (Cells) से तैयार होती है। जड़ों से
खींचा हुआ रस उन्हीं झिल्लियों के खानों को तय करता
हुआ चोटी तक पहुंचता है। हर एक नली के जोड़ पर
रवर के ढकन के म्वाफ़िक़ ढकन रहता है। खींचा
रस इन ढकनों में हो कर बड़ी आसानी से नलियों
पहुंचा करता है। उस रस में जितना हिस्सा पौधों के

लिये फायदेमन्द होता है, उतना जगह ब जगह रहता जाता है और बेफायदा बचा हुआ रस पत्तियों के जरिये हवा को खींच लेता है । इस तरह जड़ें जिस रस को खींचती हैं, वह वृक्ष के हर हिस्से यानी पेड़, फल, फूल, और पत्ती वग़ैरह के काम आता है । अगर रस खींचने में कोई कठिनाई आड़े आजाती है, तो वृक्ष की बाढ़ और जिन्दगी में रुकावट होती है । जो जमीन अच्छी तरह जोत दी जाती है और जिस के ढेले चूर चूर कर दिये जाते हैं उसमें यह दिक्कत नहीं होती* । क्योंकि मुलायम धरती में जड़ें आसानी से घुस कर रस खींचती हैं और वृक्ष भर में पहुंचाकर उसे हरा भरा रखती हैं ।

पेड़ की एक बाजू में अगर जमीन कड़ी हो या कंकड़ पत्थर हों, या कोई कीड़ा लग जावे, तो जिन नलियों में हो कर रस जाता होगा उनका काम रुक जावेगा । नतीजा

* जो लोग (खास कर जैन धर्मी) जीव जन्तुओं पर दया कर उन्हें सुखी रखना अपना धर्म मानते हैं (अर्थात चींटी को चारा देते, कबूतरों को दाना देते, बन्दरों को रोटी खिला देते, और सांप को दूध पिलाते हैं) उन्हें उचित है कि खराब जमीन को अच्छी बनाकर वृक्षों, पौधों को भी उनका खाद्य प्राप्त कराने का प्रबन्ध करते हुये पुण्य कमाया करें—उन्हें वृक्ष आशीर्वाद देंगे कि परमेश्वर दाता दया करे ।

(मंगलानन्द)

यह होगा कि जिस हिस्से में रस न पहुंचेगा उसकी बाढ़ मारी जावेगी। दूसरी तरफ़ की नलियां भरसक रस खींच सकती हैं, इसलिये उसी ओर की डालियां और टहनियां हरी भरी होकर फलती फूलती रहती हैं।

छटवां अनुवाक।

—:o:—

फिर देखो पृष्ठ ४३ पर श्री मती जी यों कथन रही हैं:—

"पौधों की ख़ूराकें तीन हैं—शोराजन, हाड़जन खारजन। किसी किसी पौधे को इनमें से एक और किसी को इन तीनों की ज़रूरत होती है।"

इसी प्रकार पृष्ठ ३३-३४ पर भी यों लिखती हैं "साधारण वृक्षों में नीचे लिखी सार चीज़ें देखे हैं:—

(Carbon) कोयला

(Hydrogen) उदजन

(Oxygen) अम्लजन

(Nitrogen) शोराजन

(Phosphorous) फास्फोरस
(Sulphur) गन्धक
(Chlorine) क्लोरिन
(Silecon) सिलेकन
(Calcium) काल्शियम
(Iron) लोहा
(Magnesium) मैगनीशियम
(Potassium) पोटाशियम
(Sodium) सोडियम
(Manganese) मैंगनीज

वृक्ष को पालने पोषने वाली सार चीजें दो हिस्सों में की जा सकती हैं। पौधे अपनी परवरिश की चीजें पत्तों के ज़रिये हवा से और जड़ों के ज़रिये मिट्टी से लिया करते हैं। हवाई ख़ूराक अंगारक और मट्टी की ख़ूराक अनंगारक है। दरख्त के जल जाने पर जो कुछ बच रहता है, वह अनंगारक है और उसका अंगारक हिस्सा हवा में मिल जाता है। राख में थोड़ा सा अंगारक भी रहता है।

"...... वृक्ष की जड़ से भी यह भाफ (कार्बोनिक) निकलती है। वृक्ष में इस भाफ को निकालने की ताकत रहने से वह मट्टी से सार भाग को गला कर अपनी ख़ूराक खींच सकता है। यह काम वृक्ष की भीतरी ताकत

से होता है। ...... (ख) पौधा इन चीज़ों को मट्टी से लेता है :—

१ फ़ासफ़रस—यह पौधे की ज़रूरी चीज़ है। इस में दो यौगिक चीज़ें हैं, जोकि पौधों को पुष्ट करती हैं—एक अद्रव कैल्शियम् फ़ास्टफ़ेट दूसरे द्रवनीय कैल्शियम् फ़ास्फ़ेट।"

पाठकगण! ऊपर के उद्धरणों से आप ने भली प्रकार जान लिया होगा कि वृक्ष में स्वाद लेने, खाना खाने और उसे पचाने की शक्तियां विद्यमान हैं, अतः इस अंश में भी वे हमारी समानता रखते हैं।

नवां अध्याय।

वृक्ष सोता है।

पहला अनुवाक।

—:o:—

प्रो० फ्रान्स साहब अपनी पुस्तक (पौधों की मानसिक दशा) के पृष्ठ ९९ पर यों कथन कर रहे हैं:—

"जिस प्रकार हम लोग रात में सरदी से बचने के लिये कुछ ओढ़ लेते और सिकुड़ जाते हैं, इसी प्रकार वृक्षों का भी सिकुड़ जाना देखा जाता है। इतना ही नहीं, बल्कि बनफ़शा (Pansy) या गाजर के फूलों के गुच्छे रात्रि समय में अपने शिरों को नीचे झुकाये रहते हैं। परन्तु वे प्रत्येक रात्रि में ऐसा नहीं करते, बल्कि जब अधिक सरदी पड़ती है तब ही वे मानो उस से बचने के लिये इस प्रकार अपने अङ्गों को सिकोड़ लेते हैं।" आगे फिर कहते हैं कि "... ... पौधे सोते भी हैं" क्योंकि सायङ्काल में फूलों की शोभा संकुचित हो जाती है, परन्तु फिर प्रातःकाल सूर्योदय होने पर प्रफुल्लित हो जाती है। ... ... वे रात्रि में ऐसे सिकुड़े हुये हो जाते हैं, मानों

पाला से मारे गये हों। यह निद्रा को प्राप्त कर लेने की दशा का ही सूचक है। उस अवस्था में उनकी छोटी छोटी पत्तियाँ आपस में एक दूसरे से चिपटी हुई सी हो जाती हैं। लेकिन यह दशा सूर्योदय के पश्चात् नहीं रह जाती। क्यों? प्रत्यक्ष ही है कि रात्रि में उक्त दशा निद्रा वश थी। विशप अल्ब मेग्नस Bishop Alb Magnus ने ६०० वर्ष पूर्व यह कहा था कि वृक्ष इसी प्रकार सोते हैं, जैसे मनुष्य। परन्तु उनको ऐसा कथन करने के कारण दोषी और अपराधी * मान लिया गया था। महान् डार्विन ने भी यही कहा है कि वृक्षों की जाड़े पाले आदि से रक्षा रात्रि में शयन करने से हो जाती है।"

दूसरा अनुवाक।

—:o:—

फिर प्रोफ़ेसर फ़्रान्स साहब कहते हैं:—

"छोटे छोटे जीव जन्तुओं को प्रकाश बहुत पसन्द रह[illegible] यह बात भली प्रकार जांच कर ली गई है, और ह[illegible]

* जिससे उन यूरोपियनों की मूर्खता, पक्षपात और [illegible] पाई [illegible] है। विज्ञानवादियों की वहां सदा यही गति रही है — जिसने पृथ्वी का [illegible] होना और घूमना प्रगट किया था उसको भी फांसी दी गई थी इत्यादि। (मंगल[illegible]

देखते हैं कि घास की पत्तियां भी प्रकाश को प्यार करती हैं।*

पतङ्ग (Moth) जो प्रकाश में उड़ता रहता है; इसी सूर्य उपासना (Helio tropism) का एक दृष्टान्त है। जितना ही अधिक ये जीव जन्तु दिन के प्रकाश में उड़ते रहते हैं उतनी ही पौधों की जड़ें प्रकाश से दूर भागती हैं। पतङ्गों और तितलियों को, जो दिन में सो जातीं, और कमती प्रकाश के समय में उड़ती रहती हैं, अगर अंधियाली कोठरी में रख दिया जाय तो भी अपने इस नियम में परिवर्त्तन न करेंगी। यही दशा पौधों की भी है, कि वे शयन कर लेते हैं और कुछ पता नहीं मिलता ... ... पशुओं में रात दिन के परिवर्त्तन का ज्ञान उनकी इन्द्रियों के द्वारा नहीं प्राप्त होता। यह बात इससे जानी जायगी कि (Eyeless maggot) आंखों से रहित (मैगट) मक्खी अन्य रात्रि में उड़नेवाले पङ्गों के ही सदृश अन्धकार से प्रकाश की ओर उड़ती चली जाती है। इन बातों से स्पष्ट है कि अन्धकार प्राणीमात्र को शयन करानेवाला है और वृक्षों की जड़ें भी शयनागार निमित्त अन्धकार की शरण लेती हैं। तथा उनकी परिओं आदि की भी यही दशा देखी जाती है। ... ... अनेक

* अतः दोनों में समानता हुई।

पौधों के फूल और कलियां ओस और सरदी से अपनी रक्षा करती हैं अतः वे (पत्तियां) सिकुड़ कर सुरक्षित हो जाती हैं, इत्यादि बातें प्रत्यक्ष रीति से पत्तियां घास (Clover), खरबूजा (Gourds), टमाटर (विलायती बैंगन) (Tomoto) या सूर्यमुखी में देखी जाती हैं। वे अगर ऐसा न करें तो बरफ़ से उनका जम जाना सम्भव है। फिर अँखुओं और टहनियों का चक्कर काटते रहना और भी अधिक कार्य सम्पादन कर देता है। क्योंकि ऐसा हुए बिना द्राक्ष (Hopvine) की बेलें ऊपर को न चढ़ सकतीं और न (Grapes) अंगूर ही चढ़ सकता। ट्रोपिज्म (Tropism) के समूह बिना जड़ें भी पौधों का पालन पोषण नहीं कर सकतीं। सूर्यमुखी के सिवाय कोई भी पौधा प्रकाश को नहीं ले सकता।... ... ... सब से बढ़ कर यह बात है कि उनकी पत्तियां बन्द हो जाती हैं और दिन होने से पूर्व नहीं खुलतीं। ऐसा क्यों होता है? इस प्रश्न का उत्तर डार्विन के शब्दों में भाफ (Evaporation) का बन्द हो जाना है (परन्तु वह दशा क्यों होती है? इसके उत्तर में यही मानना पड़ेगा कि जीवात्मा सो जाता है, इसलिए सब कार्य रुक जाते हैं)।

तीसरा अनुवाक।

—:o:—

कमल।

कमल के फूल का सायंकाल में बन्द हो जाना और प्रातः समय खिल उठना उस के शयन करने की साक्षी देता है। संस्कृत पुस्तकों में इसका बहुत वर्णन आया है। अर्थात् कवि लोगों ने यह प्रगट किया है कि कभी कभी भौंरा कमल के सुगन्ध में मस्त होता हुआ उसी पर बैठा रहता है। यहां तक कि सन्ध्या काल में कमल फूल के बन्द होने पर वह स्वयं भी उसी के अन्दर बन्द हो जाता है, और प्रातः होने पर जब फूल खिलता है तब वह बन्धन से छूट जाता है।

इससे यह निश्चय हुआ कि कमल का पौधा रात भर शयन करता रहता है। क्या यह बात बिना जीव के कभी हो सकती है? कदापि नहीं।

दसवां अध्याय।

वृक्ष नाड़ी और गति रखता है।

पहला अनुवाक।

वृक्षों का बढ़ना यह सिद्ध करता है कि वह गति (movement) रखता है। अगर उस में गति न मानो तो जड़ वस्तुओं के सदृश उसे उतने का उतना ही बना रहना* चाहिये, पर ऐसा नहीं है, इस कारण वृक्ष को गतिवान मानना पड़ेगा। फिर उन में हिलना, डोलना, झुकना, झूमना, लहराना, मुड़ना, कांपना आदि विद्यमान हैं, जो उस में गति को सिद्ध कर रहे हैं। अलबत्ता यह बात ठीक है कि वृक्षों के अङ्ग इतने फुरतीलेपन से काम नहीं कर सकते जैसे हमारे।

पुस्तक "पौधों की मानसिक दशा" के पृष्ठ ११० पर प्रो फ्रान्स साहब कथन करते हैं कि :—

वृक्षों में (Excitation) "हल चल" भी पाई जाती है। वह दशा हम मनुष्यों में तो शरीर भर में व्यापक नसों के द्वारा होती है। फिर क्या वृक्षों में भी नस नाड़ियां विद्यमान हैं? यह एक प्रश्न है, जिसका उत्तर बहुत छान

---

* कोई लोग यह प्रश्न किया करते हैं कि पत्थर भी बढ़ते हैं इस पर हम तीसरे खण्ड में विचार करेंगे। (सं०)

घोन और भारी जांच पड़ताल के पश्चात् "हां" में दिया गया है। अलबत्ता यह (Plant-nerves) पौधों की नसें अन्य पशुओं से बिलकुल भिन्न प्रकार की हैं। सन् १८८४ में यह अन्वेषण हुआ था कि जब किसी पौधे का कोई भाग – पत्ती, डाली या कोई भी अवयव — जख्मी होता, काटा, जलाया या तोड़ा जाता है, तो एक विचित्र प्रकार की रचना उस जख्म के इर्द गिर्द होने लगती है। यहां से गति (Movement) आरम्भ होकर अन्दर अन्दर छिद्रों में होती हुई चली जाती है। परन्तु ज्यों आगे आगे बढ़ती है त्यों त्यों कमज़ोर होती जाती है; यहां तक कि जख्म से एक सेन्टीमीटर (Centimeter) की दूरी पर जा कर समाप्त हो जाती है। कुछ दिनों पीछे सारे छोटे छोटे (Amœbæ) "अमीबा" उन छिद्रों में रेंगते हुये वापस आते हैं और बेचारे पौधे का आन्दोलन (Agitation, थक कर शान्त हो जाता है। इस सारी प्रक्रया में "Feeling" (सुख दुःखानुभव ज्ञान) का होना सिद्ध हो रहा है।... ...नस समूह (Nervous system) का दिमागी सम्बन्ध वृक्षों की जड़ों में विद्यमान होना सब से प्रथम प्याज़में ज्ञात हुआ है, फिर फ़्लोरा Flora फूलों, सम्बुल (Hyacinth),कमल (Waterlily),फर्न(Fern) पौधों में और अन्ततः मक्की, लौकी, मटर और आलुओं में भी देख लिया गया है।

... ... इतना ही नहीं वल्कि पौधें के शरीर में एक नस दूसरी से सहानुभूति मांगने के तार-समाचार भी अपने इन्हीं तारों या धागों सदृश सम्बन्धों द्वारा भेजती हैं, जब कि उन के शब्द यों होते हैं कि :—

"हमारा बड़ा पोषक और पिता जो "जड़" है वह बेचारा पीड़ित हो गया है (चलो चलो उसकी सहायता करें) । ... ... इस प्रकार की गति जो क्रोध के सन्देशे से भरपूर होती है, उस समय बिलकुल बंद हो जाती है; जब कि (Temperature) टेम्परेचर (सरदी गरमी की दशा) दैवयोग से २०° से ८° c. डिगरी पर आ गिरता है । उस समय उक्त तार का सम्बंध (Telephone line) टूट जाता है और रेशे (नसें) एक दूसरे से पृथक हो जाती हैं। निदान सारा सम्बंध टूट जाता है । परंतु फिर जब उस मार्ग (लाइन) की मरम्मत हो जाती है, तो कार्य फिर आरम्भ हो जाता है ।

उक्त प्रकार की लाइन का स्वयं मरम्मत हो जाना एक बड़ी आश्चर्य और कौतूहल-जनक घटना है, जैसी कि संसार में अन्यत्र कहीं नहीं देखी जा सकेगी, यह अवश्य ही उन (पौधों) के जीवन की साक्षी है ।"

दूसरा अनुवाक।

प्रोफेसर फ्रांस साहब अपनी पुस्तक "पौधों की मानसिक दशा" में यों कथन कर रहे हैं :—

"कोई पौधा बिना गति के नहीं होता । ... ... विद्वान तत्व-ज्ञानियों का कथन है कि इन वृक्षों की ये सब गतियां उनमें से उस रस Liquid के कारण उत्पन्न होती* हैं, जो उनके नसों में दौड़ता रहता है । इसी रस के प्रताप से पौधों के अवयव बढ़ने और टहनियां फूटती हैं। अगर इस विषय पर ध्यान से विचार किया जाय तो ज्ञात होगा कि मानों रेलगाड़ी की भांति वृक्षों की दशा है (अर्थात् जैसे वह दौड़ी चली जाती रहती है, उसी प्रकार वृक्ष शरीर के अंदर नसों से पानी, खाद्य द्रव्यों, गैसों—वायु के परमाणुओं आदि का जोर शोर से घूमना जारी रहता है)।"

---

* ठीक जिस प्रकार हम मनुष्यों के शरीरों में अन्नाहार से रुधिर बन कर जब दौड़ता है तो हम लोग प्रसन्नता पूर्वक चलते फिरते, उछलते कूदते रहते हैं। अगर दो चार दिन खाना न मिले तो देखोगे कि मनुष्य भी मुर्दा पड़ा रहेगा।

तीसरा अनुवाक।

अगर यह प्रश्न किया जाय कि वृक्ष में गति है, तो वह हम लोगों की तरह चलता फिरता क्यों नहीं ? तो उत्तर यों है कि पौधों में उतनी गति और शक्ति मौजूद है जितने की उन्हें आवश्यकता है । अब यह बात सहज ही समझी जा सकेगी कि वे साधारणतया शान्त और चुपचाप क्यों रहते हैं — कारण स्पष्ट है कि उन्हें अपना सादा जीवन गुज़ारने के लिए कुछ अधिक परिश्रम या हल चल करने की आवश्यकता नहीं है ।

इस प्रकार वृक्षों में गति और नस नाड़ियों का होना सिद्ध हो रहा है ।

अध्याय ग्यारह।

वृक्ष रोगी होते हैं।

पुस्तक वैज्ञानिक खेती प्रथम भाग पृ० ७० पर श्री
मती हेमन्त कुमारी देवी जी यों लिखती हैं:—

"मामूली तौर पर पौधे दो किस्म के रोगों से घिरे
रहते हैं। १ फंगस (Fungas) यह पौधे के किसी
हिस्से पर हमला कर अन्दर घुस जाता है; और उसकी
देह के तन्तुओं को कमजोर करके मार डालता है। ये
उद्भिद, खुर्दबीन की सहायता बिना दिखाई नहीं दे सकते।
इनके बीज वायु मण्डल, मट्टी और पानी में रहते हैं।
बीज अंकुरित होकर पौधे के कोष (Cells) में रक्खी
हुई सामग्री से तैयार होता है। फिर उससे एक
धागा सा निकल कर वृक्षों में फैल जाता है। ये वृक्ष
के भीतर रक्खी हुई चीजों को खा जाते हैं। इससे
झाड़ निस्तेज, रोगी हो जाते हैं। ये रोग पैदा करने
वाले पौधे, खुद हवा, पानी और मट्टी से खोराक नहीं
ले सकते; इस लिए दूसरे की जमा पर क़ब्जा कर बैठते
हैं! किसी जिन्दा झाड़ का रस सोख कर या मरे हुए

और सड़े गले पदार्थों पर जम कर अपना निर्वाह करते करते हैं। ... ... धान में भी कीड़े पड़ जाते हैं। इस लिए बीज और कलम इत्यादि को लगाने, बोने से पूर्व खूब साफ कर लेना आवश्यक है। बीज इत्यादि को साफ करने या रोग से बचाने के लिये इनमें कीड़ों को मारने वाली या जीवाणु नाशक कुछ चीजें मिला देनी चाहिए। इन चीजों में चिपचिलापन, बदबू, और तेज बू हो ... ... तूतिया के पानी में बहुत देर तक बीज, कलम या जड़ को रखने से उसको पैदा होने की ताकत मारी जाती है। ... ... (आगे पृष्ठ ७५ पर देखो यों लिखा है कि :—

... ... हरदा (गेरुई) लगना—जमीन में पानी रह जाने पर या अच्छी तरह सूर्य की किरणों के न पड़ने से यह रोग होता है। धान के सिवाय और कोई फ़सल बँधे हुए पानी में रह कर स्वस्थ और ताजा रहती हुई बढ़ नहीं सकती।

पाट, अरहर, भुट्टा (मकई) ज्वार, गन्ना इत्यादि के पौधे पानी में घिरे रहने से रोगी हो जाते हैं। बैंगन और मिरचे के खेत में अगर पानी भरा रहे तो वे मर जाते हैं। ... ... अब तक कोई अच्छा उपाय नहीं जाना जा सका जिस से गेहूं का हरदा रोग दूर किया जा सके।

इस रोग की जड़ गेहुओं के बीज के साथ हो आती है ... ... धान, भुट्टा और ज्वार के रोग भी इसी जाति के हैं।"

(फिर देखा पृष्ठ ७८ पर भी यों कहा है) :—

"गन्ना—कई वर्ष पहले रोग हो कर गन्ने की खेती बम्बई के सूबे से एक तरह उठ ही गई थी। इस रोग का नाम घासा Daetraea Bacharatis Fabur है। कहीं कहीं किसान इसे भजेरा भी कहते हैं। यह कीड़ा डंठल में घुस कर रेशा खाता है। ... ... जब पानी की कमी होती है, तभी यह रोग देखा जाता है। इस के सिवाय एक ही जाति का गन्ना अगर बार २ एक ही खेत में बोया जावे; तो कुछ दिनों में पतला हो कर इस रोग से खराब हो जाता है। जिन पेड़ों में इस रोग के लक्षण दीख पड़े, उन्हें उखाड़ कर खेत से दूर ले जा कर जला दें; और फ़सल कट जाने पर खेत का कूड़ा कचरा हटवा दें। इससे फिर इसका डर नहीं रहता।

गन्ना की दूसरी दुश्मन फफूंदी है। ... ... मट्टी का तेल इस की सब से बढ़िया दवा है। ... ... बोने से पहिले गन्ने के टुकड़ों को मट्टी के तेल में पानी मिला-

कर भिगो देने से फिर फफूंदी का डर नहीं रहता।"

इत्यादि उद्धरणों से सिद्ध है कि वृक्ष हमारे ही सदृश रोगी भी होते हैं, इस लिये उनके जीवधारी होने में सन्देह नहीं हो सकता।

बारहवां अध्याय।

वृक्ष नर मादा होते, सन्तान छोड़ते और रिश्ता नाता रखते हैं।

पहला अनुवाक।

(नर-मादा)

—:o:o:—

स्कूली पुस्तक Nature study book No. 1 (प्राकृतिक पाठ सं० १ में) पृ० ४२ पर यों लिखा है :—

"पौधे अपने किस्म के दूसरे पौधे पैदा करने के लिए बीज पैदा कर देते हैं।

किसी ज़मीन में तांबे या लोहे के टुकड़े और बीज का डाल कर देखो। (देखने से जानोगे कि) तांबे या लोहे का टुकड़ा नहीं बढ़ता और बीज से पौधा निकलता है जो अपनी ग़िज़ा को हज़म करता और अपने किस्म के नये पौधों के लिए बीज बनाता है।"

निदान जो चीजें बढ़तीं, खाना हज़म करतीं और अपनी जिन्स (योनि या सन्तति) को क़ायम रखती हैं; वे

जी-रूह, जीव-धारी)कहलाती हैं और जिन में ये बातें नहीं होतीं वे ही बेजान (गैर जी-रूह) कहलाती हैं।

खीरे की बेल।

आगे इसी पुस्तक में पृष्ठ ५५ पर खीरे की बेल का वर्णन यों आया है :—

"ऊपर एक गाभे में बहुत से छोटे छोटे फूल औ नीचे सिर्फ एक फूल लगता है।*

अन्दर की तरफ †सिर्फ जीरे ही होते हैं, बीज नहीं होता। उस में बीजदान ही होता है जीरे नहीं होते।

पृष्ठ ७१ पर—

मादा फूलों में बीच के सतों में तीन टोपियां छोटी नली और बाहरी पत्तियों और अन्दरूनी पंख के नीचे बीजदान होता है।

*इन में से वह एक फूल नर तथा अन्य छोटी अनेकों नारियां या होती हैं। (मंगलान

† यहां वृक्षों में नर मादा होने का वर्णन किया गया। एक में जी दूसरे में बीजदान की विद्यमानता से यह जाना जायगा कि बीजदान ही वहां का काम देता है। उसी में जीरों के (वीर्य सदृश) गिरने पर फलों की गर्भ होती है, और पश्चात् उसका फल (सन्तान रूपी) उपजता है जिस में के बीज मौजूद रहते हैं। (म

दूसरा अनुवाक।

वृक्ष विषय भोग करते हैं।

प्रो० जे० मेट लैंड फार्मर साहब ने अपनी पुस्तक (Plant life) (वृक्ष जीवन) में एक पूरा अध्याय अर्थात् १९ वां चैप्टर) वृक्षों के नर मादा होने के विषय में लगा दिया है। हम उस लम्बे लेख को अत्यन्त संक्षेप में नीचे उद्धृत करते हैं:—

"वृक्षों में भी पशुओं सदृश नर मादा होते हैं" छोटे पौधों में अभी तक ऐसा नहीं देखा गया, तो भी यह अनुमान है कि उसमें भी पुरुष-स्त्री सम्बन्ध रहता है।

उनमें उपस्थ इन्द्रिय भी है; पर अत्यन्त सूक्ष्म तर होता है। इसे देखने से ऐसा प्रतीत होता है कि पौधों में यह इन्द्रिय पूर्व में रही होगी पर अब नष्ट हो गई। लेकिन अगर उनको पुष्ट किया जाय तो उनकी यह इन्द्रिय प्रबल होकर भासित होने लगेगी।

नर मादा पौधे पास पास होते हैं, और वे विषय भोग करते हैं। प्रत्येक पौधे में दो प्यालों सदृश अवयव रहते हैं, जिन्हें Gametes (गैमिटि) कहा जाता है। समागम होने पर वे दोनों मिल कर एक हो जाते हैं, अब

इसका नाम Zygate जाइगेट हो गया जो क cell कोठरी जैसा हो जाता है। उसी से नवीन संतान पैदा होती है।

एक प्रकार का पौधा Unicellular होता है (अर्थात् एक cell कोठरीवाला पौधा)। इस पौधे में नर मादा दोनों की उपस्थ इन्द्रिय एक समान होती है, परन्तु शरीर-शास्त्र Physiology द्वारा वे पृथक पृथक देखे जा सकते हैं।

खाद्य द्रव्यों को बहुतायत से पौधा हृष्ट पुष्ट होता है अन्यथा भूखों मरने से सूखा, कुम्हलाया, मुरझाया हुआ हो जाता है। अतः जिस प्रकार इन सुख दुःखों के अनु भव उसे प्राप्त होते हैं, इसी तरह हम समझ सकते हैं कि काम चेष्टा का अनुभव भी उनमें होता ही होगा क्यों कि पुष्टिकारक पदार्थों से अगर मनुष्य, पशु, पक्षी आदि मज़बूत बन कर कामातुर हो जाते हैं तो इसी न्याय वृक्ष भी हृष्ट पुष्ट होने पर कामातुर क्यों न होंगे?

यह देखा जाता है कि पौधों की बाढ़ एक सीमा हो कर रुक जाती है, और वह तभी आगे बढ़ती है जब "समागम" का अवसर प्राप्त हो। अगर दैवयोग से पौधे को स्त्री-प्रसंग का अवसर न मिले तो उसकी रुक जायगी और वह मुरझाय कर मर जायगा।

पौधों में प्रायः मादा की गमिटि Gamette बड़ी
ती है, जब कि नर का वह अङ्ग छोटा होता है।

जिस प्रकार मनुष्यादि में यह नियम है कि जो भूखों
रता है उस में काम-चेष्टा की कमी हो जाती है, उसी
कार वृक्षों में भी जो हृष्ट-पुष्ट, मजबूत नहीं होते उन में
ाम-चेष्टा की इतनी न्यूनता पाई जाती है मानों उसका
भाव ही है।

तीसरा अनुवाक।

—:o:—

योनि-भेद।

पौधों में "योनि-भेद" भी मौजूद है अर्थात् जैसे
बैल, घोड़ा, हाथी आदि अपनी अपनी योनियों — गाय,
घोड़ी, हथिनी इत्यादि से ही सम्बन्ध कर सकते हैं। इसी
प्रकार पौधों में भी गेहूं का चने के साथ मेल नहीं हो
सकता। और जिस प्रकार मनुष्यों, पशु, पक्षियों में भिन्न
भिन्न जातिवालों का मेल होकर दोनों के गुण सन्तान में
आते हैं वैसाही वृक्षों में भी होता है। जैसे कुत्तों की
अनेक जातियों में से एक जाति वाला कुत्ता दूसरी जाति
वाली कुतिया के साथ सम्बन्ध करता है और सन्तान में दोनों

के गुण उसमें आ जाते हैं (यही बात गाय, घोड़े आदि में भी देखी जाती है) ।*

इसी प्रकार पौधों में भी पाया जाता है कि अगर नर पौधा बासमती चावल का हो और मादा पौधा "रामसागर" नाम के चावल का हो, तो उनका सम्बन्ध हो जाय परन्तु सन्तान दोनों से भिन्न तीसरे प्रकार की पैदा होगी यानी दोनों के गुण उसमें आ जायँगे जो तीसरा जैसा भासित होगा इत्यादि ।

यह भी ज्ञात हुआ है कि नर और मादा पौधे समागम द्वारा आपस में शक्ति का अदल बदल करते हैं अर्थात् उन में से जो कमज़ोर निर्बल होता है वह दूसरे की शक्ति को खींच लेता है इत्यादि इत्यादि बहुत अधिक बातें इस विषय में हमारे फार्मर साहब ने कथन की हैं जिन में से यह थोड़ा सा यहां उद्धृत किया गया ।

---

* यह बात मनुष्यों में भी यों देखी जाती है कि अंगरेज़ पुरुष और हिंदी स्त्री से "जो यूरेशिन" संतानें जनमी हैं वे दोनों से भिन्न रूप रंग की देखी जाती हैं । अफ्रिका में हमने स्वयं हिंदी पुरुष और अफ्रिकन स्त्री से होनेवाली संतान को तीसरे प्रकार की देखी है । (मंगलानंद)

चौथा अनुवाक ।

—:ooo:—

रज वीर्य ।

प्रोफेसर फ्रांस माहब अपनी पुस्तक "पौधों को मानसिक दशा" के पृष्ठ ८४ पर यों कथन कर रहे हैं :—

"किन्हीं cells कोठरियों में लम्बे लम्बे बाल रहते हैं जो जीवन-युक्त शक्तियों से इधर उधर ओस की बूंदों पर मंडराते रहते हैं । यह उन के जीवित रहने का चिन्ह है । ये ही वे स्पर्मोटोज़ोआ Spermotozoa (वीर्य के अवयव—रेंगते हुए कीड़े सदृश) हैं, जो प्रातः काल की ओस पर सैर करते रहते हैं । भला वे ऐसा क्यों करते हैं ? They seek a charming female वे अपने लिए सुन्दर स्त्री की खोज करते रहते हैं । वे असंख्य मुलायम मुलायम छोटे छोटे पखड़ियाँ cups को चुन लेते हैं, जिन की तलियों में Mass-egg अण्डाकार-शरीर वाले (स्त्री का रज) छिपा रहता है, और वह तभी जीवधारी बनता है जब कि इन अद्भुत स्पर्मोटोज़ोआओं * के साथ *

* स्पर्मोटोज़ोआ Spermotozoa वीर्य के उन अवयवों को कहा जाता है जो अत्यंत छोटे २ रेंगनेवाले जंतु सदृश होते हैं । इन्हें केवल सूक्ष्मदर्शक यंत्र ही से देखा जा सकता है । शायद एक माशा वीर्य में ऐसे रेंगनेवाले २०० क संख्या में पाये जाते होंगे । (मंगलानंद)

और लश्यत प्राप्त करने की धुन में तत्काल रहते हैं। लेकिन बरसात उनके ये मेल जोड़े को नहीं मिलने देती। "फर्न" का विवाह उन अण्डोंवाले शरीरों के साथ हो जाता, परन्तु बरसात के कारण यह ये मेल विवाह नहीं हो पाता। "फर्न" का स्पर्मोटोज़ोआ उस "मैलिक०" सेब की खटाई पर आकर्षित नहीं होता, वरन् उसको गन्ने की मिठास दरकार रहती है (इसीलिए यह बेमेल जोड़ी मिलते मिलते बरसात के कारण रुक जाती है)। "फर्न" पौधे का अण्डा (रज) भी मिठास वाले पानी का प्रेमी है। अतः ज्ञात होगा कि किस प्रकार प्रत्येक दुलहा अपने अनुकूल दुलहिन पा जाने में सफल कार्य हो रहा है। (अर्थात् खटाई वाला, खटाई वाली को, और मिठास वाला मिठास वाली को ग्रहण कर रहा है)।

पांचवां अनुवाक।

वर्ण-संकरता।

वृक्षों में वर्ण-संकरता भी देखी जाती है, यह कैसे? सुनिये :—

किसी वृक्ष का बीज बोने से नया पौधा उगता है,

प्रेमपूर्वक सम्मिलित हो जाता है। तनिक इस अद्भुत ईश्वरीय लीला का विचार तो करो कि जंगलों में क्या क्या कौतुक होते रहते हैं। भला ये नर, मादा खोजने वाले (मुतलाशी) एक दूसरे को किस प्रकार पा जाते होंगे ? इन दोनों को एकत्र करा देने का कैसा विचित्र और अद्भुत प्रबन्ध उस सर्व शक्तिमान् परमात्मा या सर्व शक्तिमती प्रकृति के द्वारा हो रहा है ? यह बड़े ही अचम्भे की बात है कि इस संगम से उन्हें आनन्द प्राप्त होता है। इस स्पर्मोटोजोआ को Malic acid सेव की खटाई में जैसी लज्जत मिल जाती है वैसी और किसी में नहीं मिलती।

लेब्रोरेटोरी (अन्वेषणालय) में वे छोटे बर्तनों में रख दिये जाते हैं जिन में सेववाली खटाई (मैलिक एसिड) रहती है। अतः यह जांच हो गई है कि उन अण्डाकार शरीरों (रज सदृश) को भी यह खटाई बहुत लज्जतदार और पसंद होती है। ये बातें सून-सान जंगलों में बहुत अधिकता के साथ देखी जा रही हैं। वहां ये अण्डे और वे स्पर्मोटोज़ार्ये आपस में मिल जाते

† मानुषी संतान उत्पत्ति की प्रक्रिया भी यही है कि पुरुष के वीर्य का स्पर्मोटोज़ोआ स्त्री के रज (जो अंडे की शक्ल का अत्यंत छोटा होता है) के साथ मिल कर एक शरीर बन जाता है और तब गर्भाशय में प्रविष्ट होता है।

(मंगलानंद)

और लज्जत प्राप्त करने की धुन में गरक़ाब रहते हैं। लेकिन बरसात उनके ये मेल जोड़े को नहीं मिलने देती। "फ़र्न" का विवाह उन अण्डोंवाले शरीरों के साथ हो जाता, परन्तु बरसात के कारण यह बे मेल विवाह नहीं हो पाता। "फ़र्न" का स्पर्मोटोज़ोआ उस "मैलिक०" सेब की खटाई पर आकर्षित नहीं होता, वरन् उसको गन्ने की मिठास दरकार रहती है (इसीलिए यह बेमेल जोड़ी मिलते मिलते बरसात के कारण रुक जाती है)। "फ़र्न" पौधे का अण्डा (रज) भी मिठास वाले पानी का प्रेमी है। अतः ज्ञात होगा कि किस प्रकार प्रत्येक दुलहा अपने अनुकूल दुलहिन पा जाने में सफल कार्य हो रहा है। (अर्थात् खटाई वाला, खटाई वाली को, और मिठास वाला मिठास वाली को ग्रहण कर रहा है)।

पाचवां अनुवाक।

वर्ण-संकरता।

वृक्षों में वर्ण-संकरता भी देखी जाती है, यह कैसे? सुनिये :—

किसी वृक्ष का बीज बोने से नया पौधा उगता है,

प्रेमपूर्वक सम्मिलित हो जाता है। तनिक इस अद्भुत ईश्वरीय लीला का विचार तो करो कि जंगलों में क्या क्या कौतुक होते रहते हैं। भला ये नर, मादा खोजने वाले (मुतलाशी) एक दूसरे को किस प्रकार पा जाते होंगे ? इन दोनों को एकत्र करा देने का कैसा विचित्र और अद्भुत प्रबन्ध उस सर्व शक्तिमान् परमात्मा या सर्व शक्तिमती प्रकृति के द्वारा हो रहा है ? यह बड़े ही अचम्भे की बात है कि इस संगम से उन्हें आनन्द प्राप्त होता है। इस स्पर्मेटोज़ोआ को Malic acid सेव की खटाई में जैसी लज़्ज़त मिल जाती है वैसी और किसी में नहीं मिलती।

और सरबत प्राप्त करने की धुन में तय्यार रहते हैं। लेकिन बरसात उनके ये मेल जोड़े को नहीं मिलने देती। "फर्न" का विवाह उन अण्डोंवाले शरीरों के साथ हो जाता, परन्तु बरसात के कारण यह ये मेल विवाह नहीं हो पाता। "फर्न" का स्पर्मोटोज़ोआ उस "मैलिक" तेज की खटाई पर आकर्षित नहीं होता, वरन् उसको गन्ने की मिठास दरकार रहती है (इसीलिए यह बेमेल जोड़ी मिलते मिलते बरसात के कारण रुक जाती है)। "फर्न" पौधे का अण्डा (रज) भी मिठास वाले पानी का प्रेमी है। अतः ज्ञात होगा कि किस प्रकार प्रत्येक दुलहा अपने अनुकूल दुलहिन पा जाने में सफल कार्य हो रहा है। (अर्थात् खटाई वाला, खटाई वाली को, और मिठास वाला मिठास वाली को ग्रहण कर रहा है)।

पाचवां अनुवाक।

वर्ण-संकरता।

वृक्षों में वर्ण-संकरता भी देखी जाती है, पर [illegible] सुनिये :—

किसी वृक्ष का बीज बोने

फिर उसके बीज से आगे की सन्तान चलती है। यह तो सृष्टि नियमानुकूल उत्पत्ति है । परन्तु जो एक पेड़ की क़लम दूसरे पर लगाते हैं वहां वर्ण-सङ्करता देखी जाती है अर्थात् ऐसे कलम लगाये हुये वृक्ष के फल यद्यपि उत्तम और अधिक स्वादिष्ट हो जाते हैं, लेकिन फिर उनके बीज से पौधा नहीं उगता या अगर उगेगा तो इतना कमजोर होगा कि फल उत्तम न दे सकेगा और न उसका बीज आगे की नसल क़ायम रख सकेगा ।

यह प्रक्रिया वृक्षों में ठीक वैसी ही है जैसी पशुओं और मनुष्यों में देखी जाती है । मनुष्य जो बड़े व्यभि-चारी होते हैं उन की सन्तानोत्पादक-शक्ति नष्ट हो जाती है और पशुओं में खच्चर का दृष्टांत प्रत्यक्ष है — यानी गदहा और घोड़ी के बेमेल (वर्णसङ्कर) जोड़े से जो सन्तान पैदा होती है उसको खच्चर कहते हैं, उसकी आगे नस्ल नहीं बढ़ सकती । यही बात संस्कृत साहित्य में कथन की गई है, देखो :—

" स मृत्युमुपगृह्णाति गर्भमश्वतरी यथा ।"

(चाणक्य०)

अर्थ — अश्वतरी (खच्चरी) अगर गर्भ धारण करेगी तो मर जायगी ।

इस चाणक्य-श्लोक के अनुसार यह जाना गया कि

पशुओं में भी वर्ण-सङ्करता का यह परिणाम होता है कि आगे की सन्तति नष्ट हो जाती है ।

जो प्रणाली मनुष्यों और पशुओं में प्रकृति ने चालू करदी है; वही वृक्षों में भी होने से यही मानना पड़ेगा कि वे हमारे सदृश जीवधारी हैं ।

छठवां अनुवाक ।

रिश्ता नाता ।

मिस्टर डी० एच० स्काट साहब अप[illegible] lution of plants (पौधों का विकास) पृष्ठ ९१ पर लिखते हैं कि :—

"विलियम सोनिया William Sonia के फूलों पर जांच की गई तो ज्ञात हुआ कि इन में पुरुष-स्त्री के चिन्ह एक समान ही थे । जैसा कि Bennettites बेनिटाइट में । इन दोनों में भेद यह है कि विलियम सोनिया के फूलों में नर मादा के चिन्ह [illegible] पाये जाते हैं ।"

आगे पृष्ठ २० पर यों

फिर उसके बीज से आगे की सन्तान चलती है। यह तो सृष्टि नियमानुकूल उत्पत्ति है। परन्तु जो एक पेड़ की क़लम दूसरे पर लगाते हैं वहां वर्ण-सकरता देखी जाती है। अर्थात् ऐसे कलम लगाये हुये वृक्ष के फल यद्यपि उत्तम और अधिक स्वादिष्ट हो जाते हैं, लेकिन फिर उनके बीज से पौधा नहीं उगता या अगर उगेगा तो इतना कमजोर होगा कि फल उत्तम न दे सकेगा और न उसका बीज आगे की नसल क़ायम रख सकेगा।

यह प्रक्रिया वृक्षों में ठीक वैसी ही है जैसी पशुओं और मनुष्यों में देखी जाती है। मनुष्य जो बड़े व्यभिचारी होते हैं उन की सन्तानोत्पादक-शक्ति नष्ट हो जाती है और पशुओं में खच्चर का दृष्टांत प्रत्यक्ष है — यानी गदहा और घोड़ी के बेमेल (वर्णसङ्कर) जोड़े से जो सन्तान पैदा होती है उसको खच्चर कहते हैं, उसकी आगे नस्ल नहीं बढ़ सकती। यही बात संस्कृत साहित्य में कथन की गई है, देखो :—

"स मृत्युमुपगृह्णाति गर्भमश्वतरी यथा।"

(चाणक्य०)

अर्थ — अश्वतरी (खच्चरी) अगर गर्भ धारण करेगी तो मर जायगी।

इस चाणक्य-श्लोक के अनुसार यह जाना गया कि

पशुओं में भी वर्ण-सङ्करता का यह परिणाम होता है कि आगे की सन्तति नष्ट हो जाती है।

जो प्रणाली मनुष्यों और पशुओं में प्रकृति ने चालू करदी है; वही वृक्षों में भी होने से यही मानना पड़ेगा कि वे हमारे सदृश जीवधारी हैं।

छठवां अनुवाक।

रिश्ता नाता।

एच० स्काट साहब अपनी पुस्तक Evolution of plants (पौधों का विकास) पृष्ठ ९१ पर लिखते हैं कि :—

"विलियम सोनिया William Sonia के फूलों पर जांच की गई तो ज्ञात हुआ कि इन में पुरुष-स्त्री के चिन्ह एक समान ही थे। जैसे कि Bennettites बेनिटाइट में। इन दोनों में भेद यह है कि विलियम सोनिया के फूलों में नर मादा के चिन्ह बहुत स्पष्ट हैं।"

आगे पृष्ठ २० पर यों कहते हैं—

"पौधों के जीवधारी होने का विषय प्रायः २०० वर्षों से चालू है और इस बारे में बहुत भारी खोजें हुई हैं। यह भी पता लगा है कि वृक्षों में रिश्ता नाता भी रहता है और प्राकृतिक विभाग उन में सिद्ध हो रहा है। अर्थात् पौधों के परिवार (फ़ैमिली) होते हैं। विकासवाद (इवोल्यूशन Evolution) वालों की बात पर अगर विश्वास किया जाय तो मानना पड़ेगा कि जिस प्रकार मनुष्यों में एक परिवार के अनेक सभ्य होते हैं उसी प्रकार पौधों के परिवारों में भी समझो। वे दूसरों की अपेक्षा अपने परिवार से घना सम्बन्ध रखते हैं। फिर पौधों में जातियां भी होती हैं और एक जाति वाले दूसरी जाति की अपेक्षा अपनी जाति वालों के साथ अधिक सम्बन्ध रखते हैं।

पौधों के जीवधारी होने का एक यह भारी सबूत है कि एक झुण्ड (ऊंचे दरजे) के पूर्वज दूसरे झुंड (नीचे दरजे) के सभ्यों (मेम्बरों) के साथ कुछ न कुछ थोड़ी बहुत समानता रखते हैं।

फोसिल (Fossil) * पौधे कुछ बहुत प्रख्यात नहीं हैं

---

१ इस शब्द का अर्थ डिकशनरी में यों है:—

Petrified vegetable or animal remains dug out of the earth, organic relics अर्थात् जम गये हुए वनस्पति या पशुओं के शरीरों के अवशेष भाग जो भूमि में से खोद कर निकाले गये हों या खनिज ऐतिहासिक सामान। (मं०)

"पौधों के जीवधारी होने का विषय प्रायः २०० वर्षों से चालू है और इस बारे में बहुत भारी खोजें हुई हैं। यह भी पता लगा है कि वृक्षों में रिश्ता नाता भी रहता है और प्राकृतिक विभाग उन में सिद्ध हो रहा है। अर्थात् पौधों के परिवार (फ़ेमिली) होते हैं। विकासवाद (इवोल्यूशन Evolution) वालों की बात पर अगर विश्वास किया जाय तो मानना पड़ेगा कि जिस प्रकार मनुष्यों में एक परिवार के अनेक सभ्य होते हैं उसी प्रकार पौधों के परिवारों में भी समझो। वे दूसरों की अपेक्षा अपने परिवार से घना सम्बन्ध रखते हैं। फिर पौधों में जातियां भी होती हैं और एक जाति वाले दूसरी जाति की अपेक्षा अपनी जाति वालों के साथ अधिक सम्बन्ध रखते हैं।

पौधों के जीवधारी होने का एक यह भारी सबूत है कि एक झुण्ड (ऊंचे दरजे) के पूर्वज दूसरे झुंड (नीचे दरजे) के सभ्यों (मेम्बरों) के साथ कुछ न कुछ थोड़ी बहुत समानता रखते हैं।

फोसिल (Fossil)* पौधे कुछ बहुत प्रख्यात नहीं हैं

१ इस शब्द का अर्थ डिकशनरी में यों है:—

Petrified vegetable or animal remains dug out of the earth, organic relics अर्थात जम गये हुए वनस्पति या पशुओं के शरीरों के अवशेष भाग जो भूमि में से खोद कर निकाले गये हों या खनिज ऐतिहासिक सामान। (मं०)

"पौधों के जीवधारी होने का विषय प्रायः २०० वर्षों से चालू है और इस बारे में बहुत भारी खोजें हुई हैं। यह भी पता लगा है कि वृक्षों में रिश्ता नाता भी रहता है और प्राकृतिक विभाग उन में सिद्ध हो रहा है। अर्थात् पौधों के परिवार (फ़ैमिली) होते हैं। विकासवाद (इवोल्यूशन Evolution) वालों की बात पर अगर विश्वास किया जाय तो मानना पड़ेगा कि जिस प्रकार मनुष्यों में एक परिवार के अनेक सभ्य होते हैं उसी प्रकार पौधों के परिवारों में भी समझो। वे दूसरों की अपेक्षा अपने परिवार से घना सम्बन्ध रखते हैं। फिर पौधों में जातियां भी होती हैं और एक जाति वाले दूसरी जाति की अपेक्षा अपनी जाति वालों के साथ अधिक सम्बन्ध रखते हैं।

पौधों के जीवधारी होने का एक यह भारी सबूत है कि एक झुण्ड (ऊंचे दरजे) के पूर्वज दूसरे झुंड (नीचे दरजे) के सभ्यों (मेम्बरों) के साथ कुछ न कुछ थोड़ी बहुत समानता रखते हैं।

फोसिल (Fossil)* पौधे कुछ बहुत प्रख्यात नहीं हैं

१ इस शब्द का अर्थ डिकशनरी में यों है:—

Petrified vegetable or animal remains dug out of the earth, organic relics अर्थात जम गये हुए वनस्पति या पशुओं के शरीरों के अवशेष भाग जो भूमि में से खोद कर निकाले गये हों या खनिज ऐतिहासिक सामान। (मं०)

"पौधों के जीवधारी होने का विषय प्रायः २०० वर्षों से चालू है और इस बारे में बहुत भारी खोजें हुई हैं। यह भी पता लगा है कि वृक्षों में रिश्ता नाता भी रहता है और प्राकृतिक विभाग उन में सिद्ध हो रहा है। अर्थात् पौधों के परिवार (फ़ैमिली) होते हैं। विकासवाद (इवोल्यूशन Evolution) वालों की बात पर अगर विश्वास किया जाय तो मानना पड़ेगा कि जिस प्रकार मनुष्यों में एक परिवार के अनेक सभ्य होते हैं उसी प्रकार पौधों के परिवारों में भी समझो। वे दूसरों की अपेक्षा अपने परिवार से घना सम्बन्ध रखते हैं। फिर पौधों में जातियां भी होती हैं और एक जाति वाले दूसरी जाति की अपेक्षा अपनी जाति वालों के साथ अधिक सम्बन्ध रखते हैं।

पौधों के जीवधारी होने का एक यह भारी सबूत है कि एक झुण्ड (ऊंचे दरजे) के पूर्वज दूसरे झुंड (नीचे दरजे) के सभ्यों (मेम्बरों) के साथ कुछ न कुछ थोड़ी बहुत समानता रखते हैं।

फोसिल (Fossil) * पौधे कुछ बहुत प्रख्यात नहीं हैं

१ इस शब्द का अर्थ डिकशनरी में यों है:—

Petrified vegetable or animal remains dug out of the earth, organic relics अर्थात जम गये हुए वनस्पति या पशुओं के शरीरों के अवशेष भाग जो भूमि में से खोद कर निकाले गये हों या खनिज ऐतिहासिक सामान।

(सं०)

ार तौ भी ऐतिहासिक पत्रों के परमोपयोगी होने के विचार
े इनकी तुलना पशु—संसार के साथ की जासकेगी।

यद्यपि पौधों मे हड्डी या तत्सदृश कोई चीज नहीं होती, ाथापि इस फोसिल पौधे में यह विशेषता है कि इस में अपने अन्तरीय अवयवों की रक्षा के लिये काफी मजबूत छाल या हड्डी रहती है। और वह दूसरे भी ऐसे सामान अपने शरीर में रखता है कि अपने शरीर को खूब सुरक्षित बनाये रह सकता है।

तेरहवां अध्याय।

वृक्ष ज्ञान रखता है।

पहला अनुवाक।

—:०:—

हमारे विपक्षी महाशयगण कहा करते हैं कि अ
वृक्ष जीवधारी है तो उसमें जीवात्मा के लक्षण बतलाओ
वैशेषिक दर्शन में जीव के लक्षण इस प्रकार लिखे
हैं कि:—

"इच्छाद्वेषप्रयत्नसुखदुःखज्ञानमात्मनो लिंगम् ॥ १ ॥

अर्थ—जीवात्मा के चिन्ह (या लक्षण) इच्छा,
प्रयत्न, सुख, दुःख और ज्ञान है। अतः यह बातें जि
पाई जांय उनको जीवधारी कह सकते हैं, क्या वृक्ष
ये बातें हैं ?

हम अब इसी बात का विचार करते हैं। प्रथम
अध्याय में "ज्ञान" पर प्रकाश डालते हैं, अगले
अध्यायों में शेष बातों का भी विचार करेंगे।

प्रो० फ्रांस साहब अपनी पुस्तक 'पौधों की मानी
दशा' में लिखते हैं कि:—

"वृक्ष के अवयव में सब से अधिक जीवधारी होने

के प्रमाण उसकी जड़ प्रगट करती है, जो वस्तुतः छोटे छोटे कीड़ों के सदृश होती है और यही (जड़ों का समूह) उसका दिमाग है।

जड़ों से ही वृक्ष पानी सोखता है, आकर्षण (Gravity) को धारण करता है, पानी की खोज करता है, ऊपर को चढ़ाता है, और प्रकाश से दूर भागता है। क्या इन सब प्रभावों—आकर्षण, पानी, मट्टी, प्रकाश, आदि—को ज्ञान बिना ऐसा कर सकता था ? कदापि नहीं।

डार्विन ने भी इन्हीं आश्चर्यजनक बातों को दर्शाते इनमें मस्तिष्क (ज्ञान-भण्डार) का विद्यमान होना मान लिया है। वह इन्हीं के द्वारा अपना खाद्य द्रव्य ग्रहण करता हुआ स्वाद को प्राप्त करता है। देखो कैसे आश्चर्य की बात है कि जिस जगह की पृथिवी सूखी होती है (रस नहीं रहता) वहां से वृक्ष की जड़ें अपना मुंह फेर लेती हैं और जिधर तर भूमि होती है उसी ओर झुक जाती हैं और उसी तर (रस-युक्त) पृथिवी में जाके फलती फूलती हैं*। इसके सिवाय वृक्षों की जड़ पृथिवी में नीचे नीचे धंसती जाती हैं। अगर उनमें जीव

* किन्तु जहां नमी नहीं मिलती वहां बेचारे पौधे कुम्हला कर मर जाते हैं, ठीक जिस प्रकार मनुष्य को भी आहार न मिले तो मर जाता है। (मंगलानंद)।

न होता और दिमाग़ी शक्ति न होती तो वे ऐसा क्यों कर सकते। क्योंकि जीवधारी लोग ही यह जानते हैं कि किस प्रकार प्रत्येक वस्तु को तोड़ मरोड़ या घुमाय फिराय कर अपने अनुकूल बनाना होता है अतः वृक्ष की जड़ें भी पृथिवी को तोड़ फोड़ कर धर से रस मिलता है उधर फैल जाती हैं।

केवल इतनाही नहीं बल्कि इससे भी बढ़कर वन का प्रमाण इस बात से मिलता है कि वे अप बल जड़ों से भी प्रयत्न द्वारा अपने आवश्यकतानुसार* कार्य करालिया करते हैं। अर्थात् जहां कहीं कोई उनके मार्ग में आजाती है (जैसे पत्थर आदि का पड़ना) जो उनके बाढ़ में बाधक होती है, तो दशा में वे अपनी जड़ों को बड़ी तेजी के साथ बढ़ाते और अपने शत्रु को पीछे डालकर अपने लिये कोई (आगे पीछे) निकाल लेते हैं। अगर उनमें मागी ताकत न होती तो वे भला ये काम कैसे सकते ?

फिर प्रो० फ्रान्स कहते हैं:—

*ठीक जिस प्रकार मनुष्य पर जब कोई प्रहार या आक्षेप करता है में अपने बचाव के लिये भीतर से आत्मिक-शक्ति आ कर द्विगुणा जोश, साहस बढ़ जाता है। (सं०)

"हमें तनिक भी सन्देह नहीं हो सकता कि पौधों में
-शक्ति का आरम्भ उस समय अवश्य प्रतीत होता है
उस पर कोई आघात हो । या जब उस के स्वाद-*
द्रिय (Tontacles) को कुछ चखने के लिये मिल
य या कली कली से फूल खिलने लगें, या पौधा स्वयं
हा होने लगे, या प्रकाश और आकर्षणशक्ति के प्र-
वों से प्रभावित हो, या स्पर्मोटोज़ोआ (Spermotozoa)
स्वाद का पता लग जाय ।

ये सारी बातें असम्भव होजायंगी, अगर पौधों में
दे और विश्राम (मिहनत करना और थक कर सुस्ताना
राम करना) विद्यमान न हो (जो दिमागी शक्ति के
ना अनुभव नहीं किया जासकता) जिस प्रकार मनुष्य
र पशु की दशा है, उसी प्रकार की अवस्था वृक्षों की भी
बारे में है कि उनके इन्द्रिय-ज्ञान को किसी नशे या
हाने वाली वस्तु के द्वारा नष्ट कर दिया जासकता है
लोरोफार्म सुंघाने से) ।

---

* वृक्ष की एक एक पत्ती में यह स्वाद-शक्ति मौजूद है जैसा कि अन्यत्र
गया है । (सं०)

दूसरा अनुवाक।

वृत्तों में मस्तिष्क (बुद्धि-भण्डार) रहने की ए
बड़ी ही उत्तम युक्ति प्रोफ़ेसर फ़्रांस यह बतलाते हैं :—

"वृत्त वर्षा काल के भविष्य-ज्ञाता भी पाये जाते हैं
अर्थात् वर्षा होने से पूर्व उन्हें ,यह पता लग जाता है कि
पानी बरसने वाला है । क्योंकि उस समय पर वृत्तों में
परिवर्त्तन देखा जाता है, और वे रंज के साथ अपने फूलों
के (cups) पंखड़ियों को बंद कर लेते हैं ।......
... ... लाजवन्ती का पौधा बड़ा सचेत (sensitive)
देखा जाता है । और कुछ विद्वानों का यह मत है कि
वह वर्षा के आने का पता अपनी पत्तियां हिला हिला कर
दे देता है ।"

पाठकगण ! विचार कीजिए कि अगर वृत्त में मस्तिष्क
और बुद्धि न होती तो भला वे भविष्य में वर्षा होने
होने का अनुमान कैसे कर सकते ?

आगे और भी प्रोफ़ेसर फ़्रांस यों कथन करते हैं :

"भला जो ! जरा पानी में कमल तथा ऐसे ही
पौधों को तो देखो, जिनकी ज़ड़ें तली में नहीं होतीं कि
पानी में ही तैरती रहती हैं; परन्तु क्या मजाल कि

आपस में एक दूसरे को छू भी लें !!! ऐसा कदापि नहीं होता ; क्या यह थोड़ी बात है, और क्या यह उनकी (Instinct) पाशविक बुद्धि ही का चमत्कार नहीं है ? जो उनकी जड़ों से मानों कह देता है कि "ख़बरदार!" , तुम दूसरे की जड़ को मत छूना।"

अवश्य ही ज्ञान के बिना ये बातें असम्भव हैं, अतः वृक्ष में "ज्ञान" मौजूद है।

तीसरा अनुवाक।

वृक्षों में "ज्ञान" की विद्यमानता पर प्रो० गैम्बल साहब की बात भी कान देने योग्य है। आप ने अपनी पुस्तक "Animal World" (पशु-संसार) के ६ वें अध्याय में यों वर्णन किया है:—

"पशुओं तथा वृक्षों दोनों में सञ्चालन शक्ति तो समान ही है। यह शक्ति उन में तब बढ़ जाती है कि जब वे किसी कष्ट, तकलीफ़ या भय में पड़ जाते हैं। क्योंकि तब ही तो इस बात की आवश्यकता होती है कि कुछ बुद्धि intelligence लड़ावें कि भय को दूर भगाया जाय। प्रायः छोटी आयु वालों (छोटे पौधों) में यह शक्ति विशेष पाई जाती है (यही उन में ज्ञान का होना समझो)।

वृक्ष में जीव है १/१३।

चौथा अनुवाक।

ों के ज्ञानयुक्त होने की एक यह प्रबल युक्ति
अगर दो भिन्न भिन्न स्वभाव वाले पौधों को एक साथ
ले या क्यारी में लगायें तो वे अपने अपने अनुकूल
यों को ही ग्रहण करेंगे। दूसरी प्रतिकूल वस्तु का
र देंगे। जैसे अगर मिरचा और गन्ना इन दोनों
कृति वाले पौधों को एक साथ लगाया जाय तो
से मिरचे का पौधा अपने तीक्ष्णता युक्त रसों
गा और मिठास को त्याग देगा *, परन्तु गन्ना
ठास को ग्रहण करेगा और मिरचों के अनुकूल
को त्याग देगा। अब अगर जाँच की खातिर
या जाय कि उस गमले या क्यारी में मिठास वाले
भरमार कर दी जाय तो जहां गन्ना खूब हृष्ट पुष्ट
ां मिरचे का पौधा सूख जायगा। इसी प्रकार
क्ष्णता और कड़ुवाहट बढ़ाने वाले खादों को ही
य तो गन्ना सूख जायगा।

प्रक्रिया से यह स्पष्ट ज्ञात हो रहा है कि वृक्षों में
मान है। वे यह भली प्रकार जान लेते हैं कि
सा खाद्य द्रव्य मेरे अनुकूल है और क्या क्या प्रतिकूल।

मिरचे का पौधा यह ज्ञान रखता है कि मिठास वाला खाद्य मुझे हानिकारक है, अतः वह उससे नहीं ग्रहण करता। ठीक जिस प्रकार सिंह के सामने अगर मांस के सिवाय अन्य पदार्थ (रोटी पूरी मिठाई फल फूल आदि) रख दें, तो वह इन्हें सूंघ कर दूर जा खड़ा होगा। जैसे सिंह जानता है कि मांस के सिवाय अन्य कुछ मेरी खोराक नहीं है, उसी प्रकार मिरचे का पौधा जानता है कि मिठास आदि मेरा खाद्य द्रव्य नहीं है।

निदान इस से वृक्षों में ज्ञान होना स्पष्ट सिद्ध हो रहा है।

पाचवां अनुवाक।

—:o:—

श्री महात्मा जगदीश चन्द्र वसु महाराज, वृक्षों में दिमाग होने के बारे में यों कथन कर रहे हैं:—

"जिन मनुष्यों ने मानस-शास्त्र का अध्ययन किया है, वे जानते हैं कि मनुष्य-शरीर के किसी भाग को आघात पहुंचाया जाय तो स्नायुओं के द्वारा इस आघात का प्रभाव तुरन्त मस्तिष्क तक पहुंचता है। तब उस मनुष्य को उस का अनुभव होता है।

इस आघात के प्रभाव को मस्तिष्क तक पहुंचाने में जो थोड़ा सा समय लगता है उसे latent period (अत्यंत न्यून समय) कहते हैं।

मनुष्य के शरीर में वह प्रति सेकिन्ड ११० फ़ीट के हिसाब से दौड़ता है, परन्तु लाजवन्ती पौधे में उसकी तेज़ी ११८ फ़ीट की देखी गई है। किसी क़िस्म की थकावट से इस वेग में कमी हो जाती है और ताप आदि से वृद्धि भी हो जाती है। .... और ६०° अंश (डिग्री) सेन्टिग्रेड की गरमी पहुंचाने पर लाजवन्ती की मृत्यु हो जाती है।"

इत्यादि बातों से वृक्षों में "ज्ञान" का रहना पाया जाता है।

चौदहवां अध्याय।

वृक्ष इच्छा और प्रयत्न रखता है।

पहला अनुवाक।

वृक्ष में ज्ञान होने का वर्णन गत अध्याय में करने के पश्चात् अब हम इस अध्याय में वृक्षों के इच्छा और प्रयत्न (उद्योग, पुरुषार्थ, परिश्रम, कोशिश, मिहनत) के बारे में विचार करते हैं।

प्रोफेसर गेम्ब्ज साहब 'पशु-संसार' पुस्तक के दूसरे अध्याय पृष्ठ ४३ पर यों लिखते हैं:—

"जीवधारी के लक्षणों में से एक लक्षण प्रयत्न है। वह यद्यपि पौधों में वैसा प्रत्यक्ष नहीं है जैसा कि पशुओं आदि में, परन्तु इससे इनकार नहीं हो सकता कि वृक्षों में प्रयत्न मौजूद अवश्य है। वृक्षों की बात छोड़ कर हम देखते हैं कि कई पशु भी ऐसे हैं जिनमें प्रयत्न या गति (हिलना, डोलना, चलना, फिरना) की कमी या अभाव पाया जाता है। दृष्टान्त में स्पाञ्ज sponge को लेलो कि जिसका वर्णन ऊपर ५ वें अध्याय में आचुका है (वहां और भी अनेक ऐसे जन्तुओं का वर्णन आया है)।

चुपचाप मौन साधे खड़ा रहता है) और जब कोई मच्छड़ या मक्खी आदि उस पौधे के लुभाने वाले मधुर ओस का स्वाद चखने के लिए उसके निकट आने लगती है, तो उसका छोटा सिर इस गुच्छेदार पौधे के प्रभाव से बहुत तेजी के साथ घूमने लगता है, और जब कि उसके छोटे पांव इससे छू जाते हैं, तो वे ऐसे जकड़ जाते हैं कि फिर छूटते ही नहीं — ज्यों ज्यों वह छुड़ाने और स्वयं उस से पृथक् हो जाने की कोशिश करता है त्यों त्यों और भी अधिक जकड़ता जाता है।* और कुछ मिनटों ही में इस बेचारे जन्तु के भाग्य का निपटारा हो जाता है, और अगर कोई बड़ा जीव जन्तु जैसे चींटी, मकड़ी, गुबरीला, या सहस्र पावों वाला जन्तु इत्यादि फंस जाता है, तो उस दशा में the whole leaf rolls around it in order to secure its prey उस पौधे की सारी पत्तियां उसके चारों ओर हिलने लगती हैं कि अपने इस शिकार को खूब जकड़ कर सुरक्षित कर लें जिससे वह किसी प्रकार भागने न पावे)। और अगर दैवयोग से पर-दार सांप

---

* मानों इस मांसाहारी पौधे ने उस अपने शिकार को पकड़ लिया हो। वस्तुतः उसमें ऐसी आकर्षण शक्ति विद्यमान है कि उसका शिकार उसी की ओर झुका चला आता है। सांप की ओर चूहे आदि का विवश झुक जाना प्राकृतिक नियम के अनुसार यहां भी काम हो रहा है। (मंगलानन्द)

या तितली इत्यादि (बड़े जन्तु) इस हिंसक पौधे के पहुंच में आ जाते हैं, तो इसकी दशा बड़ी ही विस्मयजनक बन जाती है। अर्थात् उसकी दूसरी पत्तियां प्रथम उस शिकार को सूंघती हैं। फिर उसके निकट आकर उसको पकड़ लेती हैं। और सारी पत्तियां उस समय इस शिकार को मारने के उद्योग में एक दूसरे की सहायक बन जाती हैं। बस जब इस शिकार को सब पत्तियां मिल कर जकड़ लेती हैं, तो मानों शिकार मार लिया गया; और भोजन की तयारी होने लगती है (वास्तुतः वह शिकार उस समय तक मर नहीं जाता, किन्तु जीवित को ही भोज्य बना डाला जाता है)। यद्यपि बाहर से यह दृश्य (कि कैसे खाया जाता है) कुछ भी नहीं दीखता, परन्तु पता तब लगता है कि जब कुछ दिनों में उस जन्तु के शरीर का कोई भाग शेष नहीं रह जाता, सिवाय हड्डी मात्र के, जो पश्चात् हवा के झोंकों से गिर पड़ती हैं।

Flesh and blood have been sucked away, for the tentacles are not only mouths, but stomachs —

मांस और रुधिर सारा शुष्क कर लिया जाता है, क्योंकि (*tentacles*) (वे अङ्ग, जो पशुओं या जन्तुओं के स्वाद का अनुभव किया करते हैं) केवल मुख ही नहीं

वरन् पेट का भी काम दे देते हैं। ऐसा देखा जाता है कि इन पशु-हिंसक वृक्षों की पत्तियों में वह शक्ति मौजूद रहती है जो प्राणियों के मेदे (आमाशय) में होती समझी है। अर्थात् जिस प्रकार हमारे मुंह में अन्दर से एक प्रकार का पानी या थूक आया करता है, जो खाद्यद्रव्य को चबा कर भीतर ले जाने में सहायक होता है, वह (थूक आदि) इन वृक्षों की पत्तियों में विद्यमान पाया जाता है। इसी से वे अपने शिकार को झटपट चट कर जाते हैं। क्या इस विचित्र पौधे की बातों से वृक्षों में इच्छा और प्रयत्न की विद्यमानता नहीं सिद्ध हो रही है?

तीसरा अनुवाक

आगे फ्रान्स साहब यों कहते हैं:—

इसी तरह के मांसाहारी Carnivorous पौधे प्रायः ५०० से अधिक प्रकार के होंगे। यहांतक कि उनमें से कोई तो ऐसे बड़े पशुओं को भी हड़प कर जाते हैं, जैसे कि गाय इत्यादि। इन हिंसक वृक्षों में से किसी किसी में तो tentacles (स्वाद चखने वाला अवयव) रहता है। कि चक्त "सूर्य के ओस" नामी पौधे में। और

बाजे बाजे पौधों में ऐसा होता है कि पत्तियां उस शिकार को चारों ओर से घेर कर ढंक लेती हैं या उनके रेशें दार बाल बन जाते हैं जैसा कि "मक्खी पकड़ने वाले वृक्ष Drasophyllum" में देखा जाता है।

अनेक सुन्दर सुन्दर सुहावने फूलों के पौधों की भी ऐसी ही दशा पाई जाती है कि ये कीड़ों को पकड़ लेते हैं और उनसे अपना पेट भरते हैं। यद्यपि इन "सूर्य के ओस" आदि पौधों की गति अपने शिकारों को पकड़ने में सुस्त देखी जाती है, तथापि जब आवश्यकता पड़ती है तो उनमें भी तेज़ी के साथ पुरुषार्थ करने की शक्ति कुछ कम नहीं रहा करती।

चौथा अनुवाक

—:०:—

मक्खी फंसाने वाला Fly Trap पौधा।

सब से बढ़कर आश्चर्य-जनक गति sensitiveness अमेरिका के एक "Fly trap" मक्खी फंसाने वाला जाल नामक पौधे में पाई जाती है।

छोटे छोटे उड़ते हुये कीड़े इस पौधे के दोनों ओर नोक-वाली पत्ती पर बैठ जाते हैं और उनके बैठते ही झटपट

पत्तों की दोनों नोकें एक दूसरे से मिलकर उसे अपने अन्दर कैद कर लेती हैं । बस अब वह जन्तु उनसे बाहर नहीं जासकता और हड़प कर लिया जाता है । कहिये पाठकगण क्या अब भी वृक्षों में ज्ञान, इच्छा और प्रयत्न के होने में कुछ सन्देह हो सकता है ? अपनी पत्तियों को वे शिकार पकड़ने के निमित्त बन्द कर लेते हैं, यह इच्छा युक्त प्रयत्न नहीं तो और क्या है ? और ज्ञान बिना ये कार्य कभी सम्पादन होही नहीं सकते । इसके सिवाय पत्तियों पर जीव जन्तु के बैठते ही उनका बन्द हो जाना प्रगट करता है कि उन जन्तुओं के आकर बैठने का ज्ञान उस पौधे को हो जाता है । अगर ऐसा ज्ञान न हो तो पत्तियां बन्द क्यों की जायं । अतः सिद्ध हुआ कि पौधों में ज्ञान और इच्छा-युक्त प्रयत्न मौजूद है ।

पन्द्रहवां अध्याय ।

वृक्ष सुखी दुःखी होता और शत्रु से अपनी रक्षा करता है ।

पहिला अनुवाक ।

—:o:—

(सुख-दुख)

जीवधारी के लक्षणों में ज्ञान, इच्छा, प्रयत्न के पश्चात् सुख-दुख और द्वेष (दुश्मनी, शत्रुता) की गणना है,* अतः इस अध्याय में इन्हीं गुणों पर विचार होगा कि वृक्षों में ये बातें भी विद्यमान हैं या नहीं ?

पुस्तक पौधों की मानसिक दशा में प्रो० फ्रांम साहब यों लिखते हैं:—

हमें सहस्रों ऐसे प्रमाण मिलते रहते हैं जिन से पौधों में इन्द्रिय ज्ञान Sensation का विद्यमान होना पाया जाता है ।

लाजवन्ती में तो काटना, कुचलना और जलाना burning तक देखा जाता है । इस में कई इन्द्रियों की विद्यमानता भासित होती है ।

---

* ये छः अठारह दर्शनों में लिखे हैं,

वृक्षों में जीव है ?/१५ ।

को देखो तो जानोगे कि जैसे अन्य पौधों में जखमी होने पर परिवर्तन देखा जाता है वैसे ही लताओं और मांसाहारी पौधों को (जखमी होने पर) यह दशा होती है कि उनका रोश-ह्रास Sensitiveness बिलकुल जाता रहता है (मूर्च्छा आ जाती है।) निदान वृक्षों में एक Motive Power गति रखने वाली शक्ति (जीवात्मा) विद्यमान है। इस बात को पूरा पूरा जानना हो डार्विन की ऊपरी पुस्तक पढ़ो। वहां की एक बात नीचे उद्धृत किये देते हैं:—

"एक छोटा पौधा अंधियाली कोठरी में लाया गया, जिससे बहुत अधिक *Nyctitropism निकल रहा था अब Cotyledous अँखुवा आप ही आप निकलने लगा अब उस पौधे के मुलायम कोमल बीजों को जो उस समय विद्यमान थे बन्द कर दिया या छिपा दिया गया। फिर एक और छोटा पौधा लाया गया और उसको सूर्य के प्रकाश में रख दिया गया तो उसमें से अँखुये बड़ी उदारता से खिल गये। अब इन दोनों गमलों एक ऐसी कोठरी में रखा गया जहां साधारण प्रकाश न अंधकार था और न सूर्य का घाम था। अब क परिणाम हुआ ? देखो कि खुले हुए अँखुये एकबारगी बन्द होगये और जो बन्द थे वे तुरन्त ही खिल उठे। यह

एक ऐसी जांच है जो अवश्य ही वृक्षों में जीवन होने की साक्षी दे रही है।

तीसरा अनुवाक।

वृक्ष शत्रुओं से अपनी रक्षा करता है।

जीवधारी के अन्य लक्षणों के वृक्षों में सिद्ध हो पर अब द्वेष का वर्णन किया जाता है। अब देखना है कि वे अपनी रक्षा स्वयं शत्रुओं से कर सकते या नहीं?

प्रोफेसर फ्रान्स साहब अपनी पुस्तक "पौधों की मानसिक " में यों कथन कर रहे हैं:—

"पौधे अपने शत्रुओं को भी भगा सकते हैं। इस में लाजवन्ती का वर्णन बड़ा विचित्र है—वह अपनी यां हिला हिला कर उन जीव जन्तुओं को भयभीत देती है, जो इसे खाने के लिये आते हैं। वास्तवः बात बड़े आश्चर्य की सी जान पड़ती है कि पौधे यां हिला हिला कर जीव जन्तुओं को डरा दें !!! ... ...और कुछ इस लाजवन्ती पर ही यह बात निर्भर

चौथा अनुवाक।

ज्ञानादि का प्रादुर्भाव।

प्रो० फ्रान्स साहब अपनी "पौधों की मानसिक दशा" के पृष्ठ २० पर यों कथन करते हैं—

"पौधों में वे सारी बातें मौजूद हैं जो जीवधारी लोगों में होनी सम्भव हैं। जैसे कि गति (हिलना, फूलना), ज्ञान-इन्द्रियों के कार्य, चसम पहुंचाने (पत्ती आदि तोड़ने) पर उन में भारी उत्तेजना (द्वेषबुद्धि) का प्रादुर्भाव होना तथा उन पर कृपा, अनुकम्पा और दया करने से अत्यन्त अधिक कृतज्ञता प्रकाश करना इत्यादि ... ...और अगर हम प्रकृति माता के इन प्यारे बच्चों के पास शान्ति के साथ जांय तो वे मानों हम से यह कह रहे हैं कि "हम दोनों एक ही कारण प्रकृति से उपजे हैं — तुम भी कभी हमारी ही सदृश रहे होवोगे।"*

---

*फ्रान्स साहब का भाव यद्यपि विकास वाद (Evolution से है, परन्तु यह वाक्य हमारे आवागमन को भी सिद्ध कर देता है अर्थात् वृक्ष कहता है कि "तुम भी कभी कर्मानुसार वृक्ष योनि भोगते रहे होवोगे" (महाशानन्द)।

पाचवां अनुवाक।

—:o:—

पौधों के सुखी दुखी होने के बारे में श्री महात्मा जगदीशचन्द्र वसु महाराज का एक वाक्य निम्न प्रकार है:—

"जब पौधों का बढ़ना रुक जाता है तब वह कुम्हलाने लगता है और अन्त में मर जाता है। (हम मनुष्यों का भी तो यही हाल है—वृद्धावस्था में हमारे शरीर के धातुओं की वृद्धि बन्द हो जाने से आगे चल कर मृत्यु होती है)।

"जिस प्रकार मृत्यु समय में मनुष्यों को दुख और कष्ट मिलता है, उसी प्रकार वृक्षों को भी मृत्यु काल में कष्ट प्रतीत होता है।"

महात्मा जगदीश जी ने इन बातों को अपने बनाये यन्त्रों द्वारा भली प्रकार निश्चय कर लिया है। और तो क्या, आपने स्वयं पौधों से मृत्यु समय के कष्टों का हाल लिखवा* लिया है।

---

*कैसे ? इसका उत्तर आगे १९ वीं अध्याय से ज्ञात होगा। (मर्म०)

छठवां अनुवाक।

दुःख घटाने का उपाय।

महात्मा जगदीश चन्द्र जी ने ऐसा उपाय भी खोज निकाला है जिससे वृक्षों के दुःखों को घटाया जा सकता है। यह विषय हम खास उन्हीं के शब्दों में सुनाये देते हैं*:—

"सुख दुःखादि का नियमन करने का सामर्थ्य मनुष्य कैसे प्राप्त कर सकता है, इस बात की खोज करते हुए यह मालूम हुआ कि मज्जा तन्तु को बाह्य-सृष्टि से प्राप्त होने वाला उत्तेजन अथवा उन पर होने वाले आघात बाह्य सृष्टि के पदार्थों के परमाणुओं की संघटना के परिवर्तन पर निर्भर करते हैं। परमाणुओं का संगठन दो प्रकार का होता है। एक तो उत्तेजन बढ़ने वाली और दूसरी उत्तेजना कम करने वाली। जहां इन दोनों के द्वारा उत्तेजन-प्रवाह की शक्ति नियम न करने की बात हमारे हाथ आई कि हम अपनी इच्छा के अनुसार जब चाहें तब सुख दुःख का अनुभव कर सकेंगे।

---

*यह लेख पुस्तक "डाक्टर सर जग० और उन के आविष्कार" में से उद्धृत कियागया है (सङ्क०)।

मैंने (म० जगदीश ने) इस प्रयोग को करके देख लिया है। वनस्पति में निकृष्ट दरजे के मज्जा-तन्तु रहते हैं। उनमें पूर्वोक्त रीति से परमाणुओं की ये दो प्रकार की भिन्न संघटना करके उन के द्वारा वनस्पति में सुख दुःख की भावना उत्पन्न की जा सकती है। अगर वनस्पतियों को सुख कम हुआ तो वह इस तरह बढ़ाया जा सकता है और उनके दुख के समय उनकी संवेदन शक्ति कम करके वह निर्बल किया जा सकता है। वनस्पति और प्राणि-सृष्टि में सादृश्यता है। ऐसी दशा में यह निर्विवाद है कि जो अनुभव वनस्पति-सृष्टि में हुआ है, वही प्राणी-सृष्टि में भी होना चाहिये, और यह अनुभव होता भी है। एक मेंढक के शरीर में क्षोभोत्पादक क्षार द्वारा धनुर्वात के जैसा हिचकी उत्पन्न कर के फिर पूर्वोक्त उपाय से उस हिचकी की तीव्रता कम की जा सकती है। अभिप्राय यह है कि उत्तेजना अथवा चेतना-प्रवाहक मज्जातन्तुओं की सङ्घटना में परिवर्तन करने से उस चेतना के परिणाम में अभीष्ट परिवर्तन कर देना, अब असम्भव नहीं रहा है। अर्थात् अब मनुष्य परिस्थिति अथवा दैव का गुलाम नहीं रह गया है। इस में वह शक्ति है कि प्रतिकूल और दुःखदायक परिस्थिति के परिणाम को टाल कर वह सुख की स्थिति उत्पन्न कर सकता है। जिस प्रकार बिजली का दीपक कल फिरा कर चाहे जब जलाया तथा बुझाया जा सकता है, उसी प्रकार कल फिरा कर सुख दुःख का अनुभव इच्छानुसार किया जा सकता

है। इस के आगे बाह्य-सृष्टि का कुछ भी ज़ोर उस पर नहीं चल सकता।" अवश्य ही इस उद्धरण से बहुत स्पष्ट सिद्ध हो रहा है कि वृक्ष सुख दुःखादि का अनुभव करते हैं। महात्मा जगदीश जी जो तरकीब दुःख-निवारण का बतला रहे हैं उसको सीखने के लिये उन के स्थापित किये कालिज (कलकत्ता) का विद्यार्थी बनना होगा।

यहां एक यह प्रश्न होता है कि वृक्षों के दुःखों को घटाने से पूर्व हमें अपने दुःखों को दूर भगाने का यत्न करना चाहिये। हम इसके उत्तर में यह कह देना उचित समझते हैं कि हमारे प्राचीन ऋषियों ने वह उपाय भी खोज निकाला था, अतः ज्ञात हो कि "वेदान्त" में यह—शक्ति मौजूद है कि जो कोई उस को ध्यान से पढ़े, मनन करे और उन साधनों पर, जो वहां कहे गये हैं, अमल करे तो उसके सारे दुःख दूर हो जांयगे।

यही बात यूरोप के एक धुरन्धर विद्वान श्रीमान् प्रोफ़ेसर मैक्समूलर साहब कह गये हैं, उन के शब्द यों हैं:—

"If philosophy is meant to be a preparation for a happy death, ... I know of no better preparation for it than the Vedanta philosophy—

(See M. Muller's three Lectures on Vedanta Philosophy Page 8)

सोलहवां अध्याय।

वृक्ष में चेतनता के सब लक्षण पाये जाते हैं।

पहला अनुवाक।

ब्रह्मा देशके स्कूलों की एक कृषि सम्बन्धी पुस्तक A hand book of Nature-study के पृष्ठ १५-१६ से कुछ बातें नीचे उद्धृत की जाती हैं :—

१ — इस पुस्तक का प्रथम अध्याय का विषय ही Living Plant "जीवधारी वृक्ष" दिया हुआ है। उस में हम पढ़ते हैं कि —

"तथापि वह वृक्ष का जीवात्मा केवल अपने शरीर को जीवित ही नहीं रखता वरन् वह कार्य-सम्पादन करता है जो हैवानात (पशु, पक्षी, मनुष्य) करने में असमर्थ हैं।

वह बढ़ता है; तना (धड़), पत्तियों, फूलों और फलों को उपजाता है और इन्हें बढ़ाने के लिये उसे खाना और पानी की अत्यन्त आवश्यकता पड़ती है। निदान वह अपना खाद्य द्रव्य स्वयं अपने आप तैयार कर लेता है। निसन्देह यह कार्य (अन्य जीवधारी) पशु आदि कदापि नहीं कर सकते, बरन

वे तो पका पकाया * भोजन खा लेना मात्र खूब जानते हैं।

आगे इसी पुस्तक में लिखा है कि :—

"ठीक जिस प्रकार हमारे शरीर में भिन्न २ कार्यों-निमित्त हाथ पांव तथा दूसरे अङ्ग विद्यमान हैं, उसी प्रकार पौधों के शरीर भी अङ्गों में बंटे हुये हैं, जिनमें से प्रत्येक का कर्तव्य कुछ कुछ जीवन का कार्य-सम्पादन करना है।

दूसरा अनुवाक।

—:o:—
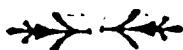
लतायें।

पुस्तक "पौधों की मानसिक दशा के पृष्ठ १३६ पर प्रो फ्रान्स साहब लताओं के बारे में यों कथन करते हैं:—"बहु लोगों ने उस लता को देखा होगा जिस की पत्तियां "चूस ले

*अथात् गाय आदि पशु घास चर लेती हैं। सिंह आ मृगादि को मार कर मांस खा लेते हैं। हम लोग फल, फूल, कन्द मूल लेकर उदरपूर्ति कर लेते हैं। परन्तु वृक्षों को तो ऐसे ब बनाये, पके पकाये पदार्थ नसीब नहीं हैं। उन वेचारों को त कभी हवा में से आक्सिजिन नायट्रोजिन आदि खींचना पड़ता है और कभी पृथ्वी में से क्षार मिठास, स्टार्च, पोटाशियम आ चूसना पड़ता है या कभी पानी अग्नि से अपना खाद्य ग्रहण करन है, इत्यादि (मङ्ग०)।

वाले पांवों से युक्त (Sucles footed leaf) होती हैं, और जिन के द्वारा वे लोहे के सींकचों आदि पर चढ़ जाती हैं। इस लता में नोकीला भाग अन्त में रहता है जिसे वह कहीं भी चुभो कर किसी वस्तु को जकड़ लेती है। यहां तक कि चाहे वह दो टुकड़े हो जाय, परन्तु क्या मजाल कि छुड़ाई जा सके। अब प्रश्न यह है कि ऐसा क्यों कर हो सकता, अगर पौधों में चैतनता न होती ? क्योंकि यह शक्ति उन्हें तभी प्राप्त होती है, जब इसका काम पड़ता है। अजी ! इतना ही क्यों ! हम तो ऐसी २ लतायें देखते हैं जिन में Insect like feet कीड़ों के सदृश पांव होते हैं, जिन के अन्त में तेज पञ्जे भी रहते हैं, और वे उन से किसी भी वस्तु को पकड़ कर उत्तमतापूर्वक लटक जाया करती हैं।

लतायें अपने अभीष्ट वस्तु को ऐसे ज़ोर से जकड़ लेती हैं कि यह बात अन्य जीवधारियों सदृश ही मानी जायगी। केवल भेद यह है कि पौधों की इस शक्ति का नाम Contractability और पशुओं की शक्ति का नाम Stereotropism है।

निदान सच तो यह है कि पशुओं का इन्द्रिय-ज्ञान केवल वृक्षों की उसी दशा की एक उन्नतावस्था मात्र है। क्योंकि अगर अत्यन्त से अत्यन्त छोटे पशुओं (जन्तुओं, पतङ्गों, कीड़े मकोड़ों, का ऊंचे से ऊंचे या बड़े से बड़े वृक्षों के साथ तुलना की जाय तो यही परिणाम निकलेगा कि वृक्षों का निर्जीव होना और

पशुओं का जीवधारी होना जो साधारण दृष्टि से प्रतीत होता है, यह केवल मामूली घटनाओं की परिस्थिति पर निर्भर है। हाँ यह बात अलबत्ता है कि पशुओं में सारी गतियां वृक्षों की अपेक्षा अधिक तीव्रता युक्त हैं।

पुष्पों की गतियों का फ़ोटो (प्रतिबिम्ब) लिया गया और वे Cenematograph सिनेमेटोग्राफ़ में लगाये गये और फिर उन्हें पशुओं की गति के अत्यन्त धीमी आवाज़ के साथ मिलाया गया, तो परिणाम यह निकला कि दोनों की सम तुलना हो गई।

तीसरा अनुवाक ।

—:o:—

आगे पृ० ११५ पर प्रो० फ़्रान्स साहब वृक्षों में जीवात्मा की विद्यमानता का वर्णन इस प्रकार कर रहे हैं :—

"प्रथम अमोबा Amoebae की ओर ध्यान दो स्पाञ्ज Sponge वस्तुत: इन्हीं अमोबियों की एक Colony कलोनी (बस्ती) है और यद्यपि साधारणत: उन में कोई जीवधारी के लक्षण नहीं पाये जाते लेकिन ध्यान से देखें तो उन में चलना फिरना (moving) खाना पीना, फैल जाना या सन्तति बढ़ाना आदि पाया जाता है। जो ऐसी बातें हैं कि उन में जीव का होना सिद्ध कर रही हैं।

फिर जो बात हम इस अमीबा (या स्पान्ज) में पाते हैं वही मोनाड (Monad) में देखते हैं। और जो बातें इन अमीबा और मोनाड के लिये स्वीकार की जाती हैं, उन से फिर Fungus कुकुरमुत्ता में क्यों कर इन्कार हो सकता ? फिर समस्त ऐसे हरे भरे पौधों पर भी—जो फैलते, अंखुआ फोड़ कर उगते, और अपनी सन्तानों से समुद्र, नदियों, सरोवरों आदि को भरपूर कर देते हैं—यही नियम क्यों न लागू किया जाय ? ... ... और जो कवियों ने फूलों के आनन्दित होने, अभिलाषायें प्रकट करने, थकने या दुखी होने तथा वार्तालाप करने आदि की गाथायें वर्णन की हैं, उन पर भी क्यों न ध्यान दिया जाय ? पूर्व विद्वानों ने जीव (soul) को अमर माना है। और साथ ही पौधों में रहने वाले जीवों को भी अमर बतलाया है। ... ... पुस्तक "वृक्ष जीवधारी है" (Soul life of Plants) जो मार्शस और ओकेन (Martius & Oken) या तत्वज्ञानी फेकनर (Fechner) की रची हुई है अवश्य पढ़ने योग्य है।"

फिर प्रोफेसर फ्रान्स पौधों की आन्तरिक गति का वर्णन पृष्ठ ५८ पर इस प्रकार कर रहे हैं —

"पौधों में आन्तरीय गति विद्यमान है, जैसी कि हमारे शरीर में है, परन्तु हम लोगों को इसका ठीक ज्ञान नहीं है।

पौधों के अन्दर रस की धारा बहती* रहती है और इस बात की तो अब हाल में जांच हो गई है कि इस धारा का प्रत्यक्ष वर्ताव होता है कि जब पौधे के शरीर में कुछ जख़म हो जाय या हम उस के फूल पत्तियों को तोड़ लें। उस दशा में दर्द या कष्ट की गति वहां से आरम्भ होकर पौधे के शरीर भर में व्याप जाती है।

अतः निश्चय हुआ कि पौधों में(Sense organs) ज्ञान इन्द्रियां विद्यमान हैं (और फिर जीवधारी क्यों नहीं ?)॥

चौथा अनुवाक।

बिम्ब-प्रतिबिम्ब।

और भी प्रा० फ्रान्स कहते हैं :—

"वनस्पतिशास्त्र के एक भारी ज्ञाता प्रोफेसर नगेली (Nageli) वृक्षों में चेतनता मान रहे हैं। (Psychology) अध्यात्म-विद्या वालों ने पशुओं पर अनेक परीक्षायें कीं और यह निर्णय कर दिया कि ऐसे बहुतेरे जीव जन्तु हैं जिन में दिमागी नसों (Nervous system) का

*ठीक जिस प्रकार हमारे अन्दर रुधिर बहता है (मन्न०)

अभाव पाया जाता है, परन्तु वे उन सारी बातों को प्रकट करते रहते हैं जो किसी जीवधारी में सम्भव हैं।

यह जीवात्मा का सादा प्रयत्न, जो निस्सन्देह मस्तिष्क की सहायता के बिना ही प्रादुर्भूत होता है (reflex) "प्रतिबिम्ब" कहलाता है। इसका आशय समझाने के लिये हम इतना कह देते हैं कि जब मनुष्य आंखे बन्द कर लेता है, उस समय उसकी देखी सुनी वस्तुओं का जो ध्यान मन में आता है (बहुधा देखी हुई वस्तुयें आँखों के सामने प्रत्यक्ष सी प्रतीत होती हैं) उसी को "प्रतिबिम्ब" कहते हैं। ... ... वृक्षों में इसी प्रकार का प्रतिबिम्ब पाया जाता है — उन का प्रकाश की ओर आकर्षित होना, या जड़ों का जलगामी होने पर झुक जाना—आदि इस सिद्धान्त के पक्ष प्रमाण हैं। इस प्रकार वृक्षों में जीवात्मा का कार्य देखने से उन में उस की विद्यमानता माननी पड़ती है।

पाचवां अनुवाक।

फिर भी प्रो० फ्रान्स कहते हैं —

"कई वनस्पतिशास्त्र के ज्ञाता महाशय गण इसी परिणाम पर पहुंचे हैं कि वृक्षों में अवश्य जीवात्मा (soul) विद्यमान है।

इस बारे में प्रो० कर्नर (Kerner) साहब बहुत प्रबलता पूर्वक कथन कर रहे हैं तथा अपने पक्ष की पुष्टि में प्रमाण भी बहुत काफ़ी दे रहे हैं। वे वृक्षों में (Division of labour) कार्य विवरण का विभाजित होना बतलाते हैं। यह ऐसी बात है जो बिना परस्पर के मेल मिलाप और एक दूसरे से परिवर्तन करने की प्रणाली के नहीं हो सकती। पौधे के सारे अवयव एक ही कार्य में नहीं लगे रहते, किन्तु एक कार्य को एक कर लेता है; तो दूसरे को दूसरा। जैसे प्रकाश का यह प्रभाव होता है कि पत्तियां तो इस की ओर आकर्षित हो जाती हैं परन्तु जड़ पृथक हटता है। यह प्रणाली "कार्य विभाग" हम मनुष्यों में पूर्ण रूप से विद्यमान है। अवश्य ही हमारा दिमाग़ बिना सारे अङ्गों की सहायता के कुछ नहीं कर सकता। यही बात वृक्षों में भी समझी जानी चाहिये। अतः हम चाहें इसी को (Instinct.) पाशविक बुद्धि (हैवानी अक़्ल) कहें या "जीवात्मा" कह दें।

... ...

छटवां अनुवाक।

इमी पुस्तक के पृष्ठ २१ पर प्रोफ़ेसर फ़्रान्स कहते हैं कि —

"वे सब कैसे विचित्र प्रकार से नाचते हैं, आराम करते

हैं, दूसरों के साथ मेल करते हैं। इन (छोटे जीवों) के परिवार प्रायः हरे रङ्ग के पानी के धागे के रूप में फैल जाते हैं, और तब छोटे २ गोलाकार रूप बना लेते हैं; फिर साधारण पत्तियों का रूप धारण करते हैं। और आश्चर्य तो यह है कि कैसे वे अपने जीवन के कार्यों का सम्पादन करते हैं—अपने गुज़रान की सामग्री को खींच लेते हैं, उस को हज़म करते हैं, श्वास लेते हैं, अपने अङ्गों को फैलाते हैं, और पानी से पृथ्वी सम्बन्धी जीवन को प्राप्त कर लेते हैं, इत्यादि २ बातें ऐसी हैं जिन का पानी के एक एक बूंद में पाया जाना निस्सन्देह उस में एक छोटे पौधे के अंकुर का पता देता है। फिर देखो कली के भीतर के करामात तो बड़े ही अजीब हैं, और पौधों के अन्दर नसों का होना भी आश्चर्य में डालता है। फिर उन की धीमी गति और हिलना झूलना आदि भी विचारणीय ही है। और ख्याल रखना चाहिये कि पौधे भी अपने सारे शरीर को बहुत आसानी से भली प्रकार आनन्द के साथ हिलाते, डुलाते, या झुमाते हैं। ठीक जिस प्रकार कोई पूर्ण ज्ञानी पशु* कर सकता, परन्तु वे ऐसा बहुत धीरे धीरे ही किया करते हैं।

---

*अर्थात् जैसे पशु या हम मनुष्य लोग अपने शरीर के अंगों को हिलाते हैं या अंकड़ाई जमुहाई आदि लेते हैं, इत्यादि इसी प्रकार वे वृक्ष भी करते हैं, वे केवल चल फिर नहीं सकते
(मङ्गलानन्द।)

"फिर यह भी विचार करो कि उन की जड़ें पृथ्वी को फोड़ कर अन्दर घुसती हैं, कलियां और टहनियां अपने तङ्ग घेरे में भी लहराती रहती हैं, पत्तियों और फूलों में समयानुसार परिवर्त्तन होते रहते हैं, लताओं की टहनियां कैसे चक्राकार रूप धारण करती हुई अपना आश्रय पकड़ लेती हैं इत्यादि २ बातों के होने पर भी कुछ मनुष्य इन वृक्षों को जीव-रहित जड़ पदार्थ मान रहे हैं, क्योंकि उन्होंने गम्भीर बिचार नहीं किया और विषय की छानबीन करने के लिए बुद्धि नहीं लगाई।*

सातवां अनुवाक।

पौधों में लगभग मानुषी गुण पाये जाते हैं।

उक्त शीर्षक (Almost Human Plants) लेख बम्बई क्रानिकल ता० ४ अगस्त १६२० ई० के अंक में छपा था, उस का सारांश इस प्रकार है:—

*परन्तु हमारे कुछ आर्य सामाजिक महाशय गण तो इस भ्रम में पड़ गये कि अगर वृक्ष को जीवधारी मानेंगे तो मांसाहारी लोग यह आक्षेप करने लग जायंगे कि निरामिष-भोजी लोगों पर भी उन्हीं के सदृश हिंसा का पाप लगेगा। हम इस भ्रम को अन्तिम खण्ड में निवारण कर देंगे (मङ्ग०)।

"जब मिस्टर बर्नार्ड शा ने सर जगदीश चन्द्र बोस के लेबोरेटोरी (अन्वेषणालय) को मेडावेल में देखा तो वे खिन्न हृदय हो गये, क्योंकि एक निरामिषभोजी (वेजिटेरियन) यह दृश्य कैसे देख सकता है कि गोभी का एक टुकड़ा उबाला जाय जिस से वह मौत के मुंह में जा पड़े। प्रायः अन्य निरामिषभोजियों को भी इसी प्रकार का खेद प्राप्त होगा।* ... ... श्री बोस जी ने २५०० पृष्ठों के भारी ग्रन्थों में यह दर्शाया है कि पौधों में नस नाड़ियों की गति मौजूद है। स्मरण-शक्ति, राग, द्वेष, और जिन्दगी मौत आदि भी मौजूद हैं। इतना ही नहीं बल्कि उन में गरमी, प्रकाश, और विद्युत ज्ञान भी विद्यमान है। ये ऐसी बातें हैं जिन से हम उन्हें मानुषी-छाया ही कह सकते हैं।

हरे मटरों में विद्युत्।

हरे मटर के मृत्यु से होने वाली पीड़ा से कौन इनकार कर सकता है? क्यों कि जब मटर मरता है तो कांपता या तड़पता है। महात्मा बोस कहते हैं—

*इन के इस प्रकार के भ्रम, शङ्का या धर्मसङ्कट के निवारण के उपाय हम इस पुस्तक के अन्तिम खण्ड में बतलायेंगे (मङ्ग०)

If five hundred peas were arranged in series the electric pressure would be five hundred volts, which may cause even electrocution of unsuspecting victims.—

अर्थ—अगर ५०० मटरों को एक पंक्ति में रक्खा जाय तो बिजली का धका ५०० "वाल्ट" (Volts) में होगा, जिस का परिणाम यह होगा कि उन सब पर इस का प्रभाव पड़ेगा।

ऐसा प्रतीत होता है कि पौधे हमारे ही सदृश गति (दिल) की धड़कन रखते हैं। और यह भी अचम्भे की बात है कि वृक्ष की नाड़ियों पर विष का प्रभाव वैसा ही पड़ता है जैसा कि मनुष्यों पर— बल्कि पौधों को मनुष्यों से भी अधिक लाभ प्राप्त है। जैसे कि पौधे की बाढ़ जब समाप्त हो जाती है, तो उस को फिर से हम बिजली की सहायता से तरो ताज़ा बना लेते हैं।"

इत्यादि वाक्यों से यह स्पष्ट हो रहा है कि वृक्षों में मनुष्यों, पशु पक्षियों ही के सदृश चेतनता के सब लक्षण पाये जाते हैं।

सत्रहवां अध्याय ।

वृक्ष की आयु और मृत्यु होती है ।

पाहिला अनुवाक ।

—:o:—

वनस्पति-विद्या (Botany) की एक स्कूली पुस्तक Observation Lessons Reader no 3 के उर्दू अनुवाद में लेखा है: —

इमली के पेड़ की आयु २०० वर्ष है।
नींब के „ „ „ ७० वर्ष है।

इस से यह ज्ञात हुआ कि वृक्ष भी हमारे ही सदृश चेतन हैं। जिस प्रकार अन्य जीवधारियों की आयु नियत रहती है, उसी प्रकार वृक्षों की आयु भी नियत होने से हमारी इन के साथ समानता है। देखो मनुष्य, पशु, पक्षियों की आयु का अनुमान निम्न लिखित चक्र से ज्ञात होगा :—

संख्या	नाम	आयु	विशेष
१	मनुष्य	१००	वेदों में कहा है "जीवेम शरदः शतम"
२	कुत्ता	२०	
३	खरगोश	८	

४	गाय	४०	
५	घोड़ा	५०	
६	कछुवा	१५०	
७	हाथी	२०० से ४००	
८	सांप	१०० से १०००	जो पङ्ख वाले सांप होते हैं या जो भूमि के अन्दर पत्थरादि में रहते हैं बहुत आयु पा सकते हैं*
९	कौवा	२०० वर्ष	यह लोकप्रसिद्ध है, परन्तु
१०	गिद्ध	४०० ,,	इसके ठीक होने का कोई प्रमाण नहीं है।

जैसे इन पशुओं आदि की आयु नियत है (अर्थात् अगर कोई वध न करे और खान पानादि व्यवहार ठीक २ चला जाय तो इतनी इतनी आयु तक वे जीवित रह सकेंगे) उसी प्रकार वृत्तों का भी हाल है। गेहूं, चना, जौ आदि की आयु छः मास की है। मकई, ज्वार, बाजरा, उड़द, मूंग आदि की चार मास, सांवाँ काकुन आदि की तीन मास। गेंदा, गुलहज़ारा

*सांप जो केवल वायु भक्षण पर ही आधार रखते हैं अधिक काल तक जीवित रहते हैं। मनुष्य भी जो योगी वायु-भक्षी होते हैं १०० से ऊपर ४०० वर्ष पर्यन्त जीवित रह सकते हैं। (मङ्ग०)

आदि फूल पौधों की छः मास, अरहर, कपास, गन्ना आदि की एक साल के लगभग। केला गन्ना आदि की तीन वर्ष। आम जामुन इत्यादि बड़े बड़े पेड़ों की सौ सौ वर्ष या और अधिक। बरगद के पेड़ की आयु १००० वर्ष की सुनी जाती है। इत्यादि इत्यादि।

अगर वृक्ष जड़ होते तो जैसे जड़ पदार्थों की कोई आयु नहीं हुआ करती वैसे ही वृक्षों का भी कुछ ठीक ठिकाना न रहता।

पुस्तक "पौधों की मानसिक दशा" के पृष्ठ २३ पर प्रोफ़ेसर फ्लून्स साहब कहते हैं कि Flora "फ़्लोरा" नाम के पौधों का समूह १००० वर्षों से भी अधिक आयु तक जीवित रहता है।

दूसरा अनुवाक।

पुस्तक वैज्ञानिक खेती प्रथम भाग में श्रीमती हेमन्त कुमारी देवी जी यों लिखती हैं—

"जिस तरह खोराक न पाकर और जीवधारियों का शरीर सूख जाता है, उसी तरह वृक्ष भी सूख कर दुबले हो जाते हैं और मर जाते हैं।"

(फिर देखो पृष्ठ ४५ पर)—
"ताज़ी सरसों की खली पेड़ की जड़ में डालने से उस को तेज़ी के मारे कभी कभी पेड़ के सूख जाने का डर रहता है।"

तीसरा अनुवाक।

विष-प्रयोग।

श्री महात्मा जगदीश चन्द्र जी ने तार के पौधे पर यह परीक्षा की है कि विष या कोई नशे वाली वस्तु डाल दी गई तो वैसा ही फल हुआ जैसा कि किसी जीवधारी में विष देने पर इस को एक दम मूर्च्छा होने लगी और इस के नस नाड़ियों की गति मृत्यु सदृश बन्द होने लग गई। इसी प्रकार यह पौधा बिजली के धक्कों से भी मर जाता है अर्थात् नाड़ियों के डूब जाने से उस का अन्त काल हो जाता है।

निदान् यह प्रत्यक्ष हो रहा है कि इस पौधे में जीवप्रद वस्तुओं के प्रयोग से इस के नस नाड़ियों में उन्नति पाई जाती है, कमज़ोर करने वाला वस्तुओं से नाड़ी की

गल मुक्त हो जाती है और विष-प्रयोग से तो मृत्यु ही हो जाती है।"

यह तो विष प्रयोग की दशा हुई, परन्तु वृक्ष अपनी स्वाभाविक मौत से भी मर जाते हैं, प्रायः आपने ठूंठ दरख्तों को देखा होगा, वे तो अवश्य स्वाभाविक मौत से मरे हुये हैं।

यतः आयु और मृत्यु जीवधारी में ही होना सम्भव है इस लिये वृक्ष को अब कोई जीवरहित नहीं कह सकता।

अठारहवां अध्याय।

—:?:—

म० ज० चन्द्र वसुका परिचय।

पहिला—अनुवाक।

—:o:—

इन सब से बढ़ कर एक बात पाठकों के ध्यान योग्य यह है कि जहां प्राचीन आर्यावर्त ने भली प्रकार संर में यह विज्ञान फैलाया था कि वृक्षों में जीव रहता (जिसे आप आगे पढ़ेंगे) वहां बड़े हर्ष की बात है कि इ जमाने में भी यह गौरव भारत ही को प्राप्त हुआ। उ के एक सपूत ने समस्त यूरोप, अमेरिका के विद्वानों को द करते हुये एक ऐसी बात उन्हीं की युक्तियां के आधार सिद्ध कर दिखाई जो कभी उन पाश्चात्यों की खोपड़ी में आई थी, और वे लोग इस भारतीय आविष्कार के लि सदा हमारे वाधित रहेंगे।

डाक्टर सर जगदीश चन्द्र वसु प्रोफ़ेसर, प्रेसी· डेंसी कालिज, कलकत्ता का नाम विज्ञान-संसार में आज दिन सूर्य-समान प्रकाशमान हो रहा है। उन्होंने यह प्रत्यक्ष सिद्ध कर दिया कि वृक्षों में जीवों की विद्यमानता पाई जाती है।

—:o:—

दूसरा अनुवाक।

माडर्न रिव्यू सं० १०८ दिसम्बर १९१५ पृ० ६६३ पर एक लेख "आविष्कार का इतिहास" छपा है। उस में लिखा है —

"(बोस महाशय की यूरोप-यात्रा से) एक तो यह लाभ हुआ कि विज्ञान-संसार की उन्नति भारतीय सहायता के बिना अधूरी रही जाती थी (जो पूरी हुई) दूसरे पाश्चात्यों ने भारत का गौरव अब और अधिक मान लिया।

... ... अब भारत उन विद्या-केन्द्रों के निकट अपना आसन पाने लगा जो आक्सफोर्ड, कैम्ब्रिज इत्यादि वाले कभी इस की ओर ताकते भी न थे। .. ..

अब अमेरिका की प्रामाणिक विश्वविद्यालयें भी भारत से यह प्रार्थना करने लगी हैं कि वह अपने विद्या रसिक सपूतों को वहां अवश्य भेजा करे।

पाठकगण! क्या आप इसे कोई साधारण बात समझते हैं? जिस आविष्कार (वृक्ष में जीव का साक्षात् दिखला दिया जाना) ने भारत को इस गये बीते समय में भी संसार भर के विज्ञान-वेत्ताओं में ऊंचा आसन प्राप्त करा दिया है और जिस के विषय में हमें यह कहने का

अभिमान प्राप्त है कि चाहे यूरोप अमेरिका ने आज म० बोस जी से यह नया सबक़ पढ़ कर इसे जान पाया हो, पर हम भारतवासियों के लिए यह भी वैसी ही प्राचीन बात है, जैसी अन्य "आत्मा परमात्मा" आदि का ज्ञान। क्या यह आश्चर्य न होगा कि ऐसी दशा में थोड़े से भारतवासी और वे भी "आर्य" नामधारी ऐसे अक़्लमन्द पैदा हो जांय जो संसार भर के नये पुराने विद्वानों के निर्णय पर तनिक भी कान न दें, मानों युक्ति और तर्कवाद के पीछे लट्ठ लिए फिरते हैं।

तीसरा अनुवाक।
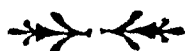
महात्मा वसु के आविष्कारों का वर्णन करने से पूर्व यह उचित है कि पाठकों को उन का कुछ परिचय दिया जाय। परन्तु इस पुस्तक में उन का जीवन-वृत्तान्त वर्णन करने का अवसर नहीं है। इसलिए हम पाठकों से सिफ़ारिश करते हैं कि श्री मुख सम्पत्तिराय भंडारी, इन्दौर की पुस्तक "डा० सर जगदीश चन्द्र वसु और उन के आविष्कार" मंगावें और भारत के ऐसे अनुपम लाल के पवित्र जीवन वृत्तान्तों को विचारपूर्वक पढ़ें।

एक बात यहाँ पर हम इसी पुस्तक में से प्रकट करते । वह यह कि उक्त महात्मा सचमुच प्राचीन काल के ऋषि मुनियों सदृश पूर्ण त्यागी और संसार का उपकार चाहने वाले हैं। जिसका यही सबूत है कि आपने पूर्व काल में बे तार की तारबर्क़ी की विद्या को खोज निकाला था। भारत के एक बड़े वैज्ञानिक श्रीमान् पी० सी० राय महोदय का कथन है कि अगर वसु महाराज उस का पेटेन्ट करा लेते तो करोड़ों रुपये की सम्पत्ति अब तक कमा चुके होते, परन्तु उन्होंने जब देखा कि अन्य लोग इस अन्वेषण में लगे हुए हैं तो यह कार्य उन्हीं के मत्थे छोड़ कर आप अपनी इस धुन में तारक्षाब हुए कि वृक्षों में जीव है या नहीं। इस सम्बन्ध में आप ने पूर्ण सफलता प्राप्त कर ली है, और जो विचित्र और अद्भुत प्रकार के यन्त्रों को आपने निर्माण किया है उन के भी पेटेन्ट कराने का प्रस्ताव लोगों ने किया था, गवर्नमेंट भी अधिकार देने पर राजी थी; परन्तु आपने साफ़ इन्कार कर दिया और सारे संसार को अधिकार दे दिया कि जो चाहे आप की विद्या से स्वयं धन का लाभ उठावे।

इन बातों से अवश्य ही ज्ञात हो जाता है कि हमारे डाक्टर जगदीश चन्द्र जी न केवल प्राचीन भारत का नाम फिर से संसार भर में प्रख्यात कर देने वाले ही हैं, बल्कि

प्राचीन ऋषियों के सदृश ही त्यागमूर्ति और आदर्श परोपकारी भी हैं।

अगले अध्यायों में आप उन के अद्भुत अन्वेषणों का वर्णन पढ़ेंगे।

चौथा अनुवाक ।

यूरोप-यात्रा ।

—:०:—

रायल इन्स्टिट्यूशन लन्दन की ओर से श्री० जगदीश चन्द्र जी को अपने अद्भुत आविष्कारों को दर्शाने के लिए सं० १९५९ वि० में प्रथम बार बुलाया गया था।

तब से आज तक आप कई बार यूरोप अमेरिका जाकर अपने यन्त्रों के विचित्र आविष्कारों से वहां वालों को दंग कर चुके हैं। अतः आप के कार्यों पर वहां के बड़े से बड़े पत्रों में भारी प्रशंसा छापी गई, उनमें से एक को हम यहां उद्धृत करते हैं:—

अमेरिका के सुविख्यात पत्र "साइन्टिफ़िक अमेरिकन" में यों छपा था कि:—

"पौधों के स्वयं लेखन" का आश्चर्य-कारक आविष्कार जो डाक्टर सर वसु महाराज ने किया है, बड़े महत्व का और

बड़ा मनोरञ्जक है। लगातार वैज्ञानिक अन्वेषणों के बाद बसु महोदय ने प्रत्यक्ष वैज्ञानिक प्रयोगों द्वारा यह सिद्ध कर दिया है कि अन्य जीवधारियों की तरह पौधों में भी जीव है। इनमें भी सुख-दुख अनुभव करने की शक्ति है। इन पर भी गर्मी-सर्दी ज़हरीली औषधियों और बिजली के प्रवाह आदि का वैसा ही असर होता है जैसा कि अन्य जीवधारियों पर।

पांचवां अनुवाक।

बम्बई क्रानिकल ता० २४ अगस्त १९२० ई० के अङ्क में एक लेख Almost Human Plants छपा था। इस प्रोफेसर गेड्डो ने महात्मा जगदीशचन्द्र की प्रशंसा इन शब्दों की है:—

"इस महान् भारतीय देवता की जांच पड़तालें ऐसी अद्भुत और उत्तम हैं कि इन को सब लोग समझ सकते हैं, यहां तक कि साधारण वर्ग के पुरुष और स्त्रियां तक आसानी से समझ सकती हैं। उन्होंने एक ऐसा यन्त्र बनाया है कि जिससे पौधों की गति दस करोड़ गुणी (Hundred Million Times) प्रकट हो जाती है। वे उस यन्त्र को एक करोड़ (Ten Millions) शक्ति

गति प्रकाशक यन्त्र।

४—Crescograph —

वृद्धि सूचक यन्त्र।

५—High magnification—Crescograph—

अति उत्कृष्ट वृद्धि सूचक यन्त्र।

दूसरा अनुवाक।

अब हम उक्त पांचों यन्त्रों के कार्यों का वि
सुनाते हैं:—

जो प्रथम "रेसोनेन्ट रिकार्डर" याने प्रति-ध्वनि
शक यन्त्र है उस के द्वारा पौधों की धड़कन की
अपने आप अङ्कित हो जाती है। इस यन्त्र में एक
कांच लगा हुआ है, उसी पर बारीक बारीक लकीरें
जाती हैं। ये लकीरें क्या हैं? पौधों पर जिस प्र
आघात होता है उसी के भाव को ये लकीरें प्रकट क
हैं। प्रयोग के लिये यदि पौधों पर क्लोरोफ़ार्म डा
जाय तो लकीरों का स्वरूप कुछ भिन्न होगा। यदि
पौधे को ठंढे पानी में रख कर प्रयोग किया जाय
लकीरों का स्वरूप कुछ भिन्न होगा। इसी प्रकार गर
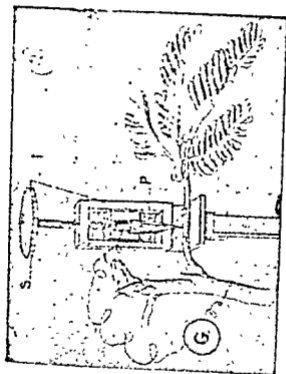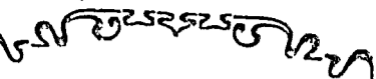
महात्मा जगदीशचन्द्र वसु का एक यंत्र।

(देखो खण्ड १, अध्याय १८. अनुवाक २, पृष्ठ १८७)

ट प्रेस, कानपुर

पानी के प्रयोगों से लकीरों का भाव और ही दिखाई देगा। मतलब यह कि पौधों की भिन्न २ दशाओं के स्वरूप का ज्ञान भिन्न २ प्रकार पाया जाता है। इस से यह स्पष्ट है कि भिन्न २ अवस्थाओं का प्रभाव भिन्न २ पड़ने ही से उस यंत्र के काले कांच पर भिन्न २ प्रकार की लकीरें होती हैं। यह यंत्र बिजली की शक्ति से चलाया जाता है। इस यंत्र के द्वारा पौधों की स्नायविक धड़कन अपने आप अङ्कित हो जाती है, या यों कहिये कि पौधा कलम पकड़ कर इस कांच पर अपनी हालत लिख देता है।

इसी यन्त्र के द्वारा डाक्टर वसु ने वनस्पतियों पर कई प्रकार के प्रयोग कर के इस बात को खूब अच्छी तरह जान लिया है कि अन्य प्राणियों की तरह वनस्पति में भी त्वचा और स्नायु (Nerve) हैं। इन में भी आकुञ्चन और प्रसरण आदि अन्य प्राणियों के सदृश होता है।

तेजाब, ऐमोनिया की भाफ, गरम धातुओं के स्पर्श, विद्युत् के धक्कों आदि का जैसा प्रभाव मनुष्य की त्वचा और स्नायु पर पड़ता है, वैसा ही प्रभाव वनस्पतियों पर भी पड़ता हुआ दिखाई देता है।... ... ...

... ... आप ने सिद्ध किया कि सब वनस्पतियों में अनुभव करने की क्रिया वर्तमान है।

तीसरा अनुवाक।

—:o:—

(दूसरा यन्त्र)

Self Recording Apparatus.

(स्वयँ सूचक यन्त्र)

इस यन्त्र से कैसा भारी लाभ प्राप्त किया गया ? यह बतलाने के लिये हम नीचे का वाक्य उद्धृत करते हैं—

"यतः यूरोप के विद्वानों ने यह तै कर डाला था कि लाजवन्ती में स्नायु नहीं है * इसलिये हमारे महात्मा जगदीश चन्द्र जी ने इस यन्त्र द्वारा इस बात की पूरी जांच पड़ताल कर डाली। अर्थात् लाजवन्ती के पौधे को इसी ग्लास (यन्त्र) में रख दिया कि वह स्वयं अपनी दशा को इस यन्त्र पर लिख दे। पर इस का कुछ परिणाम न हुआ। वह पौधा बहुत ही कमजोर और लाचार मरे जैसा हो गया। वह सिकुड़ गया। इस के बाद डाक्टर बसु ने इस पौधे को फिर सचेत करना और होश में लाना चाहा। आपने इस पौधे को बिजली के द्वारा

* लाजवन्ती की पड़ताल से ही अन्य सभी वृक्षों पौधों में स्नायु नहीं होने का इल्जाम सा बन रहा था (सम्पा०)

खूब उत्तेजना (Stimulation) पहुंचाई । परिणाम वही हुआ जो बिना व्यायाम पहुंचाये हुए हाथ को व्यायाम देने से होता है । अर्थात् पौधा इस उत्तेजना से अपनी खोई हुई शक्ति पाने लगा — वह अच्छा होने लगा । अब यह पौधा अपनी हालत मजे से उस यन्त्र पर अङ्कित करने लगा ।

डाक्टर वसु महोदय ने इस ख्याल से कि इस प्रयोग में ज़रा सी भी ग़लती न होने पावे, यह देखना चाहा कि ताप (Temperature) का असर इस पर कैसा होता है । उन्हों ने इस पौधे में कुछ उष्णता पहुंचाई और फिर उसे बिजली के द्वारा उत्तेजना दिया । इस वक्त आपने देखा कि इस उत्तेजना या धक्के (Shock) का परिणाम उस पौधे पर अधिक शीघ्रता से होने लगा, और उक्त यन्त्र के कारण इसका परिणाम साफ़ २ मालूम होने लगा । इस के बाद डाक्टर जगदीश जी ने उस पौधे को ठण्डक पहुंचाई । इससे वह इतना ठिठुर गया कि उस यन्त्र पर कुछ भी चिह्न अङ्कित न कर सका । डाक्टर महाशय ने फिर इस पर पोटाशियम साइनाइड (Potassium cynide) नामक एक हलाहल विष डाला । उसका परिणाम यह हुआ कि पांच ही मिनिट में उस की सब स्नायविक क्रियायें बन्द हो गईं, वह मर गया ।"

निदान इस जांच से प्रत्यक्ष सिद्ध हो गया कि पौधों

में स्नायु (नस नाड़ियां) विद्यमान हैं और उन पर बाहरी प्रभाव का असर पड़ता है (और वे मर जाते हैं) ।

चौथा अनुवाक

(तीसरा यंत्र)

(Oscillating Recorder)

गति प्रकाशक यंत्र ।

इस सूक्ष्म यन्त्र के द्वारा पौधों में होने वाली सूक्ष्म से भी सूक्ष्म स्पन्दन-क्रियाओं का पता लग सकता है।

यह परीक्षा "तार के पौधे" पर की गई । इस पौधे के पत्ते धड़कते हुए हृदय की तरह नीचे और ऊपर को निरन्तर उठा और झुका करते हैं। निदान इस पौधे में होने वाली स्पन्दन-क्रिया प्रायः प्राणियों के हृदय की स्पन्दन-क्रिया के समान है । इतना ही नहीं, बल्कि यह भी जांच की गई कि जिस प्रकार हृदय की क्रियाओं का प्रभाव नाड़ियों पर पड़ता है, वही हालत इस पौधे की भी है।

जीव-तत्वज्ञों का कहना है कि ईथर के प्रभाव से

प्राणियों के हृदय की गति मन्द हो जाती है। अतः डाक्टर वसु जी ने यह जांच पड़ताल करना चाहा कि क्या यही दशा वृक्षों की भी है या नहीं ?

इस निमित्त महात्मा वसु ने तार के पौधे को एक कोठरी में रक्खा और उस कोठरी में प्रबल ईथर नाम क भाफ भर दिया। इस का परिणाम यह हुआ कि इस पौधे के पत्तों की स्पन्दन–क्रिया अर्थात् धड़कन उसी प्रकार मन्द हो गई, जिस प्रकार मनुष्य के हृदय की गति उस दशा में मन्द पड़ जाती है, जब उस को बे-होश करने वाली दवाई दी जाती है। अच्छा, अब महात्मा वसु ने उस कोठरी में ताज़ी और शुद्ध हवा भर दी, तो इस का फल यह हुआ कि उक्त पौधे के पत्तों की स्पन्दन–क्रिया अब अधिक तेज़ी के साथ होने लगी। ज्यों ज्यों शुद्ध वायु की अधिकता हुई, त्यों त्यों उस में नव-जीवन का सञ्चार होने लगा। ईथर से भी अधिक प्रभाव इस पौधे पर क्लोरोफार्म का देखा गया है। ज़रा सा क्लोरोफार्म दे देने से इस के पत्तों की स्पन्दन-क्रिया बिल्कुल रुक गई, कभी कभी इस से मृत्यु तक हो गई।

में स्नायु (नस नाड़ियां) विद्यमान हैं और उन पर बाहरी प्रभाव का असर पड़ता है (और वे मर जाते हैं) ।

चौथा अनुवाक ।

(तीसरा यन्त्र)

(Oscillating Recorder)

गति प्रकाशक यंत्र ।

इस सूक्ष्म यन्त्र के द्वारा पौधों में होने वाली सूक्ष्म से भी सूक्ष्म स्पन्दन-क्रियाओं का पता लग सकता है।

यह परीक्षा "तार के पौधे" पर की गई । इस पौधे के पत्ते धड़कते हुए हृदय की तरह नीचे और ऊपर को निरन्तर उठा और झुका करते हैं। निदान इस पौधे में होने वाली स्पन्दन-क्रिया प्रायः प्राणियों के हृदय की स्पन्दन-क्रिया के समान है । इतना ही नहीं, वल्कि यह भी जांच की गई कि जिस प्रकार हृदय की क्रियाओं का प्रभाव नाड़ियों पर पड़ता है, वही हालत इस पौधे की भी है।

जीव-तत्वज्ञों का कहना है कि ईथर के प्रभाव से

प्राणियों के हृदय की गति मन्द हो जाती है। अतः डाक्टर वसु जी ने यह जांच पड़ताल करना चाहा कि क्या यही दशा वृक्षों की भी है या नहीं ?

इस निमित्त महात्मा वसु ने सार के पौधे को एक कोठरी में रक्खा और उस कोठरी में प्रबल ईथर नाम क भाफ भर दिया। इस का परिणाम यह हुआ कि इस पौधे के पत्तों की स्पन्दन-क्रिया अर्थात् धड़कन उसी प्रकार मन्द हो गई, जिस प्रकार मनुष्य के हृदय की गति उस दशा में मन्द पड़ जाती है, जब उस को बे-होश करने वाली दवाई दी जाती है। अच्छा, अब महात्मा वसु ने उस कोठरी में ताज़ी और शुद्ध हवा भर दी, तो इस का फल यह हुआ कि उक्त पौधे के पत्तों की स्पन्दन-क्रिया अब अधिक तेज़ी के साथ होने लगी। ज्यों ज्यों शुद्ध वायु की अधिकता हुई, त्यों त्यों उस में नव-जीवन का सञ्चार होने लगा। ईथर से भी अधिक प्रभाव इस पौधे पर क्लोरोफार्म का देखा गया है। ज़रा सा क्लोरोफार्म दे देने से इस के पत्तों की स्पन्दन-क्रिया बिलकुल रुक गई, कभी कभी इस से मृत्यु तक हो गई।

पांचवां अनुव

(Crescogra

वृद्धिसूचक य

अब चौथे "क्रेस्कोग्राफ़" अर्था

हाल सुनिये—

इस की सहायता से वनस्पति

(Growth) याने बाढ़ का पत

कहा जाता है कि बीर-बहूटी

सब से धीरे चलने वाले जन्तु है

की गति इन जन्तुओं की चाल

कम हैं। इतनी सूक्ष्म गति का

काम है। परन्तु म० बसु ने

यता से यह भेद भी प्रकट

उन्होंने इस यन्त्र के द्वारा वृक्षों

हज़ार और कभी कभी दस

दर्शा दिया।

इस से बड़ी आसानी के

सकती है कि कौन सी वनस्पति

वह यह कि—खाद, बिजली का प्रवाह तथा अन्य उत्तेजक पदार्थों का वनस्पति की वृद्धि पर क्या प्रभाव पड़ता है—यह बात केवल दस पन्द्रह मिनटों में इस यंत्र के द्वारा देखी जा सकती है। अर्थात् जहां खाद की उत्तमता या निकृष्टता का पता महीनों में लगता है, वहाँ इस यन्त्र के द्वारा यह बात मिनटों में ज्ञात हो सकती है। इस का यह उत्तम फल होगा कि जो बहुत धन आज कल तरह तरह की खादों के प्रयोगों में बरबाद होता है, वह बच जायगा। किस खाद के डालने से किसान को अधिक लाभ हो सकता है, यह बात इस यंत्र के द्वारा बड़ी आसानी से मालूम हो जायगी।

छठवां अनुवाक।

(पांचवां यंत्र)

(High Magnification Crescograph)

अति उत्कृष्ट वृद्धि-सूचक यन्त्र

यह यन्त्र पौधे के बढ़ने का वृत्तान्त तुर्त अङ्कित कर सकता है। एक सेकण्ड में पौधा कितना बढ़ता है?

ऐसी सूक्ष्म बातों को भी यह यन्त्र बतला सकता है। अच्छे से अच्छे प्रथम श्रेणी के सूक्ष्म-दर्शक यन्त्र जितनी शक्ति है, उस से सौ-पचास गुनी नहीं, बल्कि ह[illegible] गुनी अधिक शक्ति इस यन्त्र में है, कहा जाता है कि यंत्र वैज्ञानिक संसार में अद्भुत क्रान्ति करेगा। इस यन्त्र से देखने पर कोई भी पदार्थ अपने स्वरूप से दस-लाख गुना बड़ा दिखाई देता है। जिन सूक्ष्म से भी सूक्ष्म जन्तुओं का पता सूक्ष्म-दर्शक यंत्र नहीं लगा सके थे, उन का यंत्र के द्वारा सहज ही में लग जायगा।

इस पौधे की पत्तियां अँधेरे कमरे मे खिड़की से आते हुये प्रकाश की ओर फिरी हुई हैं।

(देखो सूत्र   पृ, १०२-१०)

बीसवां अध्याय

म० जगदीश चन्द्र जी की जांच पड़ताल ।

पहिला अनुवाक ।

—:o:—

हम इस अध्याय में महात्मा वसु के कुछ अद्भुत कार्यों का वर्णन किये देते हैं :—

१—स्वत: प्रवृत्त लेखनी द्वारा पौधों से ही उन के हालात लिखवा दिये।

२—शान्तअवस्था में वनस्पति जीवन का गुप्त इतिहास कैसा होता है, यह यंत्र द्वारा दर्शाया गया।

३—आँधी, पानी (अति वृष्टि), धूप, छाँह, गरमी, जाड़ा आदि वृत्तों पर कैसे कैसे निर्दय व्यवहार करते हैं, और वे बेचारे सब सहन करते हैं, यह दर्शाया गया।

४—पौधों के आन्तरिक जीवन वृत्तान्तों को उन्हीं से (यंत्र की सहायता से) लिखवाया गया।

५—यह बात सिद्ध कर दी गई कि चुद्र से चुद्र वनस्पति भी सँज्ञा ग्राहक (Sensitive) है।

६—पौधों में भी मज्जा तन्तु जाल प्रकट किया गया।

सदा बदलती रहती है।*

१७—वृक्ष के पत्ते कभी प्रकाश पाने के लिये लालायित होते हैं, और कभी सूर्य की तीक्ष्ण गरमी न सह सकने के कारण कहीं छिपने की चेष्टा करते हैं।

१८—एक पौधे का गमला अँधेरे कमरे में रख दिया गया और छेद बंद खिड़की के एक छोटे छेद से प्रकाश की एक छोटी रेखा कमरे में डाली गई। दूसरे दिन उस पौधे की सब पत्तियां उस क्षीण प्रकाश की ओर झुक गई।

१९—लाजवन्ती पर भी यह परीक्षा की गई, उस की सब पत्तियां प्रकाश की ओर झुक गईं।

२०—एक यह परीक्षा की गई कि उसी गमले को घुमा दिया गया कि पौधे पर प्रकाश न पड़े। परन्तु देर में सब पत्तियां घूम कर प्रकाश की ओर फैल गईं। और बड़ा अचरज यह कि वे पत्तियां कोई दाहिनी ओर और कोई बाईं ओर घूम गईं।

* जैसे हम लड़के, जवान, बूढ़े होते हैं, इसी प्रकार वृक्ष-शरीर में भी परिवर्तन होते रहते हैं। या जैसे हमारी आकृति दुःख, सुख, चिन्ता, विचार आदि से बदलती है, इसी प्रकार वन की दशा भी मुरझाने, कुम्हलाने आदि रूप में बदलती हैं (मङ्ग०)।

२१—यह पता लगा है कि लाजवन्ती की पत्तियों की जड़ों में चार भिन्न २ "पेशियां" (विभाग) रहती हैं—एक पेशी के द्वारा पत्तियां ऊपर उठती हैं; दूसरी उन्हें नीचे करती हैं, तीसरी दाहिनी ओर और चौथी बाईं ओर घुमाती हैं।*

दूसरा अनुवाक

महात्मा बसु का व्याख्यान।

पौधों में नाड़ियां।

बम्बई क्रानिकल ता० २१ जनवरी १९२० ईसवी के अङ्क में महात्मा वसु का वह व्याख्यान छपा है जो उन्होंने इण्डिया आफिस लन्दन में दिया था। इस के प्रधान मिस्टर बालफ़ोर महामन्त्री हुये थे, जिन्होंने महात्मा जी की बड़ी प्रशंसा करते हुये जनता को परिचय कराया।

महात्मा जी ने अपना कार्य यंत्रों द्वारा दर्शाया पश्चात् प्रकट किया कि पौधों की बाढ़ बहुत ही धीमी चाल में होती

---

* यह लेख सं० १६ से २१ तक श्री रमेश प्रसाद जी बी० एस० सी० के लेख से जो माधुरी (लखनऊ) पूर्ण संख्या ६ में छपा था, लिया गया है (मङ्ग०)।

है। घोंघे (Snail) की चाल अत्यन्त धीमी है। तथापि वह पौधों की वृद्धि की गति से छः हजार गुणा अधिक है। पौधों की बाढ़ प्रति सेकण्ड एक इञ्च का एक लाखवां भाग मात्र है .... पौधों की वृद्धि का अनुसन्धान संसार को भारी लाभ देवेगा, क्यों कि खेती में अधिक खाद्य द्रव्यों की उपज इसी विद्या पर निर्भर है।

Treatment of Plants.

पौधों से बर्ताव।

आपने अपने यन्त्र क्रेस्कोग्राफ द्वारा यह दर्शाया कि पौधों में अगर कोई तेज़ वस्तु डाली जाती है, तो उस का [प्र]भाव पूरा २ पड़ता है। वह अगर नियत परिमाण से [अ]धिक डाली जायगी तो हानिकारक भी सिद्ध होगी। पौधे [क]ी जड़ पर विष डाल दिया गया, और वह मृत्यु प्राय [ह]ो गया। परन्तु उसी विष को बहुत थोड़ा २ डालने से [य]ह परिणाम हुआ कि वह (Stimulant) ताकत की दवाई [क]ा काम देने लगा, अर्थात् पौधे की बाढ़ में उन्नति कर देया, यहां तक कि वह फूल के समय से १५ दिनों पूर्व [ह]ी अपने फूल देने लगा। और एक यह भी बड़ा लाभ [इ]स परीक्षा से हुआ कि ऐसे परीक्षा वाले पौधे उस ताकत वाली औषधि प्रयोग के प्रताप से उन रोगों से बच गये जो इन में अनेक कीड़ों (Insects) द्वारा उत्पन्न हो जाते हैं।

इक्कीसवां अध्याय।

म० वसुका निर्णय

पहला अनुवाक

मासिक पत्रिका " मस्ताना योगी (उर्दू) फ़ीरोज़
जिल्द ६ अङ्क सँख्या ८ अगस्त १६१९ के पृष्ठ ६३ पर
लेख श्री युत जगदीश चन्द्र जी वसु के व्याख्यान के आध

दरख़्त भी ज़ख़्मी होते हैं।

इस शीर्षक में छपा है, उसे हम नीचे देते हैं (उर्दू शब्दों
हिन्दी कर दी है) ।

श्रीमान् महात्मा जगदीश जी कहते हैं—

"हमारे सामने वृक्षों का एक विस्तृत सँसार
पड़ा है। हमारी तरह वे भी जीवन रूपी नाटक के ऐ
हैं। वे भी भाग्य या प्रारब्ध के हाथों के खिलौने हैं,
की ज़िन्दगी में भी प्रकाश और अन्धकार, गर्मी और
वर्षा और धूप, वसन्त और पतझाड़, जीवन और मृत्यु
खेंचातानी जारी है। अनेकों कष्ट इन्हें पहुंचाये जाते
वे बेचारे उन के विरोध में " आह " तक भी

करते। मैं उन के जीवन-इतिहास के कुछ भाग पढ़ने का प्रयत्न करूंगा।

दूसरा अनुवाक।

गूंगा कष्टों को कैसे प्रकट करता है।

जिस समय किसी मनुष्य को कोई चोट, दुःख या ज़खम पहुंचे, तो इसका प्रतिवादरूपी पुकार (चीख़) हमें बतला देती है कि इसे कष्ट पहुंचा है। परन्तु गूँगा कोई शब्द नहीं बोल सकता (हमारे सदृश दुःख-पीड़ा से चिल्ला कर अपना दुःख नहीं प्रकट कर सकता)। इसके कष्टों का फिर हमें कैसे पता लगता है ? हम इसकी दुःख भरी दृष्टि को पहिचानते हैं। इसके अङ्गों की ऐंठन को जानते हैं और सहानुभूति हमें बतला देती है कि इसे दुःख पहुंचा है। जिस समय मेंढक को चोट पहुंचाई जाती है तो वह टिर्राता नहीं, परन्तु उसके अङ्गों में ऐंठन आरम्भ हो जाती है। बहुतेरे लोग यह कहेंगे कि मनुष्य और छोटे दर्जे के पशुओं में बड़ा भारी भेद है। केवल वही मनुष्य जो परमात्मा की सारी सृष्टि के साथ प्रेम रखने वाला हृदय रखता है और प्रत्येक जीवधारी के

दुःख का ख्याल रखता है, यह जान सकता है कि मेंढक को दुःख पहुंचा है। मानुषी सहानुभूति सदा ऊपर की ओर रहती है। कई दशाओं में यह बराबर वालों तक भी पहुंच जाती है, परन्तु नीचे दरजे की ओर इसका आकर्षित होना कठिन है। इसलिए बहुतेरे लोगों को इस बात में सन्देह है कि क्या पतित और नीचे दरजे वाले जन्तुओं में भी हर्ष शोक का अनुभव वैसा ही है जैसा हम लोगों में है; और यह ख्याल होता है कि क्या उनमें हमारे सदृश जुल्म और अत्याचारों से मुक़ाबिला करने की इच्छा भी विद्यमान होगी।

मानुषी प्रकृति जब स्वयं अपने अन्दर उन तुच्छ जन्तुओं के बारे में ऐसे ख्यालात रखती है, तो उससे यह आशा करना कि वह मेंढक के कष्टों की ओर आकर्षित होगी, निस्सन्देह असम्भव है।

तीसरा अनुवाक।

पशुओं को कष्ट का अनुभव।

तथापि शायद यह स्वीकार कर लिया जाय कि मेंढक कष्ट या चोट की पीड़ा के कारण विरोध (Protest) प्रकट करने के लिये अपने अङ्गों को सिकोड़ता

या मरोड़ता है। हमें इस मामले का विचार करने या अनुवर्तन करने में भी होशियार रहना चाहिए, क्योंकि एक सुविख्यात पशु विद्या का विद्वान इस बात पर ज़ोर देता है कि पशुओं को कष्टों का अनुभव ही नहीं होता। उसका कथन है कि जब कस्तूरे को जिन्दा निगल जाता है तो उसको कुछ कष्ट नहीं होता; बल्कि उसको हरारत (गर्मी) का आनन्ददायक अनुभव प्राप्त* होता है। निस्सन्देह इस प्रश्न का निर्णय होना असम्भव है, क्योंकि आज तक कोई व्यक्ति सिंह के पेट से जीवित निकल कर नहीं आया, जो इस आनन्द युक्त अनुभव का पता दे सके।*

चौथा अनुवाक।

ज़िन्दगी का सबूत।

यतः विरोध प्रकट करने वाली गतियां जीवन की कसौटी हैं, इसलिए हम एक ऐसा पैमाना नियत करने की

---

* शायद यूरोपियनों की यह बात वैसी ही है जैसी कि हमारे हिन्दू मांसाहारी लोग बकरे आदि को देवी के मन्दिरों में बलिदान करते हुए, यह कहते हैं कि उन पशुओं के जीवात्मा को देवी जी स्वर्ग में भेज देंगी इत्यादि।

कोशिश करेंगे कि जिससे जीवन-काल का अन्दाज़ा लगाया जा सके ।

अब विचारणीय प्रश्न यह है कि ज़िन्दा और मुर्दा में क्या भेद है ? यही कि ज़िन्दा व्यक्ति बाहरी कष्टों, पीड़ाओं का विरोध करता है, (अर्थात् कष्टों को प्रकट करने की चेष्टा करता है) जिसमें जितनी अधिक शक्ति होगी उसका विरोध उतना ही अधिक ज़ोरदार होगा, किन्तु कमज़ोर व्यक्तिओं का विरोध कमज़ोर और हलका होगा । और मुर्दा (निर्जीव) कुछ भी विरोध नहीं कर सकेगा । अतः जीवन का अनुमान बाहरी कष्टों, पीड़ाओं से लगाया जा सकता है । इस प्रकार "विरोध" की तेज़ी या कमज़ोरी मानो शक्तिशाली होने न होने की परीक्षा है ।

पांचवा अनुवाक ।

दशाओं से शरीरों में परिवर्त्तन ।

—:o:—

शक्ति सम्पन्न जीवन का विरोध ज़ोरदार होगा, और कमज़ोर व्यक्ति केवल साधारण विरोध करेगा, ऐसी विरोधी क्रियाओं का अन्दाज़ा विशेष प्रकार के उपकरणों (आलात) से लग सकता है । अगर जीवित अङ्ग एक जैसे रहें तो

समान प्रकार के कष्टों का विरोध सदा एक समान होगा। परन्तु जीवित अवयव सदा परिवर्तन की दशा में रहते हैं, क्योंकि दशायें सदा शरीरों में नवीन नवीन परिवर्तन करती चली जाती हैं। और हम लोग प्रति दिन बदलते रहते हैं। यही कारण है, कि किसी दिन हम बहुत प्रसन्नता की दशा में रहते हैं, परन्तु किसी दिन निराशा के समुद्र में गोते खाने लगते हैं। इन दोनों दशाओं में भी हमारे अन्दर कई परिवर्तन होते हैं, और न केवल वर्तमान समय में ही, बल्कि भूत काल के संस्कारों के प्रभाव के अनुसार भी परिवर्तन होता रहता है।

ये सारी बातें मिल कर एक व्यक्ति का दूसरे से भेद प्रकट करती हैं। रुपये की जांच करने के लिए हम उसे पत्थर पर दे मारते हैं, और उसकी प्रतिध्वनि से उस के खरा खोटा होने का ज्ञान प्राप्त कर लेते हैं। इसी प्रकार कदाचित जीवनों के भीतरी इतिहासों का अनुमान भी उनके कष्टों, पीड़ाओं आदि के विरोध से लग सकता है।
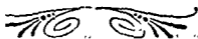
छठवां अनुवाक।

पौधों पर जख़म का प्रभाव।

—:o:—

पौधों पर ज़ख़मों के प्रभाव होने के बारे में तीन प्रकार की जांचें हुई हैं—एक यह कि ज़ख़म वाले स्थान पर कष्ट पीड़ा का होना—इससे प्रायः उस अङ्ग की वृद्धि रुक जाती है। दूसरे पत्ते के कटे हुए किनारों से मौत के लक्षण फैलने लगते हैं, और वे धड़कने वाली नसों तक जा पहुंचते हैं, जो जीवन की समाप्ति पर बिल्कुल शान्त हो जाते हैं। मृत्यु की इस तेज़ी को रोकने के लिए अनुभव किये गये हैं, और कटा हुआ पत्ता, जो २४ घन्टों में मृत्यु का शिकार हो जाया करता था, अब एक सप्ताह से अधिक समय तक जीवित रक्खा जा सकता है।

सातवां अनुवाक।

गति का नष्ट हो जाना।

—:o:—

गति या प्राण के बारे में बहुत जांच पड़ताल की गई है। भारी ज़ख़मों के इस प्रकार के प्रभाव के बारे में

ऐसे अनुभव किये गये हैं, कि जिनसे गति बिलकुल नष्ट हो जाती है। इस प्रकार की जांच पड़ताल के निमित्त लाजवन्ती का पत्ता पौधे से काट लिया गया। जख़मी पौधे और इस के कटे हुए अवयव की दशायें विचित्र प्रकार एक दूसरे से भिन्न पाई गईं। पत्ते को काटने से उस पौधे को बहुत भारी कष्ट प्राप्त हुआ, और इसके दूर २ तक के अङ्गों में एक भारी वकसाहट फैल गई। कई घण्टे तक सारी पत्तियां चुप चाप (सन्नाटे की सी दशा में) और मृत्युप्राय रहीं।*

आठवां अनुवाक।

बनावटी जिन्दगी।

इस दशा से धीरे २ पौधा फिर तैयार होने लगता है। और पत्तियों में फिर सञ्चालन शक्ति का चक्कर लगने लगता है। कटी हुई पत्ती, जिसका कटा हुआ भाग प्रभाव

*ठीक जिस प्रकार अगर हमारा कोई अङ्ग (हाथ पांव आदि) काट लिया जाय, तो उस जख़म की पीड़ा से हम बहुत दुखी हो जाते हैं—प्रायः मूर्च्छित तक भी हो जाते हैं (मङ्गलानन्द)।

शाली औषधि में रख दिया गया शीघ्र ही अपनी असली दशा में आ जाता है; और इस प्रकार अपना सिर उठाता है कि मानो मुक़ाबिला करने को धमकी दे रहा हो । इस के विरोध बहुत जोरदार शक्ति को प्रकट करते हैं । २४ घण्टे तक यही दशा जारी रहती है, जिसके पश्चात् एक विचित्र प्रकार का परिवर्तन पाया जाता है । इसके विरोध की तेज़ी अब शीघ्रतापूर्वक नष्ट होने लग जाती है । पत्ती, जो इस समय तक खड़ी थी, अब गिर पड़ती है, यही इसकी मौत है ।"

———

नवां अनुवाक।

खण्ड की समाप्ति ।

—:o:—

पाठक गण ! क्या अब इससे भी बढ़ कर और कोई युक्ति हो सकती है ? यह केवल युक्ति मात्र (ज़बानी जमा खर्च) नहीं, बरन् प्रत्यक्ष माण से सिद्ध कर दिया गया है, जिसका बिवरण म० जगदीशचन्द्र जी की पुस्तकें पढ़ने से ज्ञात होगा ।

इस प्रकार हमने यथा सम्भव युक्तियों अर्थात् विज्ञान (साइन्स) आदि की पुस्तकों के लेखों से यह सिद्ध कर

दिया है कि वृक्षों में जीव हैं । इस विषय में संक्षेप से इतना कहा गया, किन्तु अधिक ज्ञान प्राप्त करने की इच्छा रखने वाले महाशय गण विज्ञान तथा वनस्पति विद्या Botany की अनेकों पुस्तकें पढ़ कर लाभ उठा सकते हैं।

युक्तियों का उल्लेख करते हुए हमने अभी तक पूर्व पक्ष के उत्तर नहीं दिये, क्योंकि उनके लिए एक पृथक खण्ड रख दिया गया है, अतः पाठक वहां भी अनेक युक्तियां पायेंगे ।

अब हम प्रत्यक्ष* अनुमान और उपमान प्रमाणों के द्वारा अपने विषय को सिद्ध कर चुकने के पश्चात् चौथे आप्त या शब्द प्रमाण की पूर्ति निमित्त अगला खण्ड **'वेदादि के प्रमाण'** आरम्भ करते हैं ।

---

* महात्मा जगदीशचन्द्र जी के यन्त्रों द्वारा वृक्षों का जीव-धारी होना "प्रत्यक्ष प्रमाण" है ।

लाजवन्ती आदि के गतियों आदि से "अनुमान-प्रमाण" की सिद्धि हो गई ।

खाना पीना, सोना, श्वास लेना, सन्तान छोड़ना, आदि में वृक्षों की मनुष्यों, पशु, पक्षियों के साथ समानता होना "उपमान प्रमाण" समझा जायगा ।

दूसरा खण्ड ।

वेदादि के प्रमाण ।

" ... ... देखो मनुस्मृति में पाप और पुण्य की बहुत
ार की गति—"

ऐसा लिख कर १५ श्लोक मनु० के उद्धृत किये हैं,
न में एक (शरीरजैः०) मनु० १२।९ ध्यान देने
ग्य है।

इसी प्रकार पृ० २६७ पर कहा है कि—

"अब जिस जिस गुण से जिस जिस गति को जीव
प्त होता है, उस को आगे लिखते हैं"—इस से आगे भी
ु के ११ श्लोक नकल किये गये हैं, जिन में से (स्थावराः)
ु० १२।४२ पर पाठकों को ध्यान देना चाहिये। हम ने
ा दोनों श्लोकों को आगे "स्मृति" अध्याय में रख
या है, पाठक वहीं देख लें और विचार करें कि इन
ोकों को उद्धृत कर के अवश्य ही स्वामी जी यह अपना
न्तव्य प्रकट कर रहे हैं कि वे इन मनु-वाक्यों से सहमत
कि पाप कर्मों के कारण मनुष्य का जीवात्मा उन (वृक्ष)
ोनियों में भी जाता है।

प्रश्न—यह मिलावटी इबारत है। क्योंकि सत्यार्थ
काश के कई समुल्लास स्वामी जी की मृत्यु के पश्चात् छपाये
ये हैं ?

" ... ... देखो मनुस्मृति में पाप और पुण्य की बहुत र की गति—"

ऐसा लिख कर १५ श्लोक मनु० के उद्धृत किये हैं, । में एक (शरीरजैः०) मनु० १२।९ ध्यान देने र है।

इसी प्रकार पृ० २६७ पर कहा है कि—

"अथ जिस जिस गुण से जिस जिस गति को जीव त होता है, उस को आगे लिखते हैं"—इस से आगे भी के ११ श्लोक नकल किये गये हैं, जिन में से (स्थावराः) ० १२।४२ पर पाठकों को ध्यान देना चाहिये। हम ने दोनों श्लोकों को आगे "स्मृति" अध्याय में रख या है, पाठक वहां देख लें और विचार करें कि इन लोकों को उद्धृत कर के अवश्य ही स्वामी जी यह अपना तव्य प्रकट कर रहे हैं कि वे इन मनु-वाक्यों से सहमत कि पाप कर्मों के कारण मनुष्य का जीवात्मा उन (वृक्ष) ानियों में भी जाता है।

प्रश्न—यह मिलावटी इबारत है। क्योंकि सत्यार्थ काश के कई समुल्लास स्वामी जी की मृत्यु के पश्चात् छपाये ये हैं।

" ... ... देखो मनुस्मृति में पाप और पुण्य की बहुत र की गति—"

ऐसा लिख कर १५ श्लोक मनु० के उद्धृत किये हैं, न में एक (शरीरजैः०) मनु० १२।९ ध्यान देने य है।

इसी प्रकार पृ० २६७ पर कहा है कि—

"अब जिस जिस गुण से जिस जिस गति को जीव प्त होता है, उस को आगे लिखते हैं"—इस से आगे भी नु के ११ श्लोक नकल किये गये हैं, जिन में से (स्थावराः) नु० १२।४२ पर पाठकों को ध्यान देना चाहिये। हम ने न दोनों श्लोकों को आगे "स्मृति" अध्याय में रख दिया है, पाठक वहीं देख लें और विचार करें कि इन श्लोकों को उद्धृत कर के अवश्य ही स्वामी जी यह अपना मन्तव्य प्रकट कर रहे हैं कि वे इन मनु-वाक्यों से सहमत हैं कि पाप कर्मों के कारण मनुष्य का जीवात्मा उन (वृक्ष) योनियों में भी जाता है।

प्रश्न—यह मिलावटी इबारत है। क्योंकि सत्यार्थ प्रकाश के कई समुल्लास स्वामी जी की मृत्यु के पश्चात् छपाये गये हैं।

उत्तर—ये बातें वृथा हैं। स्वामी जी के हस्त-लिखित कागजात अब तक वैदिक यन्त्रालय में सुरक्षित हैं, और कार्य-कर्ता गण बड़ी सावधानी के साथ सब लेखों को मूल से मिला कर छपवाते हैं, इसलिए यह आक्षेप व्यर्थ है।

प्रश्न—जो श्लोक मनु के स्वामी जी ने सत्यार्थ प्रकाश में उद्धृत किये हैं, उन से उन्हें केवल यह दर्शाना अभीष्ट था कि मनु० में अमुक अमुक बातें इस प्रकार लिखी हुई हैं। एक दृष्टान्त सुनिये—

सत्यार्थ० दूसरा समुल्लास पृ० २५ पर—

" "गुरोः प्रेतस्य शिष्यस्तु पितृ मेधं समाचरन्।"

इस मनु-वाक्य को स्वामी जी यद्यपि नहीं मानते (क्यों कि वे भूत प्रेत से इनकारी हैं) पर तौ भी इसे अपनी पुस्तक में सिर्फ "भूत प्रेत" का अर्थ समझाने के लिये लिखा है।

इसी प्रकार समझ लो कि स्वामी जी ने नवें समुल्लास में इन दो मनु वाक्यों को रख दिया है। स्वामी जी ने ऐसा विज्ञापन भी दे दिया था कि हम ने जिन श्लोकों को उद्धृत किया है उन सब को प्रामाणिक नहीं मानते।

उत्तर—ऐसा विज्ञापन अन्य स्थलों के लिये होगा। क्यों कि इन दोनों श्लोकों का स्वामी जी द्वारा प्रामाणिक मान लिया जाना इसलिए भी स्पष्ट हो रहा है कि मनु के श्लोकों

को उद्धृत करने से पूर्व स्वामी जी अपने शब्दों में यह कह रहे हैं कि :—

" अब जिस जिस गुण से जिस जिस गति को जीव प्राप्त होता है, उस उस को आगे लिखते हैं।"

अगर ये मनु वाक्य स्वामी जी को अभिमत न होते तो वे उक्त वाक्य अपनी ओर से कह कर उद्धृत न करते, वल्कि यों कथन कर देते कि "मनु ने ऐसा माना है, पर मेरी सम्मति ऐसी नहीं है।"

पाठकों को ज्ञात हो कि इन मनु वाक्यों को आर्य सामाजिक मनु-टीकाकारों (पं० तुलसीराम जी, पं० आर्य मुनि जी आदि) ने भी ठीक माना है, क्षेपक नहीं माना अतः ऐसे आक्षेप निर्मूल हैं।

चौथा अनुवाक।

—:o:—

और भी देखो श्री स्वामी जी सत्यार्थ प्रकाश एकादश समुल्लास (ब्राह्म-समाज, प्रार्थना समाज प्रकरण में) पृ० २६८ पर यों कथन कर रहे हैं—

प्रश्न—" जाति भेद ईश्वर कृत है या मनुष्य कृत? (उत्तर यह था कि दोनों, फिर प्रश्न हुआ कि कौन कौन

ईश्वर कृत और कौन कौन मनुष्य कृत हैं। इस का उत्तर स्वामी जी के शब्दों में सुनो):—

" उत्तर—मनुष्य, पशु, पक्षी, वृक्ष, जल जन्तु आदि जातियां परमेश्वर कृत हैं, जैसे पशुओं में गौ, अश्व, हस्ति आदि जातियां। वृक्षों में पीपल, वट, आम्र आदि, पक्षियों में हंस, काक, वक आदि, जल जन्तुओं में मत्स्य, मकर आदि।"

अब विचारने का स्थान है कि यहां पर स्वामी जी जीवधारी योनियों की जातियों का ही वर्णन कर रहे हैं। मनुष्य, पशु, पक्षी आदि के साथ साथ वृक्षों का वर्णन करने से यही निश्चय होता है कि स्वामी जी वृक्षों को भी पशु पक्षियों के सदृश जीवधारी मानते थे। अवश्य ही जातियां केवल जीवधारी योनियों ही में मानी जा सकती हैं, निर्जीव पदार्थों में नहीं।

अतः स्वामी जी के मतानुसार वृक्षों में जीव की विद्यमानता सिद्ध है।

—:o:—

सातवां अनुवाक।

स्थावर शरीर वाले जीवों का सुख या दुःख प्राप्त नहीं हो सकता।

इस से स्पष्ट है कि स्थावर यानी वृक्षों में जीवों का होना स्वामी जी के शब्दों में सिद्ध है।

छठवां अनुवाक।

देखो सत्यार्थ प्रकाश १२ वां समुल्लास पृ० ४३९

"जब जगत् का अन्त हम देखते हैं तो उसमें रहने वाले जीवों का अन्त क्यों नहीं।"

यहां स्वामी जी स्पष्ट रीति से जगत् में जीवों की विद्यमानता को स्वीकार कर रहे हैं, अतः वृक्ष का जीव होना स्वामी दयानन्द के शब्दों से सिद्ध हो रहा है।

सातवां अनुवाक।

'ऋषि दयानन्द के पत्र और विज्ञापन' नामकी पुस्तक द्वितीय भाग (श्री पं० भगवद्दत्त जी बी० ए० रिसर्च स्कालर दयानन्द कालिज लाहौर द्वारा सम्पादित) पृष्ठ ५८ पंक्ति १० पर यों छपा है—

ईश्वर कृत और कौन कौन मनुष्य कृत हैं। इस का उत्तर स्वामी जी के शब्दों में सुनो):—

"उत्तर—मनुष्य, पशु, पक्षी, वृक्ष, जल जन्तु आदि जातियां परमेश्वर कृत हैं, जैसे पशुओं में गौ, अश्व, हस्ति आदि जातियां। वृक्षों में पीपल, वट, आम्र आदि, पक्षियों में हंस, काक, बक आदि, जल जन्तुओं में मत्स्य, मकर आदि।"

अब विचारने का स्थान है कि यहां पर स्वामी जी जीवधारी योनियों की जातियों का ही वर्णन कर रहे हैं मनुष्य, पशु, पक्षी आदि के साथ साथ वृक्षों का वर्णन करने से यही निश्चय होता है कि स्वामी जी वृक्षों को भी पशु पक्षियों के सदृश जीवधारी मानते थे। अवश्य ही जातियां केवल जीवधारी योनियों ही में मानी जा सकती हैं, निर्जीव पदार्थों में नहीं।

अतः स्वामी जी के कथनानुसार वृक्षों में जीवों की विद्यमानता सिद्ध है।

—:o:—

पाचवां अनुवाक।

—:o:

सत्यार्थ प्रकाश १२ वां
"जैनियों" के प्रश्नोत्तर

आठवां अनुवाक।

—:o:—

श्री स्वामी जी महाराज " आर्य्योद्देश्य रत्न माला " पुस्तक के पृष्ठ ३८ में यों कथन कर रहे हैं—

" ३८—जाति-जो जन्म से लेकर मरण पर्यन्त बनी रहे जो अनेक व्यक्तियों में एक रूप से प्राप्त हो, जो ईश्वर कृत अर्थात् मनुष्य, गाय, अश्व, और वृक्षादि समूह हैं, वे जाति शब्दार्थ से लिए जाते हैं।

यहां भी स्वामी जी ने गाय, अश्व आदि जीवधारियों के साथ वृक्ष को गिना कर यह दर्शा दिया है कि वे इसे भी जीवधारी ही मानते हैं।

नवां अनुवाक।

—:o:—

अब इस अध्याय के अन्त में हम उपसंहार की रीति से एक बहुत ही स्पष्ट प्रमाण स्वामी जी के मन्तव्य होने का उपस्थित किए देते हैं :—

स्वामी जी के जीवनचरित्र में यों छपा है :—

" प्रश्न २१—जीवात्मा असंख्य हैं, अथवा संख्या सहित ? क्या कर्म्म-वश मनुष्य, पशु और वृक्षादि की योनियों में जा सकता है ?

उत्तर—ईश्वर के ज्ञान में जीवों की संख्या है, परन्तु अल्प ज्ञान में वे असंख्य हैं। पाप कर्म्मों की अधिकता से जीव पशुओं और वनस्पतियों की योनियों में जाता है।"

(ये प्रश्नोत्तर भारत सुदशा प्रवर्तक में भी छपे थे।)

देखो दयानन्द प्रकाश, श्री स्वामी सत्यानन्द महाराज कृत सङ्गठन काण्ड सर्ग दशवां, पृष्ठ,४५६ ॥

क्या अब भी किसी को यह शंका रह सकती है कि स्वामी दयानन्द ने वृक्षों को जीव-धारी नहीं माना ?

दूसरा अध्याय ।

दयानन्द वेद भाष्य

—:o:—

पहिला अनुवाक ।

श्री स्वामी जी के सत्यार्थप्रकाश आदि के प्रमाणों को हम प्रथमाध्याय में प्रकट कर चुके। अब इस अध्याय में यह दर्शाते हैं कि उन्हों ने अपने वेद भाष्यों में भी वृक्षों का जीवधारी होना माना है, उन प्रमाणों को सुनिये:-

इमं जीवेभ्यः परिधिं दधामि ।

(यजु : ३५ । १५)

इस मन्त्र में जो "जीवेभ्यः" शब्द आया है, इस का स्वामी जी कृत संस्कृत भाष्य यों है :—

(जीवेभ्यः) प्राण धारकेभ्यः स्थावर शरीरेभ्यश्च'

(देखो यजुर्वेद-भाष्य पृष्ठ ११०५)

इसका भाषा में अर्थ नहीं छपा, जो स्वामी जी के हिन्दी अनुवादक पण्डितों की बेपरवाही हो सकती है। भाषार्थ यों है :—

" जीवेभ्य : का अर्थ प्राण धारण करने वालों और स्थावरों (वृक्ष) शरीर वालों का है " ।

इस प्रमाण से यह स्पष्ट सिद्ध हो रहा है कि स्वामी जी वेद के इस शब्द " जीवेभ्यः " से वृक्षों के जीवों का भी अभिप्राय ले रहे हैं ।

दूसरा अनुवाक

—:o:—

अब ऋग्वेद का प्रमाण देखिये :—

आपः प्रणीत भेषजं वरूथँ तन्वे३
मम । ज्योक् च सूर्यं दृशे ॥ २१ ॥

{ (ऋ० मं० १ सूक्त २३ मं० २१)
(ऋ० दयानंद भाष्य पृष्ठ ३६४) }

इस मन्त्र का भावार्थ स्वामी जी ने इस प्रकार लिखा है :—

भावार्थ—नैव प्राणैर्विना कश्चित् प्राणी वृक्षादयश्च शरीरं धारयितुं शक्नुवन्ति ।

भावार्थ*—(हिन्दी) कोई प्राणी या वृक्षादि प्राणों के बिना अपने शरीरों को धारण नहीं कर सकते ॥ २१ ॥

---

*भावार्थ की हिन्दी वेद-भाष्य में नहीं है, अतः यह मेरा अनुवाद है (मं०) ।

यहां श्री स्वामी जी ने वृत्तों को प्राणी के साथ दर्शावे "शरीरधारी" भी मान लिया है, अतः कोई सन्देह हो सक्ता कि स्वामी जी वृक्ष को जीवधारी मानते थे।

तीसरा अनुवाक।

—:o:—

एक और ऋग्वेद का प्रमाण देखिये :—

संमाग्ने वर्चसा सृज संप्रजया समायुषा।
विद्युर्मे अस्य देवा इन्द्रो विद्यात् सहऋषिभिः।

(ऋग्वेद मंडल १। सूक्त २३। मंत्र २४)

इस मन्त्र के एक शब्द 'मे' का भाष्य स्वामी जी यों करते हैं :—

(मे) मम जीवस्य। अस्य मनुष्य पशु वृक्षादिस्थस्य।

*अर्थात्–मुझ जीवात्मा का, याने इस मनुष्य, पशु, वृक्ष आदि में रहने वाले (जीवात्मा) का—

---

*स्वामी जी के हिन्दी अनुवादक ने इन शब्दों का न जाने क्यों भाषार्थ नहीं किया, अतः यह हिन्दी मेरी है (मंग०।)

पाठक देखिये अब तो तनिक भी सन्देह इस बात का नहीं रह गया कि स्वामी जी वृक्षों को चेतन ही मानते थे, क्योंकि यहां पर वे स्पष्ट ही " वृक्षादिस्थस्य जीवस्य ", (वृक्षादिकों में रहने वाले जीवों का) ऐसा कह रहे हैं, इतने पर भी जो लोग न माने और स्वामी दयानन्द को भी वृक्ष जड़ पदार्थ मानने वाला कहते चले जांय, उन की इस हठ-धर्मीपन का क्या इलाज है।

—(:०(:)—

तीसरा अध्याय।

दयानन्द निर्णय पर शङ्का समाधान।

पहिला अनुवाक।

—०—

ऊपरी दो अध्यायों में हमने श्री स्वामी जी के वाक्यों को उद्धृत कर के यह प्रकट किया है, कि स्वामी जी वृक्षों को जीवधारी मान रहे हैं। अब विपक्षियों की शङ्काओं पर विचार करते हैं—

प्रश्न—स्वामी जी सत्यार्थ प्रकाश पृ० १९४ पर कहते हैं कि—

"देखो सृष्टि के बीच में जितने प्राणी अथवा अप्राणी हैं, वे सब अपने अपने कर्म और यत्न करते ही रहते हैं, जैसे पिपीलिका आदि* प्रयत्न करते, पृथ्वी आदि सदा घूमते और वृक्ष आदि बढ़ते घटते रहते हैं... ...।

इस से पाया गया कि स्वामी जी वृक्षों को जड़ मानते थे, क्यों कि यहां पर "अप्राणी" के दृष्टान्त में वृक्षों को गिनाया है।

उत्तर—यह कोई ठीक युक्ति नहीं है। जब कि हम

अर्थ वृक्ष करेंगे, तो मानों अपनी ही बात को स्वयं खंडन करने के दोषभागी बनेंगे।

अतः प्राणी के ही अर्थ में वृक्षों को मानना पड़ेगा, जिस से वृक्षों का चेतन होना सिद्ध है।

दूसरा अनुवाक।

—:o:—

प्रश्न—सत्यार्थ प्रकाश ८ वां समुल्लास पृ० २२१ पर लिखा है कि—

"कहीं २ जड़ के निमित्त से जड़ भी बन और बिगड़ भी जाता है। जैसे परमेश्वर के रचित बीज पृथिवी में गिरने और जल पाने से वृक्षाकार हो जाते हैं।"

इस वाक्य से यह पाया जाता है कि वृक्ष जड़ हैं, क्योंकि जड़ बीज से उत्पन्न होने वाला वृक्ष जड़ ही होगा।

उत्तर—अच्छा, इसी से और आगे की इबारत को भी ज़रा ध्यान से पढ़ लीजिये, जो यों है—

"और अग्नि आदि जड़ के संयोग से बिगड़ भी जाते हैं, परन्तु इन का नियमपूर्वक बनना वा बिगड़ना परमेश्वर

निदान जिस प्रकार जड़ बीज से पैदा होने वाला वृक्ष होगा, उसी प्रकार मनुष्य के जड़ रजवीर्य से पैदा होने वाला शरीर भी जड़ होगा।

प्रश्न—इस (मानुषी शरीर) में तो जीवात्मा आ कर जाता है, इस लिए वह चेतन या जीवधारी कह- है ?

उत्तर—इसी प्रकार बीज में भी जीवात्मा प्रवेश करता और वृक्ष को जीवधारी बनाता है।

इस विषय में आगे तीसरे खण्ड की कई अध्यायों में पूरा ार किया जायगा।

निदान यह आक्षेप निर्मूल है और स्वामी दयानन्द के । से वृक्ष का जड़ होना सिद्ध नहीं हो सकता।

चौथा अध्याय।

विद्वानों की सम्मतियां।

—:o:—

पहला अनुवाक

श्री स्वामी दयानन्द महाराज का निर्णय सुना देने के पश्चात् अब हम यह भी देखना चाहते हैं कि उन के समय से आज तक अच्छे अच्छे संस्कृतज्ञ आर्य-सामाजिक तथा अन्य विद्वानों ने क्या निर्णय किया है—

१—स्वर्गवासी पं० तुलसीराम जी सामवेद के भाष्यकार आर्य समाजों के माननीय विद्वान् थे। उन्होंने वृक्षों में जीव माना है, जो उन के किये सांख्य भाष्य से प्रकट है, जिसे हम सांख्य अध्याय में उद्धृत करेंगे।

२—श्री पं० आर्य मुनि जी प्रोफ़ेसर संस्कृत फ़िलासफ़ी दयानन्द कालिज लाहौर भी वृक्षों में जीव मानते हैं, जो उन के वेदान्त-भाष्य से प्रकट है जिसे हम उसी अध्याय में लिखेंगे।

३—श्री पं० शिवशङ्कर काव्य तीर्थ जी वेदों के एक तारो विद्वान हैं। उन का मत भी ऐसा ही है, जो उन के छान्दोग्य-भाष्य से जाना जाता है। हम उसे उपनिषद अध्याय में दर्शायेंगे।
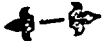
४—स्वर्गवासी पं० गुरुदत्त जी विद्यार्थी एम० ए० आर्य-समाज के मुख्य विद्वानों में थे। आप की सम्मति आप के वैदिक टेक्स्ट नं० १ में जो (Vedic Text No. 1—Atmosphere) Life & Works of Pdt. Guru Dutta के पृ० २१४ पर छपी है, यही है कि वृक्ष जीवधारी हैं।

५—आर्य समाज के एक और सुविख्यात महात्मा श्रीमान् नारायण स्वामी जी भी वृक्षों को जीवधारी ही मानते हैं। देखो पुस्तक " आत्म दर्शन के उपोद्घात पृष्ठ ५७ पर आप यों कह रहे हैं—

"...देखा यह जाता है कि क्षुद्र से क्षुद्र जन्तु भी ... अपनी रक्षा और आहार आदि की चिन्ता रखते हैं। विज्ञानरत्न सर जगदीश चन्द्र बसु के अन्वेषण और परीक्षणानुसार तो पौधों में भी ये गुण पाये जाते हैं तो फिर यह बात इन जन्तुओं में आत्मा की सत्ता के बिना कहां से आया।"

दूसरा अनुवाक ।

—:o:—

अब हम आर्यसमाज के सिवाय अन्य विद्वानों की सम्मतियां प्रकट करते हैं :—

१—श्रीमान् लाला लाजपतिराय जी जहां आर्य-समा[illegible] के पूजा-पात्र रहे हैं, वहां सारी भारतीय जनता के [illegible] मान्य हैं । आप की पुस्तक "दि आर्यसमाज" के पृ[illegible] २५७ पर हम पढ़ते हैं :—

"... ..For centuries have the Hin[illegible] believed that plants were essentially as m[illegible] to be regarded as living things as were [illegible] mals."

(The Arya Samaj page 257-58

अर्थ—"शताब्दियां बीत गईं कि हिन्दू लोगों [illegible] विश्वास रहा है, कि पौधे भी वैसे ही जीवित [illegible] जाने योग्य हैं, जैसे कि पशु आदि"।

२—स्वर्गवासी लोकमान्य श्री पं० बालग[illegible] महाराज एक भारी आर्य विद्वान् माने गये [illegible] सम्मति निम्न प्रकार हैं :—

"......इसके अतिरिक्त वे लोग इस बा[illegible]

चेत निर्णय नहीं कर सकते कि वृक्ष, पशु, मनुष्य इत्यादि अचेतन प्राणियों की बढ़ी चढ़ी हुई श्रेणियां कैसे बनीं और अचेतन को सचेतनता कैसे प्राप्त हुई .....”।

(देखो भगवद्गीता रहस्य पृष्ठ १५१ पं० २० “कापिल सांख्य शास्त्र अथवा क्षराक्षर विचार सातवां प्रकरण”)

तीसरा अनुवाक ।

अब हम यह भी दिखलाते हैं कि संस्कृत पुस्तकों के सिवा यूरोपियन लोग भी वृक्ष में जीव का होना ही मान रहे हैं।

१—प्रो० मैक्समूलर साहब ने लिखा है:—

“Besides, as we say ourselves, there is life in the tree, while the beam is dead—The ancient people felt the same, and how should they express it, except by saying that the tree lives By saying this, they did not go so far as to ascribe to the tree a warm breath or a beating heart, but they certainly admitted in the tree that was spring-

ing up before their eyes, that was growing, putting forth branches, leaves, blossoms and fruits, shedding its foliage in winter, and that at last was cut down or killed—" (See Origin and Growth of Religions P.175)

भावार्थ—"और हम लोग कहा करते हैं कि वृत्तों में जीवन है, यद्यपि उसका शरीर मुरदा है । यही बात प्राचीन काल के लोग भी मानते थे । वे वृत्तों को जीवित कहने पर कुछ ऐसी भावना तो न करते थे कि वे श्वास भी लेते होंगे या उनमें हृदय भी मौजूद होगा इत्यादि किन्तु निस्सन्देह वे यह स्वीकार करते थे कि वृत्त सजीव है, हमारी आंखों के सामने उपजता (जन्म लेता) है, बढ़ता है, शाखायें, फल उत्पन्न करता है; शीतकाल में ठिठुर जाता और अन्त समय मर भी जाता है।"

यह है सम्मति एक ऐसे विद्वान की, जिसने संस्कृत पुस्तकों में ही १०० वर्ष का भारी जीवन लगाया था । अतः पाठक समझ सकते हैं कि कोई पक्षपात रहित विचार करने वाला संस्कृत पुस्तकों के आधार पर सिवाय उक्त निर्णय के और क्या कह सकता है ।

संस्कृत की प्राचीन पुस्तकों (वेदादि) से वृत्तों में जीव का होना पाया जाता है, तभी तो मोक्षमूलर साहब

ने भी उक्त सम्मति प्रकाशित की, नहीं तो उन्हें ऐसा कहने का क्या सरोकार था ।

अतः यूरोपियन निष्पक्ष संस्कृतज्ञ विद्वान के निर्णय से भी यही सिद्ध हुआ कि वृक्षों में जीव मौजूद है ।

२—और भी देखिये कि प्रोफ़ेसर मैक्डानल साहब क्या कहते हैं—यूरोपियनों ने शोर मचाया था कि वेदों में आवागमन का कोई भी प्रमाण नहीं मिलता; अतः हमारे प्रोफ़ेसर सा० उन्हें ललकार कर उत्तर दे रहे है कि:—

"One passage of the Rigveda, however, in which the soul is spoken of as departing *to the waters or the plants* may contain the germs of the theory"—

अर्थ—"(कम से कम) एक वाक्य तो ऋग्वेद में ऐसा आया है जिसमें जीवात्मा के पानी या "वृक्षों" में जाने (आवागमन) का वर्णन है ।"

यहां जीव के अन्य जन्मों में वृक्षों में प्रवेश करने पर संकेत है । वह मन्त्र (सूर्यं चक्षुर्गच्छतु०) आगे "वेद" प्रकरण में आवेगा ।

चौथा अनुवाक ।

—:o:—

आर्य, सनातनी, यूरोपियन संस्कृतज्ञों
सुन लेने के पश्चात् अब एक मुसलमान
की बात पर भी कान दीजिए ।

अकबर बादशाह के सुविख्यात प्रधान
अब्दुल फ़ज़ल साहब ने अपनी पुस्तक "
में हिन्दू धर्म का वर्णन करते हुए यों कहा

" Jewa Atma, that which
animals and vegetables "—

(See Ayeen Akbery transl
English by Mr. F. Gladwin vol. II

अर्थ—"जीवात्मा वह है जो पशुओं और
में विद्यमान रहता है "।

पांचवां अनुवाक ।

पाठकों ने यूनान देश के अरस्तू Aristotle तत्ववेत्ता का नाम अवश्य सुना होगा। इन्होंने भी अपनी पुस्तक "पशु-वर्णन" में यों कहा है:—

"Plants have souls but no sensation"—

अर्थात् "पौधों में जीव तो हैं, परन्तु अनुभव-ज्ञान नहीं है"।

इस उद्धरण से पता लगता है कि सारे यूरोप का गुरु यूनान देश आज से २५०० वर्ष पूर्व काल में उसी निर्णय पर पहुंचा था, जो भारत में उससे बहुत पूर्व प्रचलित था।

एक बात यहां यह स्मरण रखने योग्य है कि अरस्तू महाराज का कथन वही था, जो हाल में श्री स्वामी दयानन्द महाराज ने प्रकट किया है कि वृक्षों की दशा हमारे सुषुप्ति सदृश है कि वे दुःख आदि का अनुभव नहीं कर सकते।*

इन सारे ही विद्वानों की सम्मतियां पढ़ कर हमें आशा है कि विचार-शील पाठक गण वृक्षों में जीवों के होने से इनकारी न रहेंगे।

---

*'विज्ञान-वादियों' का निर्णय उक्त सम्मति से विरुद्ध यह है कि वृक्ष हमारे सदृश दुखी सुखी भी होते हैं। (मञ्ज०)

पाचवां अध्याय

पुराण ।

—:o:—

पहला अनुवाक।

—o—

अब पुराणों के प्रमाण सुनिये—

आर्य समाज यद्यपि पुराणों को प्रामाणिक नहीं मानता, परन्तु साथ ही यह मन्तव्य रखता है कि सत्य वेदानुकूल बातें जहां कहीं भी होंगी ग्रहण कर ली जायँगी, इसलिये हमारे आर्य सामाजिक महाशयों को पुराणों पर भी कान दे देना चाहिये—

स्थावरं विंशतेर्लक्षं जलजं पंचलक्षकम् ।
कूर्माश्च नव लक्षं च दश लक्षं च पक्षिणः ॥१॥
त्रिंशल्लक्षं पशूनां च दश लक्षं च बानराः ।
ततो मनुष्यतां प्राप्य ततः कर्माणि साधयेत् ॥२॥

(बृहद्विष्णु पुराण-अध्यायादि ज्ञात नहीं हो सका, पाठक तलाश करें)

ये बृहद्विष्णु पुराण के श्लोक हैं, इन में ८४ लक्ष योनियों की सूची दी गई है, जो इस प्रकार है कि—

(१) २० लाख स्थावर (वृक्ष आदि) योनियां हैं ।
(२) ५ ,, जल में उत्पन्न होनेवाली ,, ,,
(३) ९ ,, कूर्म (जल स्थल दोनों में रहनेवाले) हैं ।
(४) १० ,, पक्षी—(पंख से उड़नेवाले) हैं ।
(५) ३० ,, पशु हैं ।
(६) १० ,, बानर हैं ।

८४ चौरासी लक्ष योनियां हुईं । इन सब में चक्कर काट लेने पर मानुषी योनि प्राप्त होती है, इसलिये अच्छे कर्म करें ।

इस प्रमाण से ज्ञात होगा कि पुराणों में जो ८४ लाख प्रकार की योनियां लिखी हैं कि जिनमें हम मनुष्यों के जीवात्मा कर्मानुसार घुमाये जाते है. उन्हीं में वृक्ष भी हैं और कुछ थोड़े भी नहीं वरन् बीस लक्ष प्रकार के ।

दूसरा प्रमाण श्रीमद्भागवत का सुनिये—

सप्तमो मुख्य सर्गस्तु षड्विधस्तस्थुषांचयः ॥ १८ ॥
वनस्पत्योषधि लता त्वक् सारा वीरुधो द्रुमाः ।
उत्स्रोतसस्तमः प्राया अंतः स्पर्शा विशेषिणः ॥ १९ ॥
(भा० ३। १०।१८, १९)

(इन श्लोकों का आशय मनु के प्रमाण में आ गया है)

छठा अध्याय

महाभारत।

पहिला अनुवाक

—:०:—

महाभारत शांति पर्व (मोक्ष-धर्म) १८२* अध्याय में यही प्रश्न उठाया गया है कि वृक्षों में जीव कैसे हो सकता है? अतः हम उस अध्याय का अर्थ सहित नीचे उद्धृत किये देते हैं —

"चेष्टा वायुः खमाकाश मूष्माऽग्निः सलिलं द्रवः।
पृथिवी चात्र संघातः शरीरं पाञ्च भौतिकम् ॥ ४ ॥
इत्येतः पञ्चभिर्भूत र्युक्तं स्थावर जङ्गमम्।

* यह सन १९०७ में निर्णयसागर यन्त्रालय बम्बई के छपे महाभारत के शान्ति पर्व पृ० २६१ पर मुद्रित है, परन्तु कलकत्ता (कालिज मैशिन प्रेस ११७।१ बाहूबाजार स्ट्रीट) के छपे हिन्दी महाभारत में इन श्लोकों को हम १८४ अध्याय में पाते हैं. इसी प्रकार एक दूसरी म० भा० में १८३ अध्याय में देखे गये, अतः पाठकगण ध्यान रक्खें।

श्रोत्रं घ्राणं रसः स्पर्शो दृष्टिश्चेन्द्रिय संज्ञिताः ॥ ५ ॥

भरद्वाज उवाच

पञ्चभिर्यदि भूतैस्तुयुक्ताः स्थावर जङ्गमाः ।
स्थावराणां न दृश्यन्ते शरीरे पञ्च धातवः ॥ ६॥
अनूष्माणामचेष्टानां घनानां चैव तत्वतः ।
वृक्षाणां नोप लभ्यन्ते शरीरे पञ्च धातवः ॥ ७ ॥
न शृण्वन्ति न पश्यन्ति न गन्ध रस वेदिनः ।
न च स्पर्शं विजानन्ति ते कथं पाञ्च भौतिकाः ॥८॥
अद्रवत्वादनग्नित्वादभूमित्वादवायुतः ।
आकाशस्याप्रमेयत्वाद्वृक्षाणां नास्ति भौतिकम् ॥९॥

भृगुरुवाच

घनानामपि वृक्षाणामाकाशोऽस्ति न संशयः ।
तेषां पुष्प फलं व्यक्ति नित्यं समुप पद्यते ॥१०॥
ऊष्मतो म्लायते पर्णं त्वक् फलं पुष्पमेव च ।
म्लायते शीर्यते चापि स्पर्शस्तेनात्र विद्यते ॥११॥
वाय्वग्न्यशनि निष्पेषैः फलं पुष्पं विशीर्यते ।
श्रोत्रेण गृह्यते शब्दस्तस्माच्छृण्वन्ति पादपाः ॥१२॥
वल्ली वेष्टयते वृक्षं सर्वतश्चैव गच्छति ।
नह्यदृष्टेश्च मार्गोऽस्ति तस्मात् पश्यन्ति पादपाः ॥१३॥
पुण्या पुण्यैस्तथा गन्धैर्धूपैश्च विविधैरपि ।

अरोगाः पुष्पिताः सन्ति तस्माज्जिघ्रन्ति पादपाः ॥१४॥
पादैः सलिल पानाच्च व्याधीनां चापि दर्शनात्।
व्याधि प्रति क्रियत्वाच्च विद्यते रसनं द्रुमे ॥१५॥
वक्त्रेणोत्पल नालेन यथोर्ध्वं जलमाददेत्।
तथा पवन संयुक्तः पादः पिबति पादपाः ॥१६॥
सुखदुःखयोश्चग्रहणाच्छिन्नस्यच विरोहणात्।
जीवं पश्यामि वृक्षाणाम चैतन्यं न विद्यते ॥१७॥
तेनतज्जलमादत्तं जरयत्यग्नि मारुतौ।
आहार परिणामाच्च स्नेहो वृद्धिश्च जायते ॥१८॥
इति महाभारते शान्ति पर्वणि मोक्ष धर्म पर्वणि १८२ अध्याये १८ श्लोकाः।

दूसरा अनुवाक।

—:o:—

भाषार्थ—यहां ऊपर से यह वर्णन आ रहा है कि यह सृष्टि किस प्रकार उत्पन्न हुई, इसी प्रसङ्ग में पंच तत्वों का वर्णन आ गया, आगे यों है—

भृगु जी कहते हैं कि, यह शरीर †पांच भौतिक है।

†यहां "शरीर" से मनुष्य, पशु, तथा वृक्ष के शरीरों से अभिप्राय है।

इस में चेष्टा (हिलना डोलना) वायु से है, छिद्र या अवकाश (आशयादि) आकाश से है, गरमी अग्नि से है, सब प्रकार की तरी जल से है, ठोसपना (भराव) पृथिवी से है. इस प्रकार शरीर में पांचो तत्व विद्यमान हैं ॥ ४ ॥

इन्हीं पंच महाभूतों वायु, आकाश, अग्नि, जल, पृथिवी नामक तत्वों से यह सब स्थावर[1] जंगम संसार रचा गया है। और इस में कान, नाक, जिव्हा, त्वचा, नेत्र ये पांच ज्ञानेंद्रियां विद्यमान हैं जिन से इन को प्रत्येक वस्तु का ज्ञान होता है ॥ ५ ॥

शंका (भरद्वाज जी की)

यदि स्थावर और जङ्गम इन पांच भूतों (तत्वों) में संयुक्त हैं, तो फिर स्थावरों (वृक्षादिकों) के शरीरों मे ये पांचो धातुयें (इन्द्रियां) क्यों नहीं दीख पड़तीं ? ॥६॥ उनमें न तो गरमी देखी जाती है और न वे चेष्टा करते (चलते-फिरते) हैं, ये सिर्फ ठोस होते हैं, इस लिए इन में पांच तत्वों की विद्यमानता मानना ठीक नहीं है ॥७॥ फिर वे न सुनते हैं, न देखते हैं, न गंध का ज्ञान रखते हैं, न रस (खट्टे मीठे आदि) का

---

[1] स्थावर शब्द से यहां जमे रहने वाले वृक्षादि और जङ्गम से चलने फिरने वाले मनुष्यादि प्राणी लिए गये हैं।

(स्पर्श ज्ञान या त्वचा इन्द्रिय) भी है, क्योंकि वे कुम्हलाते, हैं और गिरते हैं ॥११॥

हम देखते हैं कि आंधी चलने, अग्नि की लपटों र बिजली की तड़प से फल फूल गिर जाते हैं,* : मानना पड़ेगा कि वृक्षों में शब्द सुनने का ज्ञान ॥ १० ॥

लतायें अर्थात् बेल (वल्ली) वृक्षों या किसी आधार देखकर उसकी ओर बढ़ जाती हैं, और इच्छानुसार लकर वृक्ष पर लपट जाती हैं । यतः मार्ग बिना देखे ये नहीं सूझता, इसलिये मानना पड़ता है कि वृक्ष रूर देखते भी हैं ॥१३॥

यह देखा जाता है कि विविध प्रकार के सुगन्ध

---

*बन्दूक की धमक से पक्षियों का मूर्छित होकर गिर पड़ना मर जाना और तोप की आवाज से गर्भवती स्त्रियों के गर्भपात क हो जाना देखा जाता है, अतः जिस प्रकार शब्दों का प्रभाव म मनुष्यों, पशु पक्षियों पर पड़ता है, उसी प्रकार वृक्षों पर भी होना उनके हमारे सदृश जीवधारी होने का प्रबल प्रमाण है । (मङ्गलानन्द)।

देखने की यही युक्ति यूरोपियन वैज्ञानिकों ने भी प्रकट की है, जिसे हम प्रथम खण्ड में दर्शा आये हैं (मंग०)।

*दुर्गन्ध—धूप इत्यादि से वृक्षों के रोग दूर हो जाते हैं, और वे अच्छी प्रकार फूलने फलने लगते हैं, इसलि[ए] मानना पड़ेगा कि वृक्षों में नासिका इन्द्रिय है और सूँघते भी हैं ॥१४॥

यह देखा जाता है कि वृक्ष अपने पांवों† से पानी [...]

---

*जैसे अनेक प्रकार के खादों द्वारा वृक्ष पुष्ट होते [हैं] वैसे ही भिन्न २ प्रकार वाले सुगन्ध दुर्गंध के प्रभाव से [भी] वे प्रभावित होते ही हैं—कहा जाता है कि लौकी आ[दि] के नये पौधों पर यदि मनुष्य पेशाब करे तो वह ज[ल] जायगा। अर्थात हमारे मूत्र की दुर्गन्धि को सह[न] करने के लिये वह तैयार नहीं है।

नीम के वृक्ष के समीप छोटे पौधे नष्ट हो जाते [हैं] क्योंकि शायद नीम का गन्ध (क्षाररूप में) उन्हें सह[्य] नहीं होता। केलों के पौधे जहां लगाये जाते हैं, अप[ने] समीप वाले पौधों के लिए अत्यन्त लाभप्रद सिद्ध होते हैं अतः केले का सुगन्धि को ग्रहण करते हैं। इसी प्रकार अ[गर] जांच की जाय तो वनस्पति-शास्त्र-वेत्ताओं द्वारा पता लग[ेगा] कि धूप आदि से किन किन वृक्षों के कौन कौन से रोग निवृ[त्त] हो सकते हैं। (मङ्ग०)।

† संस्कृत में [वृ]क्ष को "पादप" = पांव से पीने वाल[ा] कहा गया है। वृक्ष की जड़ उस का मुख तथा मस्तिष्क है परन्तु वह नीचे होने के कारण हमारी दृष्टि में पाद-स्थानी[य] है (मङ्ग०)।

लेता है, उस मे (खराब खाद डालने से) रोगों की *उत्पत्ति भी हो जाती है और (अच्छे खाद तथा औषधि आदि के प्रयोग से) रोगों की निवृत्ति होती है, इसलिये मानना पड़ता है कि वृक्ष में रसना-इन्द्रिय भी है ॥ १५ ॥

देखो, जसे नल के द्वारा पानी ऊपर को उठाया जाता है, उसी प्रकार वृक्ष अपने मुख रूपी नल द्वारा पानी को ग्रहण कर लेता है। और वृक्ष अपने पांवों से (पानी को पवन † सहित पी लेता है (इसलिए उस में रसना इन्द्रिय अवश्य है) ॥ १६ ॥

वृक्षों मे सुख दुख‡ का ग्रहण करना पाये जाने से,

---

* जिस प्रकार देखा जाता है कि हम मनुष्य लोग जब कभी अधिक भोजन खा लेते हैं, तो शरीर रोगी हो जाता है; उसी प्रकार वृक्ष की भी दशा है, कि वह अपनी आवश्यकता (भूख) से जब कभी अधिक खा लेता है (वर्षा आदि में अधिक पानी सोख लेता है) तो रोगग्रसित हो जाता है (मङ्ग०) ।

† पवन अर्थात् नाइट्रोजिन आक्सीजन आदि ।

‡ जब कि पांचो ज्ञानेन्द्रियां वृक्षों में ऊपर बतला दी गई तो उन का सुखी दुखी होना सिद्ध ही है। हम मनुष्यों में भी तो यही पाते हैं कि अपने इन्द्रियों के द्वारा विषयों का आनन्द प्राप्त करते हुए सुखी तथा अभाव में दुखी होते हैं, यही दशा वृक्षों में भी समझना उचित है।

*दुर्गन्ध—धूप इत्यादि से वृक्षों के रोग दूर हो जाते हैं, वे अच्छी प्रकार फूलने फलने लगते हैं, इससे मानना पड़ेगा कि वृक्षों में नासिका इन्द्रिय है और सूँघते भी हैं ॥१४॥

यह देखा जाता है कि वृक्ष अपने पांवों में ...

*जैसे अनेक प्रकार के खादों द्वारा वृक्ष पुष्ट होते हैं वैसे ही भिन्न २ प्रकार वाले सुगन्ध दुर्गंध के प्रभाव से वे प्रभावित होते ही हैं—कहा जाता है कि ... के नये पौधों पर यदि मनुष्य पेशाब करे तो ... जायगा। अर्थात हमारे मूत्र की दुर्गन्धि को ... करने के लिये यह तैयार नहीं है।

लेता है, उस से (खराब खाद डालने से) रोगों की *उत्पत्ति भी हो जाती है और (अच्छे खाद तथा औषधि आदि के प्रयोग से) रोगों की निवृत्ति होती है, इसलिये मानना पड़ता कि वृक्ष में रसना-इन्द्रिय भी है ॥ १५ ॥

देखो, जैसे नल के द्वारा पानी ऊपर को उठाया जाता उसी प्रकार वृक्ष अपने मुख रूपी नल द्वारा पानी को ग्रहण कर लेता है। और वृक्ष अपने पांवों से (पानी को पवन † सहित पी लेता है (इसलिए उस में रसना इन्द्रिय अवश्य है) ॥ १६ ॥

वृक्षों में सुख दुख‡ का ग्रहण करना पाये जाने से,

---

* जिस प्रकार देखा जाता है कि हम मनुष्य लोग जब कभी अधिक भोजन खा लेते हैं, तो शरीर रोगी हो जाता है; उसी प्रकार वृक्ष की भी दशा है, कि वह अपनी आवश्यकता (भूख) से जब कभी अधिक खा लेता है (वर्षा आदि में अधिक पानी सोख लेता है) तो रोगग्रसित हो जाता है (मह०)।

†पवन अर्थात् नाइट्रोजिन आक्सीजन आदि।

‡ जब कि पांचो ज्ञानेन्द्रियां वृक्षों में ऊपर बतला दी गई तो उन का सुखी दुखी होना सिद्ध ही है। हम मनुष्यों में भी तो यही पाते हैं कि अपने इन्द्रियों के द्वारा विषयों का आनन्द प्राप्त करते हुए सुखी तथा अभाव में दुखी होते हैं, यही दशा [illegible] है।

जागरण रोग भेषज़ प्रयोग बीज सजातीयानुबन्धानकूलो प्रतिकूलापगमादिभ्यः प्रसिद्ध शरीर वत्*। (उदयन पृथिवी रूपणम्)

भाषार्थ-(अंगरेजी का)

बुद्ध धर्म की पुस्तक धर्मोत्तरा की न्यायबिन्दु टीका कई वृक्षों के रात्रि समय में शयन करने और पत्तियों संकुचित हो जाने की बात कही गई है।

उदयन ने पौधों में जीवन, मृत्यु सोना, जागना, रोग, दवाई ते रहना, गर्भो की दशा में खास २ प्रकार स्वभावों का पड़ जाना, अपने अनुकूल वस्तुओं को ग्रहण करना और प्रतिकूल से दूर हट जाने की चेष्टा करना—न सब बातों को देखा है।

---

*यह मूलपाठ उसी अंगरेजी पुस्तक में था।

वृक्षों के गर्भ की दशा यह है, कि जब बीज भूमि में बो दिए जाने पर अँखुआ फोड़ने के प्रयत्न में [उसका जीवात्मा] प्रवृत्त रहता है। जैसे मनुष्य का बालक गर्भ में माता के कार्यों, गतियों, विचारों आदि से प्रभावित हो कर उसे ही स्वभाव वाला बन जाता है, उसी प्रकार यहां कहते हैं कि वे वृक्ष के बच्चे भी पृथिवी रूपी माता के अन्दर गर्भ धारण करते हुए उसी न्यूनाधिक सरदी गरमी आदि में रक्खे जाते हैं, वैसे ही बन जाते हैं (मंगलानंद)

सातवां अध्याय।

जैन बौद्ध मतों की साक्षी।

पहिला अनुवाक।

जैन और बौद्ध सम्प्रदायों की उत्पत्ति इसी भारत
हुई थी, और उनके साहित्य दो सहस्र वर्षों से पूर्व स
परिचय दे देते हैं; अतः देखना चाहिये कि प्राचीन का
जो सिद्धांत परम्परागत आते रहे हैं, वे उनके ग्रन्थ
किस रूप में सुरक्षित हैं :-

हमें इस तात्पर्य की पूर्ति के निमित्त एक पुस्तक अंग्रेजी
मिल गई, जिसका नाम the positive sciences of
ancient Hindoos अर्थात् "प्राचीन हिन्दुओं का
ज्ञान" है। इस को श्रीयुत ब्रजेन्द्रनाथ जी एम०ए०
अफ फिलासफी कलकत्ता विश्वविद्यालय ने रचा है।
पृष्ठ १७३ आदि से हम कुछ बातें (अंगरेज़ी से भावार्थ
) प्रकाशित करते हैं :-

"स्वापः रात्रौ पत्र-सङ्कोचः..............................
...वृक्षादयः प्रति नियत भोक्तृयधिष्ठिताः जीवन मरण

जागरण रोग भेषज प्रयोग बीज सजातीयानुबन्धानकूलो प्रतिकूलापगमादिभ्यः प्रसिद्ध शरीर वत्*। (उदयन, पृथिवी पणर्म्)

भाषार्थ-(अंगरेजी का)

बुद्ध धर्म की पुस्तक धर्मोत्तरा की न्यायबिन्दु टीका कई वृक्षों के रात्रि समय में शयन करने और पत्तियों संकुचित हो जाने की बात कही गई है।

उदयन ने पौधों में जीवन, मृत्यु सोना, जागना, रोग, दवाई ते रहना, गर्भ† की दशा में खास २ प्रकार स्वभावों का पड़ जाना, अपने अनुकूल वस्तुओं को ण करना और प्रतिकूल से दूर हट जाने की चेष्टा करना— सब बातों को देखा है।

---

*यह मूलपाठ उसी अंगरेजी पुस्तक में था।

†वृक्षों के गर्भ की दशा यह है, कि जब बीज भूमि बो दिए जाने पर अँखुआ फोड़ने के प्रयत्न में[उसका ीवात्मा] प्रवृत्त रहता है। जैसे मनुष्य का बालक गर्भ माता के कार्यों, गतियों, विचारों आदि से प्रभावित हो र वैसे ही स्वभाव वाला बन जाता है, उसी प्रकार यहां हते हैं कि वे वृक्ष के बच्चे भी पृथिवी रूपी माता के न्दर गर्भ धारण करते हुए जैसी न्यूनाधिक सरदी गरमी दि में रक्खे जाते हैं, वैसे ही बन जाते हैं (मंगलानंद)

सातवां अध्याय।

जैन बौद्ध मतों की साक्षी।

पहिला अनुवाक।

जैन और बौद्ध सम्प्रदायों की उत्पत्ति इसी भारतवर्ष में हुई थी, और उनके साहित्य दो सहस्र वर्षों से पूर्व समय का परिचय दे देते हैं; अतः देखना चाहिये कि प्राचीन काल से जो सिद्धांत परम्परागत आते रहे हैं, वे उनके ग्रन्थों में किस रूप में सुरक्षित हैं :–

हमें इस तात्पर्य की पूर्ति के निमित्त एक पुस्तक अंग्रेज़ी में मिल गई, जिसका नाम the positive sciences of the ancient Hindoos अर्थात् "प्राचीन हिन्दुओं का यथार्थ ज्ञान" है। इस को श्रीयुत ब्रजेन्द्रनाथ जी एम०ए० डाक्टर अफफिलासफी कलकत्ता विश्वविद्यालय ने रचा है। इस के पृष्ठ १७२ आदि से हम कुछ बातें (अंगरेज़ी से भावार्थ कर के) प्रकाशित करते हैं :–

"स्वापः रात्रौ पत्र-सङ्कोचः.........................

......वृक्षादयः प्रति नियत भोक्त्रयधिष्ठिताः जीवन मरण

६ वृक्ष के रोगों तथा इलाजों का जहां वर्णन आया है उस से पता लगता है कि उन का बढ़ना या घटना अनुकूल या प्रतिकूल भोजन के आधार पर निर्भर है।

७—रोगी होना।

८—रोगों का निवारण होना, या औषधियों के लगाने से जख्मों का पुर जाना।

ही खाद्य को ग्रहण करेगा। आम का पेड़ भारत जैसे ग्रीष्म प्रधान देश में हरा भरा रहता है, पर वही काबुल काशमीर या लन्दन, पेरिस आदि शीत प्रधान देशों में मर जायगा। इस के विरुद्ध द्राक्ष (अंगूर) काबुल आदि में उपजता है पर लखनऊ आगरा आदि की गरमी को सहन नहीं कर सकता। हम मनुष्यों की भी तो यही दशा है—यूरोपियनों को को भारत जैसे गरम देश में खास प्रबन्ध से रहने पर भी कष्ट होता है। हिमालय की तराई बदरिकाश्रम आदि में हम लोग शीतकाल में नहीं रह सकते इसी कारण सरकार ने यात्रा केवल गरमी में रक्खी है (मङ्ग०)।

---

* पूरी अनुकूलता का ख़ास प्रबन्ध करके तो लन्दन नगर की वाटिका में भी "आम" के पेड़ को सुरक्षित जीवित रक्खा जा सका है। या भारत में द्राक्ष (अंगूर) को भी उपजा लेते हैं, परन्तु इस निमित्त उन्हें अनुकूल गरमी सरदी देने के लिये कितना बहु मूल्य प्रबन्ध किया गया होगा यह विचार सकते हैं (मङ्ग०)।

दूसरा अनुवाक

उसी पुस्तक में और भी यों लिखा है—

जैन मतावलम्बी लेखक श्री गुण रत्न जी षड्दर्शन समुच्चय के भाष्य में (सिर्का Circa १३५० में प्रकाशित हुआ है) ऐसा वर्णन करते हैं — कि

वृक्षों के जीवन-स्वभाव निम्न प्रकार के हैं—

१—वाल्यावस्था, युवा० वृद्धा० ।

२—विधि पूर्वक वृद्धि का होते रहना ।

३—बहुतेरे प्रकार की गतियें या कार्य ऐसे होते रहते हैं कि जिन से उन में सोना जागना और स्पर्श के प्रभाव से विस्तार (फैल जाना) सङ्कोच (सिकुड़ जाना) प्राप्त कर लेता और इतने पर भी किसी खम्भे या सहारे की ओर झुकने की चेष्टा का पाया जाना देखा जाता है ।

४—जख़मों का सूख जाना या अङ्गों का शिथिल हो जाना ।

५—पृथिवी के स्वभाव* अनुसार खाद्य पदार्थों का ग्रहण करना ।

---

*जो वृक्ष जहां आ जाता है उसी देश के जल, वायु, पृथिवी के प्रभाव से इतना प्रभावित रहता है, कि तदनुकूल

हर की रची हुई है। गुण रत्न तर्क रहस्य दीपिका शैन श्लोक ४९ के अनुसार)।

———:o:———

तीसरा अनुवाक।

—o—

इसी गुण रत्न जी की पुस्तक में एक सूची ऐसे पौधों की दी हुई है, जिन में सोने जागने के स्पष्ट चिह्न दृष्टिगोचर होते हैं।

इस ग्रन्थ कर्ता ने यह भी ज्ञात किया है कि पौधों में भावोत्पादक स्पर्श ज्ञान विद्यमान है, जैसे कि लज्जावती लता है। जो छूते ही झट अपने अवयवों (पत्तियों) को संकुचित कर लेती है। यहां मूल पाठ प्राकृतिक भाषा का निम्न प्रकार दिया हुआ है :—

"समी प्रपुन्नाट सिद्धे सका सन्दक षप्पूलागस्त्या मलकी कति प्रभृतीनां स्वाप विबोधतः।

लज्जालु प्रभृतीनां हस्तादि संसर्गात् पत्र सङ्कोचादिका परिस्फुट किया उपलभ्यते

इस का आशय ऊपर आ चुका है

९—वृक्षों के अन्तर्गत रसों का सूख जाना या बढ़ जाना, जैसा कि मनुष्यों पशुओं में रुधिर की न्यूनाधिक्य से उनका मोटे या दुबले हो जाना देखा जाता है।

१०—गर्भ की दशा में खास प्रकार के खाद पदार्थों की आवश्यकता का होना।

मूल श्लोक ये हैं—

विशिष्ट दो हृदादि मत्वं विशिष्ट
स्त्री शरीर वत् यथा स्त्री शरीरस्य
तथा बिध दो हृदं पूरणात् पु
त्रादि प्रसवनं तथा वनस्पति श
रीरास्यापि तत् पूरणात् पुष्प फलादि प्रसवनं

और भी लिखा है कि वनस्पति (जिस में फूल तो न आयें परन्तु फल उत्पन्न हो जांय) में फूल भी फुलाये जा सकते है?*

(देखो पुस्तक " वृक्षों की पोषण विधि जो श्री बा

* इस से स्पष्ट है कि प्राचीत भारत विज्ञान की उस उन्नति-शिखर पर पहुंच चुका था, जहां अभी तक यूरोप न जा सका, क्योंकि गूलर आदि वनस्पति वृक्ष में प्राचीन आर्य कृत्रिम पुष्प उपजा सके थे, जो कार्य वर्तमान संसार के लिए अभी असम्भव सदृश है (मंग०)

ुष्यों में चित्त है, वैसे ही वह वनस्पतियों में भी है। ाघात पहुंचाने से जैसे मनुष्य पीड़ित होता है, वैसे ही नस्पतियां भी होती हैं। जैसे मनुष्य अमर नहीं है, वैसे ी वनस्पतियां भी नहीं हैं। जैसे मनुष्य छीजता है, वैसे भी कुम्हलाती हैं। जैसे मनुष्य की वृद्धि होती है, से इनकी भी होती है। जैसे मनुष्य में परिवर्तन होता है, वैसे इन में भी होता रहता है।"

(देखो पुस्तक डाक्टर सर जगदीशचन्द्र बसु और नके आविष्कार पृष्ठ २९-३०)।

इन उद्धरणों से स्पष्ट सिद्ध हो रहा है कि ेद्या प्रेमी अन्वेषण-कर्ता, सत्यग्राही जैन तथा बौद्ध विद्वानों े भी यही सीखा और सिखाया था कि वृक्षों में र्मी लोगों के सदृश सब बातें हैं, अतः वे जीवधारी हैं।

चौथा अनुवाक।

—:o:—

ज्ञान (VI Consciousness)

उसी पुस्तक में और भी कहा गया है कि:—

"भानुमती पुस्तक में चक्रपाणि जी कहते हैं कि वृक्षास्तु चेतनावन्तोऽपि तमश्छन्न ज्ञानतया शास्त्रोपदे विषया एव"।

अर्थ—वृक्ष चेतन होने पर भी "तम" से भरे ज्ञान वाले हैं, यह विषय शास्त्र के उपदेश से ही ज्ञात सकता है।..................और उदयन का भी कथन है कि वृक्षों की दशा एक प्रकार की अन्धक मय मोह युक्त चेतनता वाली है, जो बहुत अधिक युक्त है।

पाचवां अनुवाक।

—:o:—

आचाराङ्ग सूत्र नामक जैनियों का एक प्राचीन ग्र है। इस में एक जगह वनस्पति और मनुष्य की तुल की गई है। इसमें कहा है कि:—

"जन्म लेना और बूढ़ा होना मनुष्य के लिए प्रकृ सिद्ध है। वनस्पतियों की भी यही दशा है।

नुष्यों में चित्त है, वैसे ही वह वनस्पतियों में भी है। आघात पहुंचाने से जैसे मनुष्य पीड़ित होता है, वैसे ही वनस्पतियां भी होती हैं। जैसे मनुष्य अमर नहीं है, वैसे ही वनस्पतियां भी नहीं हैं। जैसे मनुष्य छीजता है, वैसे ये भी कुम्हलाती हैं। जैसे मनुष्य की वृद्धि होती है, वैसे इनकी भी होती है। जैसे मनुष्य में परिवर्तन होता है, वैसे इन में भी होता रहता है।"

(देखो पुस्तक डाक्टर सर जगदीशचन्द्र बसु और उनके आविष्कार पृष्ठ २९-३०)।

इन उद्धरणों से स्पष्ट सिद्ध हो रहा है कि विद्या प्रेमी अन्वेषण-कर्ता, सत्यग्राही जैन तथा बौद्ध विद्वानों ने भी यही सीखा और सिखाया था कि वृक्षों में हमीं लोगों के सदृश सब बातें हैं, अतः वे जीवधारी हैं।

आठवां अध्याय।

वैद्यक का निर्णय।

—:o:—

पहला अनुवाक।

—:o:—

अब हम वैद्यक के ग्रन्थों में से कुछ प्रमाण सुनाते हैं, जिन से वृक्षों का जीवधारी होना सिद्ध होगा।

अजमेर के सुविख्यात वैद्य श्रीमान राम दयाल जी के पास एक पुस्तक बिना छपी "ज्वर रोग" विषयक विद्यमान है, उसमें निम्न लिखित श्लोक हैं:—

तरुषु खोरकं चैव, पर्वतेषु शिला जतु।
लतासु ग्रन्थिकाश्चैव, धान्येषु रोलिकास्तथा॥

अर्थ—(ज्वर के वर्णन में कहते हैं कि) वृक्षों में खोरक नामी रोग होता है, पर्वतों से जो शिलाजीत उत्पन्न होती है वह उसके रोग का चिह्न है। लताओं (वेलों) में गांठें (बांदा) और धान्य (अनाजों के पौधों) में रोलिकाएँ पड़ जाना उनके रोग के चिह्न हैं।

प्रश्न—यहां तो पर्वत आदि के रोगी होने की बात भी कही गई है। अतः अगर इस प्रमाण से वृक्षों को

होने से उन्हें जीवधारी मानोगे, तो पर्वतों आदि को भी न्याय से जीवित मानना पड़ेगा ?

उत्तर—पर्वतादि के जीवधारी होने न होने का विचार तीसरे खन्ड में आवेगा

दूसरा अनुवाक।

—:o:—

डाक्टर ब्रजेन्द्रनाथ एम०ए० अपनी पुस्तक Positive ...nce में लिखते हैं:—

"श्री शंकर मिश्र जी अपने ग्रन्थ उपस्कार में यह ... करते हैं कि वृक्षों में घाव लगने पर उस अवयव भग्न क्षत स्थान पर याने जहां वह घाव लगा है समृद्धि (घाव की पूर्ति) *के विशेष लक्षण देखे जाते ... (देखो पुस्तक उपस्कार अध्याय ४। आह्निक २। सूत्र ५) Sacred Book of the Hindoos Volume 6th अवश्य ही यह दशा वृक्षों की पूर्णतया हम लोगों के ... मिलती जुलती हुई है। मनुष्य के शरीर में भी ... जखम लग जाता है, तो उस घाव की पूर्ति का सामान

*मूल में—"भग्न क्षत संरोहणो च" लिखा है।

अन्दर से होने लगता है, यहां तक कि अगर दवा इला...
कराया जाय तो भी कुछ दिनों में उस घाव की पू...
होजाना सम्भव है। लेकिन मुर्दा शरीर में ऐसा न होगा...
इस लिए मानना पड़ता है कि जिन्दा मनुष्य के रोगी औ...
आरोग्य होजाने की सादृश्यता वृक्षों में पाई जाती है, अत...
वे जीवधारी हैं।

तीसरा अनुवाक ।

—:o:—

उक्त डाक्टर ब्रजेन्द्र नाथ जी उसी पुस्तक में और...
कहते हैं :—

वृक्षों में पुरुष स्त्री होने के चिह्नों की व्या...
विचित्र प्रकार की की गई है, जो (चिह्न) स्पष्ट नहीं है...
पुंकेसर (पुल्लिङ्ग) को रजस, पुष्प, प्रसून " नाम दि...
गया है । ये ही नाम मानषी स्त्रियों के रजो धर्म...
भी बोले जाते हैं । और अमर कोष ने स्पष्ट ही व...
कर दिया है; कि स्त्रियों और पुष्पों के निमित्त एक...
प्रकार के शब्द प्रचलित हैं, उसका वाक्य यों है:—

स्त्रीणां सुमनसां पुष्पं प्रसूनं समम् " । (अमर...

………फिर राजनिघण्टु (नामी सुविख्यात वैद्यक ग्रन्थ) में लिखा है कि:—

"अनूपादि प्रथमो वर्गः, स्त्री पुं नपुंसकत्वेन भै विध्यं स्थावरेष्वपि।"

अर्थात् स्थावरों (वृक्षों) में भी स्त्री पुरुष नपुंसक ये तीन भेद (जैसे मनुष्यों आदि में हैं) होते हैं।

चौथा अनुवाक।

—:o:—

वैद्यक के अत्यन्त प्राचीन ग्रन्थ चरक में वृक्षों के पुरुष स्त्री होने का वर्णन आया है, जो इस प्रकार है:—

स्त्री, पुरुष भेद।

बृहत् फलः श्वेत पुष्पः स्निग्ध पत्रः पुमान् भवेत्।
श्यामा चारुण पुष्पी स्त्री फल वृन्तैस्तथाणुभिः ॥३॥

अर्थ (जिस कुटज वृक्ष में बड़ी बड़ी लम्बी फलियें हों और फूल सफेद हों तथा पत्र चिकने हों, उसे पुरुष जाति का कुटज (कूड़ा) वृक्ष जानना। और जिस में फूल काले या लाल वर्ण के हों, फली और डंडी छोटी हों उसे स्त्री जाति की कुड़ा जानना ॥३॥

(चरक संहिता भाषा टीका कल्पस्थान अ०५ श्लो ३, वेङ्कटेश्वर प्रेस बम्बई का छपा पृष्ठ १७१३)।

पाचवां अनुवाक ।

—:o:—

वैद्यक की एक प्राचीन पुस्तक "बृहत् *संहिता" में भी वृक्षों के रोगी होने और उसके इलाज का भी वर्णन आया है, देखो:—

शीत वातातपै : रोगो जायते पाण्डु पत्रता।
अवृद्धिश्च प्रबालानां शाखा शोषो रस श्रुतिः।१॥
चिकित्सितमथैतेषां शस्त्रेणादौ विशोधनम्।
विडङ्गघृत पङ्काक्तान् सेचयेत् क्षीर वारिणा॥२॥

(बृहत् संहिता अ० ५५ श्लो०१५)

अर्थ—(वृक्षों में) सरदी गरमी और वायु के वेग के कारण " पाण्डु पत्रता,, (पत्तियों का पीला हो जाना) रोग उत्पन्न हो जाता है। अगर यह रोग वाले—वृक्ष यानि छोटे पौधों में होगा, तो उनका बाढ़ रुक जायगा। किन्तु

*यह ज्योतिष और वैद्यक दोनों शास्त्रों का ग्रन्थ है।

बड़े पेड़ों में केवल शाखाओं का सूख जाना और रस का बह निकलना मात्र से गा। १।इस राग की चिकित्सा यह है कि प्रथम फावड़े आदि से उस रोग—स्थान के उतने ऊपरी भाग को छील कर फक दें, पश्चात् घी, दूध और पानी (इन तीनों) से पौधे या पेड़ की जड़ को सींचें॥२॥

अवश्य ही इन बातों से वृक्षा को हमारे सदृश जीव ी मानना पड़ेगा।

नवां अध्याय।

" न्याय दर्शन "

पहिला अनुवाक

—:o:—

पुराण, महाभारत आदि से ऊंचा दरजा संस्कृत साहित्य में षट्-दर्शनों का माना जाता है, जिन में प्रथम स्थान " न्याय दर्शन " का है। इस लिए अब हम उसी को खोलते हैं देखें वहां क्या मिलता है—

यहां ४ थी अध्याय के प्रथम आन्हिक के १४ से १८ सूत्र तक एक ऐसा विवाद चलाया गया है कि जिसमें वृक्ष का चैतन्य होना सिद्ध हो जाता है, अतः सुनिये:—

अभावाद्भावोत्पत्तिर्नानुपमृद्य प्रादुर्भावात्॥ (न्याय ४।१।१४)

अर्थ – (पं प्रभुदयाल जी का)

" बिना उपमर्दन से (उपमर्दन करि के) नष्ट किये, उत्पन्न न होने से, अभाव से भाव की उत्पत्ति होती है १४॥

(भाष्य) अभाव से भाव की उत्पति होती है, यह पक्ष है; अभाव से भाव उत्पन्न होने में हेतु यह है

कि बीज का बिना उपमर्दन (तोड़ कर नाश) किया अङ्कुर उत्पन्न नहीं होता। जब उपमर्दन से बीज का नाश हो जाता है, उसके पश्चात् बीज के अभाव से अङ्कुर की उत्पत्ति होती है; इस से अभाव से भाव की उत्पत्ति होना सिद्ध होता है। इस से कोई सजातीय वा विजातीय कारण मानने की आवश्यकता नहीं है, अब इसका उत्तर वर्णन करते हैं ॥१४॥

इस सूत्र में भाव अभाव (हस्ती नेस्ती) का वर्णन है, परन्तु प्रसङ्ग वश वृक्ष का वर्णन आ गया है, कि क्या बीज के अभाव (नाश) कर दिये जाने से वृक्ष की उत्पत्ति होती है, या इसके विपरीत, अगले सूत्र में त्तर देखिये—

दूसरा अनुवाक।

—:o:—

व्याघातादप्रयोगः ॥१५।

व्याघात से प्रयोग नहीं है (प्रयोग युक्त नहीं है) ॥१५॥

(भाष्य)—यह कहना कि बीज का नाश करिके

अङ्कुर उत्पन्न होता है, असङ्गत है, क्योंकि यह कहने में व्याघात दोष है, अर्थात् कहने में विरोध है। विरोध यह है कि जो **मर्दन करता है वह जब विद्यमान होगा तब मर्दन करेगा,** इससे यह कहना कि मर्दन करिके अर्थात् बीज को मर्दन से नष्ट करिके पीछे उत्पन्न होता है, असंगत है। क्योंकि जो पीछे उत्पन्न होता है, बीज के नाश करने के समय में नहीं है, उसके विद्यमान न होने से उपमर्दन (नाश) होना अर्थात् उसका नाश करने वाला होना असम्भव है* ॥१५॥

---

*इसका आशय यों है:—

अगर यह माना जाय कि बीज के भीतर जो कुछ था उसका नाश कर डाला गया, और तब पौधा उगा तो यह इसलिए ठीक नहीं हो सक्ता कि बीज के भीतर जो कुछ था उसी से तो पौधा बनता है और उसी वस्तु (जो कुछ था) को तो उपमर्दन (नाश) किया गया ("नाश" शब्द से यहां रूप बदलना समझो)। सो उपमर्दन क्रिया का करने वाला भी वहां मौजूद रहना चाहिए अगर उस उपमर्दन कर्ता की विद्यमानता न मानोगे, तो उस क्रिया का ही अभाव मानना पड़ेगा, और ऐसा होने से पौधे की उत्पत्तिही असम्भव हो जायगी। इसलिए "जो कुछ है" उसका उपमर्दन द्वारा अभाव भारी भूल है। (मंगलानन्द)।

पाठकगण ! हमने जिन शब्दों को मोटा कर दिया है उन्हें ध्यान से पढ़िये, और देखिये कि यहां यह कहा गया है कि बीज में जो शक्ति उसका मर्दन करती है (याने उस में से अँखुआ फाड़ती है) वह उसमें अगर मौजूद न रहे, तो मर्दन कैसे हो सके। अतः जानना चाहिए कि यहां पर "बीज में उपमर्दन करने वाली"—एक शक्ति माना गई है, अतः उसे ही "जीव" समझना चाहिए।

—————

तीसरा अनुवाक।

—०—

इस (अभावात्०) वें १४ सूत्र को श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती महाराज ने भी सत्यार्थ प्रकाश अष्टम समुल्लास पृष्ठ २२६–७ पर उठाया है, और प्रश्न कर्ता की ओर से १४ वें सूत्र को रख कर आगे उत्तर अपने शब्दों में यों दिया है कि:—

"उत्तर–जो बीज का उपमर्दन करता है, वह प्रथम ही बीज में था, जो न होता तो उपमर्दन कौन करता, और उत्पन्न कभी नहीं होता ॥३॥"

इस से भी हमारी ऊपरी बात की पुष्टि होती है कि "जो बीज का उपमर्दन करता है वह जीवात्मा है, जो उस बीज में बैठ कर अपना कार्य (प्रयत्न) कर रहा है, अतः न्याय दर्शन से भी वृक्ष में जीव का होना सिद्ध हो रहा है"

—:o:—

चौथा अनुवाक ।

—:o:—

प्रश्न– वाह ! न्याय-दर्शन में तो कहीं स्पष्ट ऐसा नहीं कहा गया, और बीज का उपमर्दन करने वाली शक्ति वह हम परमात्मा को मान सकते हैं, क्योंकि वह सर्व-व्यापक होने से बीज में भी तो विराजमान है ?

उत्तर– दर्शनों में सूत्र रूप अर्थात् अत्यन्त संक्षेप में विषय को कहा जाता है। इस प्रमाण से बीज में उपमर्दन करने वाली शक्ति का उल्लेख है, अतः वही शक्ति चेतन जीवात्मा कहलायेगी। क्योंकि अगर जीव न मानें, तो जड़ बीज के अवयव या अणु अथवा परमाणु चेतन का काम (उपमर्दन करना) नहीं कर सकता, यदि परमात्मा को मानें, कि वह वहां बैठा हुआ उस बीज में से पेड़ बनाने का

त्न कर रहा होगा! सो ऐसा नहीं हो सकता, क्योंकि
मात्मा तो हवा, पानी, मट्टी आदि सभी वस्तुओं में व्यापक
फिर उनमें भी चेतनता के लक्षण क्यों न पाये जांय,।
ा यह कहोगे कि परमात्मा एक जगह पर तो व्यापक होता
आ स्वयं प्रयत्न भी कर रहा है, और दूसरी जगहों पर
चुपचाप बैठा हुआ है, वाह! ऐसा क्योंकर हो सकता है!!।

पांचवां अनुवाक।

एक प्रमाण और भी सुनिये—

न्याय दर्शन पर श्री वात्स्यायन मुनि जी का भाष्य प्रामाणिक
माना जाता है, इस में हम ५८ सूत्र के भाष्य में यों पढ़ते हैं :—

" नियमानियमौ तु तद्विशेषकौ ॥ [न्या० ३।२।४०]

भाष्य........." अन्यत्रापि च तत्र स्थावर शरीरेषु
तद्वयव व्यूह लिङ्गः प्रवृत्ति विशेषो भूतानामन्य गुण निमित्त
इति स च गुणःप्रयत्न समानाश्रयः संस्कारो धर्मोऽधर्मःसमाख्यात
सर्वार्थः पुरुषा र्थाराधनाय प्रयोजकोभूतानांप्रयत्नवदिति॥ प्रवृत्ति
निवृत्ती च प्रत्यगात्मनि दृष्टे परत्र लिङ्गम् इति वै०(वै० ३।१।२०)

अर्थ—(यहां जीवात्मा के लक्षणों-इच्छा द्वेष प्रयत्न आदि)

का प्रकरण चल रहा है) ....

..........और भी दूसरी जगहों में यों है कि जङ्गम और स्थावर के शरीरों में उनके अवयवों की रचना का चिह्न, जो विशेष प्रकार की प्रवृत्ति है, भूतों के अन्य गुणों की निमित्त सिद्ध हो रही हैं। और वे गुण प्रयत्न का आश्रय रखने वाले, धर्म अधर्म के संस्कारों वाले सर्व प्रकार के अर्थों वाले, पुरुषार्थों का आराधन कराने वाले, निदान भूतों को प्रयत्न में ही तत्पर कराने वाले होते हैं, और वैशेषिक ३।१। २० में भी कहा गया है कि अपने आत्मा जैसा सब को जानें।"

इस में खास बात विचारणीय यह है कि यहां जो जीवधारियों के पुरुषार्थी और प्रयत्न वाले होने का वर्णन किया गया है, यह दोनों प्रकार वालों अर्थात जंगम और स्थावर (याने चलने फिरने वाले और स्थिर रहने वाले= वृक्षों) के शरीरों के लिए कहा गया है।

पाठक ऊपर स्थावर शब्द के साथ "शरीर" शब्द ध्यान से पढ़ लें, और विचार करें कि श्री वात्स्यायन मुनि जी का अभिप्राय वृक्षों को चेतन प्रकट करने के सिवाय यहां दूसरा और क्या हो सकता है ? कुछ नहीं।

——(:)o(:)——

दसवां अध्याय।

वैशेषिक दर्शन।

—:o:—

पहिला अनुवाक।

—:o:—

हमारे प्रतिपक्षी लोग बड़ा शोर मचा रहे हैं, कि वैशेषिक दर्शन वृक्षों में जीव नहीं मानता, नहीं मानता इत्यादि, अच्छा आइये पाठक गण! देखें उनकी यह बात कहां तक ठीक जंचती है:—

स्वामी दर्शनानन्द जी का उर्दू वैशेषिक पढ़ते हुये (पृष्ठ १५८ पर) हमने देखा कि ....."जो लोग दरख्तों के बढ़ने में जीव को सबब मान कर वृक्षों में वृक्ष का अभिमानी जीव तस्लीम करते हैं, उन्हें वैशेषिक के इस सूत्र को ग़ौर से पढ़ना चाहिये।"

इस आदेश के अनुसार हमने उस सूत्र को बड़े ध्यान पूर्वक पढ़ा, तो आश्चर्य्य हुआ कि जिस सूत्र से खास हमारे पक्ष की पुष्टि हो रहा है, उस ही को क्योंकर स्वामी दर्शनानन्द जी अपनी ओर खींच रहे हैं। वाह! वाह!!!

पाठकों की सेवा में हम इस सूत्र को अर्थ सहित उपस्थित किये देते हैं:—

वृक्षाभिसर्पणमित्यदृष्टकारितम् ॥ (वैशेषिक ५।२।७)

(इस पर प० तुलसीराम जी का अर्थ यों है:—)

अर्थ — (इति) यह (अदृष्ट कारितम) अदृष्ट वृक्षस्थ जीव शक्ति का कराया हुआ काम है, कि (वृक्षाभिसर्पणम्) वृक्ष की ओर पानी का खिंच आना ॥

वृक्ष की जड़ में दिया हुआ पानी ऊपर को वृक्ष के पत्र और शाखाओं में पहुंच जाता है, उसका कारण वह अदृष्ट शक्ति है जो जीवित वृक्ष में परमात्मा ने छिपी हुई रक्खी है ॥७॥

यहां वृक्ष के जीवित होने की युक्ति ही यह दी गई है कि पानी को उनका जीवात्मा नीचे से ऊपर खींच कर फल फूलादि उपजाता है।

दूसरा अनुवाक ।

—:०:—

हम इस सूत्र पर एक अङ्गरेजी टीका भी प्रस्तुत किये देते हैं।—

पाणिनि आफ़िस इलाहाबाद के अङ्गरेजी वैशेषिक दर्शन में इस सूत्र की टीका निम्न प्रकार है:—

7-the circulation (of water) in trees caused by Adrishtam (205).

omment).

Upaskara-Water poured at the root, goes in all directions through the interior of tree. Neither impulse and impact nor the n's rays prevail these. How, then, is it used ? He gives the answer.

Abhisarpanam—means flowing towards or ll over. That takes place in a tree, of water oured at its root. It is caused by *Adrishtam* *e.* of those* *souls* whose pleasure or pain is produced by the growth of the leaves, branches, fruits, flowers etc. The meaning, then is that action by which water rises up and causes the growth of trees, arises from conjunction with the above mentioned souls, possessing Adrishtam, as its non-combinative cause, and from Adrishtam, as its efficient cause, in water which is its combinative cause :—

*Italics are ours —

इसका आशय यही है; जो ऊपर के सुक्तोपास जो
के आगे में आ चुका है।

तीसरा अनुवाक।

प्रश्न—हम (स्वामी दर्शनानन्द) यह मानते हैं कि अतः सूत्र का आशय यह है कि "जिन के सुख दुःख वृक्ष के फलों फूलों आदि से होने सम्भव हैं, उसी चेतन आत्मा की प्रेरणा से वृक्ष के जड़ में डाला गया पानी ऊपर को चढ़ जाता है, इसलिए यों समझो कि यतः वृक्ष के फल फूलादि से हम मनुष्यों के जीवात्माओं को सुख दुःख मिलता है, अतः हम जीवों ही के लिए ऐसा होता है, किन्तु वृक्षों के जीव का आशय नहीं है, क्योंकि वहां तो वस्तुतः जीव है ही नहीं ?

उत्तर—आप की बात इसलिए मानने योग्य नहीं है, कि हम लोगों के शरीरों में बैठे रहने वाले जीवात्मा वृक्षों की जड़ों के पानी को ऊपर नहीं खींच सकते। यहां तो प्रश्न यही चल रहा है कि जो पानी वृक्ष की जड़ में डाला जाता है वह ऊपर शाखाओं, पत्तियों, फलों

में कैसे पहुंच जाता है ? । उत्तर यह दिया गया कि वृक्ष का जीवात्मा उसमें बैठा हुआ ऐसा करता है।

प्रश्न—नहीं, हम मनुष्यों के जीवों के लिए वृक्ष के जड़ का पानी ऊपर चढ़ाया जाता है (परमात्मा की आज्ञा से) क्योंकि वृक्ष के फल फूलादि खा कर हम मनुष्य लोग सुखी तथा हृष्ट पुष्ट होते हैं ?

उत्तर—क्यों जी ! फिर अगर मांसाहारी लोग भी इसी न्याय का आधार लें, तो कैसी निपटेगी ?

प्रश्न—कैसे ?

उत्तर—सुनो ! अगर सिंह कहै कि मेरा आहार मनुष्य है, इसलिए उसका मोटा ताजा होना उसके अन्दर रहने वाले जीवात्मा के सुख के लिए नहीं, बल्कि मेरे (सिंह के) सुख के लिए है (जैसे स्वा० द० के शब्दों में—वृक्ष का फल फूल उसके अन्दर रहने वाले जीव के लिए नहीं बल्कि उसका आहार करने वाले मनुष्य के निमित्त है) ।" ऐसा अगर सिंह कहै, तो बतलाइये आप क्या उत्तर देंगे ? जिस न्याय से आप ने वृक्ष-शरीर को (मनुष्य-आहार होने से) जड़ मान लिया, उसी न्याय से (सिंह का आहार होने से) मानुषी शरीर भी क्यों न जड़ मान लिया जाय ?.

वाह जी वाह ! आप वृक्ष को जड़ सिद्ध करने ऐसे उन्मत्त हुए कि मनुष्य को ही जड़ बना उ धन्य है !!

चौथा अनुवाक ।

—:०:—

प्रश्न—अच्छा कोई ऐसी टीका इस सूत्र की सुना जिसमें साफ़ साफ़ वृक्ष में जीव का होना आया हो

उत्तर—सुनिये:—

श्री पं० चन्द्रकान्त तर्कालङ्कार जी का संस्कृत भा सन् १८८७ ई० का छपा हुआ इलाहाबाद की पब्लि लायब्रेरी (D E 8) में मौजूद है, उस में यों छपा है

वृक्षाभि० ॥७॥

वृक्ष मूले निषिक्ताः खलु आपो वृक्षमभितः सर्प ततो हि वृक्षस्य पुष्टिर्भवति । यच्चैतदपां वृक्षाभिसर्प तत् खलु अदृ ष्टेन शक्ति विशेषेण कार्य्यते । मूलमारभ्य यावदग्रं वृक्ष निविष्टः शिरा सन्तानः शक्ति विशेषाद पार्थिव रसानाञ्चाकर्षणं करोति । वृक्षः खलु ए जीवतीति ॥७॥

अर्थ—वृक्ष के मूल में जो पानी डाला जाता है वह निस्संदेह ऊपर को चढ़ जाता है, उसी से वृक्ष की पुष्टि होती है। वह जो वृक्ष में पानी का ऊपर चढ़ना रूपी क्रिया है वह अवश्य ही एक अदृष्ट (न दीखने वाली विशेष शक्ति से ही रही है; मूल से लेकर आगे जो वृक्ष की शिरायें (नस नाड़ियें) आदि हैं, वे ही शक्ति विशेष (खास ताक़त) से जल को भी और अन्य भी पृथ्वी के रसों (क्षार, मिठास, चूना, स्टार्च इत्यादि) को ऊपर को ओर खींचती (आकर्षण करती) हैं। इस लिए यह निश्चय है कि वृक्ष जीवित वस्तु है।

पांचवां अनुवाक।

—:o:—

अब एक और टीका भी देखिये। पं० स्वामी हरि प्रसाद जी की पुस्तक "वैशेषिक सूत्र वैदिक वृत्ति" के पृष्ठ ११२ पर यह सूत्र आया है, और यही अभिप्राय दर्शाया गया है. हम वहां से केवल एक शब्द नीचे उद्धृत करते हैं:—

"तेनैव स वृक्षः जीवित नान्यथा जीवेत"......

(अर्थात् उस ही से वह वृक्ष जीवित रहता है, नहीं तो न जीवित रह सकता)।

तत्र शरीरं द्विविधं योनिजम 5 योनिजं च ॥

(वै० ५। २। ६)

अर्थ—(पं० तुलसीराम जी का)

(तत्र) उन में (शरीर) शरीर (योनिजं) योनि से उत्पन्न होने वाला (च) और (अयोनिजं) बिना योनि के उत्पन्न होने वाला (द्विविधं) दो प्रकार का है।

पिछले पांच सूत्रों में जो पृथिवी आदि द्रव्यों को १ शरीर २ इन्द्रिय और ३ विषय नाम से तीन प्रकार का बताया गया है, उन तीनों में से शरीर दो प्रकार का होता है १ योनिज, २ अयोनिज।

जल, अग्नि और वायु से उत्पन्न शरीर अयोनिज हैं और पृथिवी से उत्पन्न शरीर योनिज तथा अयोनिज भी होते हैं; यह प्रशस्त पाद आचार्य का मत है। योनिज दो प्रकार के होते हैं १ जरायुज और २ अण्डज। अयोनिज शरीर चार प्रकार के होते हैं १ साङ्कल्पिक २ सांसिद्धिक ३ स्वेदज और ४ उद्भिज्ज। आगे पं० तुलसीराम जी ने ४ थे "उद्भिज"—का अर्थ यों लिखा है।

"४—वृक्ष, वनस्पति, गुल्म, वीरुध, लता, घास फूंस आदि जो पृथिवी को फोड़ कर उपजते हैं उनके शरीर उद्भिज्ज कहाते हैं।

इस प्रमाण में वृक्ष का अन्य जीव धारियों योनियों में गणना होने से चैतन्य होना सिद्ध हो रहा स्वेदज (पसीने या मैल से पैदा होने वालों) को भी श्रेणी (अयोनिज) में माना गया है। क्योंकि वे (ज ः चोलर, खटमल, मूड़े आदि भी बिना मां बाप के पैदा हो जाते हैं ।

पाठक ! आपने देख लिया कि जिस वैशेषिक के में हमारे विपक्षी शोर मचा रहे थे कि वह वृक्षों जीवधारी होने से इनकारी है, वही दर्शन हमारे पक्ष में नहीं बल्कि दो प्रमाण बड़े मार्के के उपस्थित कर रहा है, अ अब वृक्षों में जीव होने से किसी को इनकार न करना चाहिए ।

ग्यारहवां अध्याय

वेदान्त दर्शन

——:o:——

पहिला अनुवाक

—:o:—

न्याय, वैशेषिक के पश्चात् अब हम वेदान्त दर्शन को खोलते हैं :—

दर्शनाच्च ॥

(ब्रह्म सूत्र ३।१।२०)

शङ्कर भाष्य :—

"अपि च चतुर्विधे भूतग्रामे जरायुज स्वेदजोद्भिज्ज लक्षणे स्वेदजोद्भिज्जयोरन्तरेणैव ग्राम्य धर्मनुत्पत्ति दर्शनादाहुति संख्यानादरो भवति । एवमन्यत्रापि भविष्यति ॥२०॥

अर्थ—और भी जो चार प्रकार की सृष्टि भूतों की है—१ जरायुज, २ स्वेदज, ३ उद्भिज्ज—इनके लक्षण में स्वेदज और उद्भिज्ज के अन्तर (भेद) से ही ग्राम्य धर्म की उत्पत्ति के देखे जाने से (पञ्च) आहुतियों की संख्या का अनादर हो जाता है, ऐसा ही अन्यत्र भी होगा।

अस्तु, हमारे प्रस्तुत विषय से इस का केवल इतना

मात्र सम्बन्ध है कि जीव-धारियों की ४ प्रकार की सृष्टि में से एक उद्भिज्ज भी है। अतः वेदान्त के इस प्रमाण से वृक्ष का जीवधारी होना सिद्ध है।

दूसरा अनुवाक।

—:o:—

एक और प्रमाण भी हम सुनाते हैं:—

तृतीय शब्दावरोधः संशोकजस्य ॥

(ब्रह्म सू० ३।१।२१)

शाङ्कर भाष्य :—

आण्डजं जीवजमुद्भिज्जम्' (छा० ६।३।१) इत्यत्र तृतीयेनोद्भिज्ज शब्देनव स्वेदजोपसंग्रहः कृतः प्रत्येतव्यः। उभयोरपि स्वेदजोद्भिज्जयोर्भूम्युदकोद्भेद प्रभवत्वस्य तुल्यत्वात्। स्थावरोद्भेदात्तु विलक्षणो जङ्गमोद्भेद इत्यन्यत्र स्वेदजोद्भिज्जयोर्भेद वाद इत्यविरोधः ॥२१॥

अर्थ-जो कि छान्दोग्य६।३।१ में तीन प्रकार (आराडज, जीवज, उद्भिज्य) कहा है, सो यहां पर तीसरे शब्द "उद्भिज्ज" से स्वेदज का भी आशय ले लिया जाता है; क्योंकि

इन दोनों प्रकारों की उत्पत्ति (माता के गर्भ से न हो कर) पृथिवी और जल को तोड़ फोड़* कर उस से ही हुआ करती है। इसी लिए दोनों की तुल्यता है। और स्थावर से जङ्गम की उत्पत्ति का विलक्षण होना अन्य दशाओं (जरायुज अण्डज) में ठीक माना जा सकता है, परन्तु स्वेदज के साथ तो उद्भिज (स्थावर) के भेद का अविरोध है, (क्योंकि दोनों बिना माता पिता के उत्पन्न हो जाते हैं)"।

इस प्रकार वेदान्त दर्शन ने भी यह साक्षी देदी कि वृक्षों की गणना स्वेदजादि जीवधारियों के साथ ही हो सकती है।

---:o:---

*१ वृक्षों का भूमि फोड़ कर उपजना] तो प्रत्यक्ष ही है, और स्वेदज (जूये, चीलर, खटमल, मच्छड़, फलों के अन्दर पड़ जाने वाले कीड़ों आदि) की भी उत्पत्ति पसीने, मैल, सड़ाइन्ध आदि के परमाणुओं से होने के कारण उसका शरीर भी पृथ्वी या जल के परमाणुओं के विकारों से बन जाता है, अतः स्वेदज और उद्भिज में समानता हो गई (मङ्गला०।)

बारहवां अध्याय।

साङ्ख्य दर्शन।

—०—

पहला अनुवाक।

न्याय, वैशेपिक, वेदान्त दर्शनों के पश्चात् अब हम उस साङ्ख्य-दर्शन को खोलते हैं, जिस के आचार्य श्री कपिलदेव मुनि को यूरोपियन लोग Father of the Philosophy "तत्वज्ञान का पिता" कहते हैं। अच्छा सुनिये:—

ऊष्मजाराडज जरायुजोद्भिज्जसांकल्पिकं सांसिद्धिकं चेति न नियमः॥ (सां० ५।१११)

अर्थ— १ ऊष्मज २ अराडज ३ जरायुज ४ उद्भिज ५ सांकल्पिक६ सांसिद्धिक (शरीर) हैं, इतना ही नियम नहीं (है)॥

(यहां प्रथम चार प्रकार तो वे ही हैं, जो ऊपर वेदांत प्रकरण में आ चुके हैं, शेष दो के अर्थ यों हैं:-)

५ सांकल्पिक = संकल्प से ईश्वर ने जिस अमैथुनी सृष्टि को उत्पन्न किया वह सांकल्पिक कहलाती है। ६ सांसिद्धिक अर्थात् योग लोग सिद्धियों के बल से जिन

देहों को धारण कर लेते हैं, वे सांसिद्धिक देह हैं॥

(सा० ५।१११)

पाठक! आपने देख लिया कि सांख्य-दर्शन के आचार्य भी वृक्षों को छः प्रकार के जीवधारी शरीरों में से एक मान रहे हैं। देखिये स्वयं स्वामी दर्शनानन्द जी ने भी अपने रचे सांख्य भाष्य में इस शब्द का यही अर्थ किया है:—

"५ उद्भिज्ज = जो जमीन को फोड़ कर पैदा होते हैं पेड़ आदि।" (सांख्य दर्शन स्वामी दर्शनानन्द कृत भाषा अनुवाद)

हमें आश्चर्य है कि स्वामी दर्शनानन्द जी तो अनेक बार "उद्भिज्ज" का अर्थ वीर बहुटी आदि करते रहे। फिर ना जाने यहां "पेड़" अर्थ कैसे कर डाला! यह सच है—"जादू वह जो सिर पर चढ़ के बोले"-आखिर सत्य की तो सदा विजय होती ही है।

दूसरा अनुवाक।

—:o:—

प्रश्न— हमारे स्वामी दर्शनानन्द जी ने इस सूत्र में आये हुये "सांसिद्धिक" का अर्थ "खान में बनने वाले

धातु" का किया है, अतः जैसे वे खान से उपजने के कारण जड़ हैं वैसे ही "पेड़" भी जड़ ही हैं, इसलि हमारे पक्ष की कोई हानि नहीं है ? ।

उत्तर— "सांसिद्धिक" का अर्थ सारे ही भाष्यकारों भिन्नउक्त प्रकार कर डालना- स्वामी दर्श० जी की मनमा गढ़ंत ही कहलायेगी। जहां सारे पुराने और नये भाष्य कारों का एक मत हो कि "सांसिद्धिक से योगी, सि महात्माओं आदि का अभिप्राय है, वहां एक महात्मा यदि सब से विरुद्ध "खान की उपज" का अर्थ कर डाले, तो क्या कोई बुद्धिमान् इसे स्वीकार कर सकता है ? कदापि नहीं ॥

हम इस बारे में भी भाष्यकार श्री विज्ञान भिक्षु जी का प्रमाण उद्धृत किये देते हैं:—

उक्त पुस्तक के पृष्ठ २५० पर इस सूत्र के भाष्य में जहां श्री विज्ञान भिक्षु जी "उद्भिज्जाः" का अर्थ "वृक्षादयः" कर रहे हैं, वहां वे "सङ्कल्पजाः" से "सनकादयः" और "सांसिद्धिकाः" से "मन्त्र तप आदि सिद्धिजा" अर्थात मन्त्र तप आदि के द्वारा सिद्धियाँ प्राप्त कर लेने वाले" अर्थ कर रहे हैं।

इस लिये स्वामी दर्शनानन्द जी के अर्थ को सरासर "अनर्थ" ही कहने के लिये हमें विवश होना पड़ता है।

तीसरा अनुवाक ।

—(•)—

अब हम एक ऐसा अपूर्व प्रमाण उपस्थित करते हैं कि विपक्षियों को मौन ही धारण कर लेना पड़ेगा, क्योंकि यहां न केवल वृक्ष को जीवधारी माना गया है, बल्कि उसमें ज्ञान और इन्द्रियों की विद्यमानता भी स्वीकारी गई है।—

साङ्ख्य की इसी अध्याय का १२१ वां सूत्र खोलिये, वहां पूर्व पक्ष निम्न प्रकार आप पढ़ेंगे—

प्रश्न—५।१११वें सूत्र में जो कहा है कि उद्भिज्ज भी जीव का देह है, इस पर शंका होती है कि सब योनिस्थ जीवों को बाह्य पदार्थों का ज्ञान होता है, परन्तु उद्भिज्ज वृक्षादिकों को तो नहीं होता, तब क्या उद्भिज्जों में कर्म संस्कार जनित फल भोग भी नहीं है ?

इस प्रश्न के उत्तर में निम्न सूत्र है—

न बाह्य-बुद्धि नियमो वृक्ष, गुल्म, लतौषधि, वनस्पति, तृण, वीरुधादीनामपि भोक्तृ भोगायतनत्वं पूर्ववत्।

(साङ्ख्ये ५।१२१)

अर्थ (पं० प्रभुदयाल का)—

"बाह्य बुद्धि का नियम नहीं है, वृक्ष, लता, औषधि वनस्पति, तृण, वीरुध आदिकों का भी भोक्ता व भोगायतन होना पूर्व के तुल्य है।

इस सूत्र का भाष्य हम श्री विज्ञान भिक्षु महाराज का किया हुआ ही नीचे उद्धृत किये देते हैं—जिस से पाठक यह जान सकेंगे कि वस्तुतः सांख्य का ठीक ठीक आशय समझने वाले विद्वानों ने भी यही प्रकट किया है कि सांख्यकार वृक्षों को जीवधारी मानते हैं:—

भाष्य—"न बाह्य ज्ञानं यत्रास्ति तदेव शरीरमिति नियमः, किन्तु वृक्षादीनामन्तः संज्ञानामपि भोक्तृ भोगायतनत्वं शरीरत्वं मन्तव्यम् यतः पूर्ववत् पूर्वोक्तो यो भोक्त्रधिष्ठानं विना मनुष्यादि शरीरस्य पूति भावस्तद्वदेव वृक्षादि शरीरेष्वपि शुष्कतादिकमित्यर्थः । तथा च श्रुतिः । अस्य यदेकां शाखां जीवो जहात्यथ० ।

अर्थ—यह कोई नियम नहीं है कि जहां जहां बाह्य* ज्ञान हो, वहीं शरीर रहे; किन्तु वृक्ष आदिकों की अन्तः†

---

*—बाह्य ज्ञान अर्थात् बाहरी ज्ञान—आंख से देखना, कान से सुनना इत्यादि ।

†—अन्तः संज्ञा अर्थात् भीतरी ज्ञान । मनुस्मृति में भी यही कहा गया है कि वृक्षों में अन्तः संज्ञा है, किन्तु "बाह्य संज्ञा" नहीं है ।

संज्ञा को भी भोक्तृभोगायतनत्व* युक्त शरीर वाले ही मानना चाहिए। क्योंकि पूर्वोक्त (सूत्र ५।११४) अनुसार जो भोक्ता की स्थिति के बिना मनुष्यादि के शरीर में पूति भाव (सड़ना गलना आदि) होने लगता है, उसी प्रकार वृक्षादिकों के शरीरों में भी (भोक्ता की स्थिति के

---

*भोक्तृ भोगायतनत्व=भोक्ता अर्थात् जीवात्मा ।
भोगायतन—भोग का आधार याने शरीर ।

यहां यह बतलाते हैं कि जिस प्रकार हम लोगों के शरीरों में बैठा हुआ जीवात्मा ता भोक्ता है, और हम लोग अपनी इन्द्रियों-आंख, कान आदि के द्वारा विषयों का भोग भोगते हैं, उसी प्रकार यह भोक्ता भोगायतनत्व का सम्बन्ध वृक्षों में भी है, केवल भेद इतना मात्र है कि उनकी इन्द्रियां भीतर छिपी हुई हैं ।

अवश्य ही हम मनुष्यों के मुरदा शरीर अगर जला न दिये जांय तो सड़कर अत्यन्त दुर्गन्धि फैलाने लगें, परन्तु जीव भोक्ता के शरीर में ठहरे रहने तक ऐसा कदापि नहीं होता । यही बात वृक्षों में भी पाई जाती है, याने जब इस (वृक्ष-शरीर) का भोक्ता जीवात्मा उसे छोड़ कर चला जाता है, तब वह मुरदा वृक्ष भी तो सूखा हुआ ठूंठ मात्र देखा जाता है । अतः हमारी उनके साथ समानता है ।

विना) शुष्कता (सूखना, मुरझाना, कुम्हलाना आदि) होने लगती है । यही बात श्रुति में भी तो कही गई है कि "अस्य०" "वह जीव जब उस वृक्ष रूपी शरीर की एक शाखा को छोड़ देता है*" इत्यादि ।

इस प्रमाण से सिद्ध है कि साङ्ख्य दर्शन के आचार्य न केवल वृक्ष का जीवधारी होना मान रहे हैं, बल्कि विपक्षियों के शङ्काओं का खण्डन भी कर रहे हैं । शङ्का यह थी—कि वृक्ष में ज्ञान और इन्द्रियां नहीं हैं, इसलिए वह निर्जीव पदार्थ है। उत्तर यहां यह दे दिया गया कि यद्यपि बाहरी इन्द्रियां न हों, पर भीतरी तो अवश्य हैं; और वे ज्ञान भी रखते हैं, इतना ही नहीं बल्कि हमारे सदृश भोगों को भोगते भी हैं इत्यादि ।

अवश्य ही ऐसा प्रबल प्रमाण दर्शा देने पर तो अब विपक्षियों को अपना हठ त्याग कर वृक्ष को जीवधारी ही मान लेना चाहिये ।

---

*—यह छान्दोग्य का वाक्य है, जिसे हम उपनिषदों के प्रकरण में सुनायेंगे ।

चौथा अनुवाक।

—:०:—

साङ्ख्य का एक प्रमाण और भी हम सुनाते हैं। यहां दर्शन-कार अपने इस पक्ष की पुष्टि दूसरे शास्त्रों से कर रहे हैं:—

स्मृतेश्च।

(संख्य ५।१२२)

अर्थ—"स्मृति से भी वृक्षादिकों में भोक्तृ भोगायतनत्व पाया जाता है।"

यह संकेत मनु १२।९ पर है, जिसे हम मनु अध्याय में उपस्थित करेंगे।

इस सूत्र को स्वामी दर्शनानन्द जी ने पूर्व पक्ष मान कर काम चलाना चाहा है। परन्तु जब कि अन्य सारे भाष्यकार ऐसा नहीं मानते तो इसे जिद हठ-धर्मी और शास्त्रों का उलटा अर्थ लगाना नहीं तो और क्या कहा जाय।

पाठकों को स्वामी दर्शनानन्द जी का मनमानी गढ़न्त प्रकट करने के लिए हम इस सूत्र का भाष्य भी श्री विज्ञान-भिक्षु जी का उपस्थित किये देते हैं:—

"एवमपि स्मृतेरपि वृक्षादिषु भोक्तृ भोगायतनत्वमित्यर्थः।१२

इसका हिन्दी वही है जो ऊपर आ चुका है।

अतः उन्हें ही कर्म करने व धर्म अधर्म करने के विधि निषेध का उपदेश श्रुति में है, अन्यों के लिए नहीं है।"

(यह विज्ञान-भिक्षु जी के भाष्य का अर्थ है) ।

इसका अभिप्राय यह हुआ कि यह कोई नियम नहीं हो सकता कि जितने देहधारी हों, वे सब धर्म अधर्म के अधिकारी ही माने जांय । अवश्य ही पशु पक्षी आदि शरीर वाले जीवात्माओं को कोई धर्माधर्म नहीं लगता; इसी प्रकार (पशुओं सदृश) वृक्षों की दशा भी है । धर्म अधर्म तो केवल मनुष्य योनि में लगता है, क्योंकि वह विशेष गुण वाला है ।

अब यह निर्णय होगया कि यद्यपि वृक्ष कर्म (धर्माधर्म) के पावन्द नहीं हैं, तथापि उनके चेतन होने में कोई सन्देह नहीं हो सकता ।

पाठकों ने देख लिया कि सांख्य-दर्शन ने कैसे प्रबलता पूर्वक वृक्ष के जीवधारी होने के पक्ष का समर्थन कर दिया है, अगर इतने पर भी हमारे विपक्षी न मानें तो लाचारी ही है।

तेरहवां अध्याय।

मनुस्मृति।

—(०)—

पहिला अनुवाक।

वैदिक साहित्य के दो भाग हैं, एक श्रुति दूसरी स्मृति ते में वेद, ब्राह्मण, आरण्यक उपनिषद्* माने जाते हैं के पश्चात् स्मृतियों का दरजा है, इस लिए हम पुराण ाभारत, दर्शनों के पश्चात् उनसे ऊँचा दरजा रखने ती स्मृतियों में इस विषय का अब खोज करेंगे।

आज कल जो स्मृतियां (प्राय: ३० के लगभग) ाती हैं, उन सब में मनुस्मृति ही प्रधान मानी जाती है, । लिए हम उसी के पन्ने खोलते हैं:—

मनु अध्याय १ श्लोक ४६–८ में पौधों की अनेक स्में गिनाई गई हैं, जिन्हें हम प्रथम खण्ड के प्रथमाध्याय में स्थित कर आये हैं।

अब इनसे अगला श्लोक देखिये, जहां वृक्षों का जीव ी होना भली प्रकार सिद्ध हो रहा है:—

तमसा बहु रूपेण वेष्टिताः कर्म हेतुना ॥
अन्तः संज्ञा भवन्त्येते सुख दुःख समन्विताः ॥
(मनु०१।४६)

- अर्थ—ये (वृक्षादि) अधिक तमोगुण और (दुःख देने वाले अधर्म) कर्म से व्याप्त हैं, इन का ज्ञान भीतर में ही छिपा (अन्तः संज्ञा) रहता है। सुख दुख से युक्त रहते हैं।४६।

अब तो कोई शङ्का नहीं हो सकती, जब कि साफ़ साफ़ यह कह दिया गया कि वृक्ष दुःख सुख का अनुभव करते हैं, और उनके अन्दर बुद्धि भी है।

दूसरा अनुवाक।

—:o:—

अब पाठक उन श्लोकों को देखें, जिन्हें स्वामी दयानन्द ने भी अपने सत्यार्थ प्रकाश में उद्धृत किया है:—

शरीरैः कर्म दोषैर्याति स्थावरतां नरः।
वाचिकैः पक्षि मृगतां मानसैरन्त्य जातिताम् ॥
(मनु० १२।६)

"जो नर शरीर से चोरी, पर स्त्री गमन, श्रेष्ठों को मारने आदि दुष्ट कर्म करता है, उसको वृक्षादि स्थावर

का जन्म, वाणी से किये पाप कर्मों से पक्षी और मृगादि तथा मन से किये दुष्ट कर्मों से चांडाल आदि का शरीर मिलता है"।

यहां यह बतलाया गया कि मनुष्य का जीवात्मा अमुक २ पाप कर्म के फल भोगने के लिए वृक्षों की योनि में प्रवेश करता है।

स्थावराः कृमि कीटाश्च, मत्स्याः सर्पाश्च कच्छपाः।
पशवश्च मृगाश्चैव, जघन्या तामसी गतिः॥ म० १२।४२

अर्थ—तामसी प्रकृति वालों की (मरने पर) यह गति होती है, कि वे स्थावर, कृमि, कीट, मत्स्य, सर्प, कच्छप, पशु और मृगा आदि की योनियां में जाते हैं।

यहां अन्य जीवधारियों के साथ साथ स्थावर को भी गिनाया गया है।

तीसरा अनुवाक ।

—:०:—

अब हम एक और प्रमाण उपस्थित करते हैं, जहां पाप के फल में हमें वृक्ष-योनि में जाना लिखा है:—

तृण गुल्म लतानां च क्रव्यादां दंष्ट्रिणामपि।
क्रूर कर्मकृतां चैव शतशो गुरुतल्पगः॥
(मनुः १२।५८)

अर्थ—गुरु पत्नी गामी पुरुष, सैकड़ों बार तृण, गुल्म, लता, क्रव्याद (मांसाहारी), दाढ़ों वाले और क्रूर कर्मी देहों का प्राप्त होता है।

इस प्रमाण से भी प्रकट है कि हम मनुष्यों के जीव ? कर्मों को करने पर वृक्ष शरीर को पाते हैं।

चौथा अनुवाक।

—:o:—

प्रश्न—हम मनुस्मृति में क्षेपक मानते हैं, इस लिए उक्त श्लोकों को मिलावटी समझना चाहिए?

उत्तर—जब आर्य-समाज के अन्य कोई जिम्मेवार विद्वान् गण इन श्लोकों को क्षेपक नहीं मानते, तो फिर केवल आपका ऐसा मानना क्या पक्षपात न कहलायेगा? !!

प्रश्न—जो मनुस्मृति इस समय मिलती है, यह मनु महाराज के समय की नहीं है; किन्तु यह वाममार्गियों के समय की होगी, क्योंकि इस में मांस विधायक श्लोक मिलते हैं?

उत्तर—उतने भाग को आप अवश्य क्षेपक मान लें, बाकी सारे शास्त्र का त्याग क्यों करते हैं? देखिये इसी

नुस्मृति के दो श्लोक बाल्मीकीय रामायण किष्किन्धा कांड उद्धृत किये गये हैं (जहां श्री रामचन्द्र जी के बालि को ध करने की कथा है) इससे मानना पड़ेगा कि नुस्मृति बा० रामायण से भी पुरानी है। अतः वृक्षों में जीव होने के ख्यालात आर्य जाति में अति प्राचीन काल चले आते हैं, ऐसा ही मानना पड़ेगा।

परन्तु यदि यही मान लें कि वर्तमान सारी की सारी नुस्मृति वाममार्गियों के ही समय में रची गई हो, भी वह ३००० वर्ष से अधिक पुरानी अवश्य ठहरती , क्योंकि ढाई सहस्र वर्ष तो श्री बुद्ध महाराज को ही ीत चुके हैं, जिन्होंने बाममार्ग के किले की बुनियाद में ायनामाइट भर कर उसे चकानाचूर कर देने पर कमर सी थी। अतः प्रत्यक्ष है कि ढाई हजार वर्ष से बहुत र्वकाल में वाममार्गी लोगों का चक्र चला होगा, इसलिये सा मानने पर भी यह स्पष्ट है कि ३००० वर्ष से पूर्व ाले हमारे बुजुर्गों का निर्णय यही था कि वृक्षों में जीव है।

पाठक! क्या यह आश्चर्य न होगा कि जिस सचाई ा आज से ३००० वर्ष पूर्व वैसा ही माना जाता रहा हो, ैसा कि वर्तमान समय के विज्ञानवेत्ता मान रहे हैं, उस कुछ आर्य सामाजिक महाशय इन्कार कर दें।

—:o:—

चौदहवां अध्याय ।

उपनिषद ।

पहला अनुवाक ।

—:o:—

अब संस्कृत साहित्य में वेदों के सिवाय सर्वोच्च स्थान ने वाले, अत्यन्त प्राचीन ग्रन्थ-उपनिषदों का निर्णय सुनियेः— देखो कठ उपनिषद् में लिखा है:—

हन्त त इदं प्रवक्ष्यामि गुह्यं ब्रह्म सनातनम् ।
यथा च मरणं प्राप्य आत्मा भवति गौतम ।६।
॥योनिमन्ये प्रपद्यन्ते शरीरत्वाय देहिनः ॥

स्थाणुमन्ये ऽनुसंयन्ति यथा कर्म यथा श्रुतम् ।७।
(कठो० २। ।६,)।

अर्थ— अब हम तुम से सनातन गुह्य ब्रह्म की बात कहेंगे हे गौतम ! और यह भी बतलायेंगे कि आत्मा (की दशा) मृत्यु प्राप्त करने पर क्या होती है। ६ ।

देह वाला (जीव) कर्मों और ज्ञान के अनुसार शरीर धारण करने के लिए अन्य योनियों में जाता है, या कोई दूसरे लोग स्थाणु (वृक्ष) में जाते हैं।७।

इस कठ उपनिषद्वाक्य में पुनर्जन्म का वर्णन है, और यह बतलाया गया है कि हम लोग अपने अच्छे बुरे कर्मों के अनुसार नीची ऊंची योनियां पाते हैं। कोई पशु पक्षी का शरीर पाता है, तो कोई वृक्ष की योनि में प्रवेश करता है ।

अतः इस प्रमाण से वृक्षों का जीवधारी होना सिद्ध है॥

—:o:—

दूसरा अनुवाक

—:o:—

अब वृहदारण्यक उपनिषद का प्रमाण सुनिये:—

"तान् हैतैं श्लोकैः प्रपच्छ—

यथा वृक्षो वनस्पतिस्तथैव पुरुषोऽमृषा, तस्य लोमानि पर्णानि त्वगस्योत्पाटिका वहिः॥ १॥

त्वच एवास्य रुधिरं प्रस्यन्दि त्वच उत्पटः।
तस्मात्तदा तृण्णात् प्रैति रसो वृक्षादिवाहतात्॥२॥

मांसान्यस्य शकराणि कीनाटं स्नाव तत्स्थिरम्।
अस्थीन्यन्तरतो दारूणि मज्जा मज्जोपमा कृता ॥२॥

(बृह० ३।९।२८। १-२)

अर्थ—इन तीन मन्त्रों में मानुषी शरीर के साथ वृक्ष की तुलना की गई है, इस लिये हम एक चक्र में उसे प्रकट करते हैं:—

मानुषी शरीर—	वृक्ष शरीर
१ लोम (रोयें या बाल)—	पत्तियां।
२ त्वचा (खाल)—	छाल (छिलका)।
३ रुधिर—	रस।
४ त्वचा से रुधिर बहना—	छाल से गोंद निकलना।
५ जख्म से रुधिर निकलना—	वृक्ष को काटने से रस बहना।
६ मांस—	वृक्ष छाल की तहें या नरम छिलके
७ नाड़ी नसें—	वृक्ष की शिरायें (रेशे)।
८ हड्डियां—	दारु या अन्दर के गांठ आदि।
९ मज्जा (चर्बी)—	लकड़ियों के अन्दर का गूदा।

तीसरा अनुवाक।

अब हम वह प्रमाण उपस्थित करते हैं, जिसका उल्लेख साङ्ख्यदर्शन के भाष्यकार श्री विज्ञान-भिक्षु जी ने भी

य।।१२। सूत्र के भाष्य में किया है, और जो बहुत
स्पष्ट शब्दों में इस विषय को वर्णन कर देता है:—

अस्य सोम्य महतो वृक्षस्य यो मूले ऽभ्याहन्याज्जीवन्
यो मध्येऽभ्याहन्याज्जीवन् स्रवेद्योऽग्रेऽभ्याहन्याज्जीवन् स्रवेत्
ष जीवेनात्मनानुप्रभूतः पेपीयमानो मोदमानस्तिष्ठति॥१॥

अस्य यदेकां शाखां जीवो जहाति अथ सा शुष्यति,
यां जहाति अथ सा शुष्यति, तृतीयां जहाति अथ सा
ति, सर्वं जहाति सर्वं शुष्यति एवमेव खलु सोम्य
र इति ह उवाच ॥२॥

(छान्दोग्य उ० ६।११।१,२।)

अर्थ—(पं० शिवशंकर जी काव्य तीर्थ का),
र्थ-(सौम्य) हे प्रिय पुत्र ! अन्य दृष्टान्त भी सुनो
ली निर्देश से दिखला कर कहते हैं (अस्य महतो
य) इस महान् वृक्ष की (मूले) जड़ में (यः—अभ्या-
त्) यदि कोई कुल्हाड़ी आदि से एक बार प्रहार करे
(जीवन्-स्रवेत) प्रहार करने से भी वह वृक्ष न सूख
जीता ही हुआ स्रवित होगा। उसका दूध गिरता
, परन्तु सूखेगा नहीं। इसी प्रकार (यः—मध्ये
ाहन्यात्) यदि वृक्ष के मध्य में प्रहार करे तो (जीवन्
) जीता हुआ स्रवित होगा, इसी प्रकार (यः—अग्रे-

अभ्याहन्यात्) वृक्ष के अग्र भाग में कोई प्रहार करे तो (जीवन् स्रवेत) जीता हुआ स्रवित होगा, क्योंकि (सः एषः) सो यह वृक्ष (जीवेन आत्मना) जीवात्मा के साथ (अनुभूतः) अनुव्याप्त होकर (पेपीयमानः) अपनी जड़ों से पृथ्वी के अभ्यन्तर से रस को चूसता हुआ (मोदमानः-तिष्ठति) सहर्ष खड़ा रहता है ॥१॥

(दूसरे मन्त्र का अर्थ):—

(अस्य) इस महान् वृक्ष की (एकाम् शाखाम्) किसी एक शाखा को (यत्) जब (जीवः जहाति) (जीव त्याग) देता है (अथ सा शुष्यति) तब वह शाखा सूख जाती है (द्वितीयाम् जहाति) जब जीव द्वितीय शाखा को त्यागता है (अथ सा शु०) तो वह सूख जाती है (तृतीयाम् जहाति अथ सा शुष्यति) जब जीव तृतीय शाखा को त्यागता है तो वह सूख जाती है (सर्वम् जहाति सर्वः-शुष्यति) यदि वह जीव सम्पूर्ण वृक्ष को त्याग देता है, तो सम्पूर्ण वृक्ष सूख जाता है। (एवम् एव खलु) वैसे ही (सोम्य) हे सोम्य (विद्धि इति) शरीर की दशा जानो। इसको स्वयं आगे कहेंगे (इति ह उवाच) इस प्रकार पुत्र को शिक्षा दे पुनः आरुणि बोले ॥

सांख्य।।५२। सूत्र के भाष्य में किया है, और जो बहुत ही स्पष्ट शब्दों में इस विषय को वर्णन कर देता है:—

अस्य सोम्य महतो वृक्षस्य यो मूले भ्याहन्याज्जीवन् स्रवेद्यो मध्येऽभ्याहन्याज्जीवन् स्रवेद्योऽग्रेऽभ्याहन्याज्जीवन् स्रवेत् स एष जीवेनात्मनानुप्रभूतः पेपीयमानो मोदमानस्तिष्ठति॥१॥

अस्य यदेकां शाखा जीवो जहाति अथ सा शुष्यति, द्वितीयां जहाति अथ सा शुष्यति, तृतीयां जहाति अथ सा शुष्यति, सर्वं जहाति सर्वं शुष्यति एवमेव खलु सोम्य विद्धि इति ह उवाच ॥२॥

(छान्दोग्य उ० ६।११।१,२।)

अर्थ—(पं० शिवशंकर जो काव्य तीर्थ का), पदार्थ-(सौम्य) हे प्रिय पुत्र! अन्य दृष्टान्त भी सुनो अङ्गली निर्देश से दिखला कर कहते हैं (अस्य महतो वृक्षस्य) इस महान् वृक्ष की (मूले) जड़ में (यः—अभ्याहन्यात्) यदि कोई कुल्हाड़ी आदि से एक बार प्रहार करे तो (जीवन-स्रवेत) प्रहार करने से
कर जीता ही हुआ स्रवित हो
रहेगा, परन्तु सूखेगा न
अभ्याहन्यात्) यदि वृक्ष
स्रवेत्) जीता हुआ

इतने *पर भी जो लोग न मानें उनकी हठधर्मी प[illegible]
आश्चर्य !!! ॥

---

* और भी कई प्रमाण उपनिषदों के इस विषय में हैं, जन्हें हमने विस्तार-भय से नहीं लिखा- जो लोग चाहें निम्न प्रकार खोज कर पढ़ लें :-

१- छान्दोग्य ३।२।१।
२- „ ६।३।१।
३- बृहदारण्यक ८।४।१

इससे अधिक खुले शब्द और क्या होंगे ? यहां तो स्प
ही कह दिया गया है कि वृक्ष में जीवात्मा विद्यमान है।

चौथा अनुवाक।

—:o:—

पाठक गण ! आपने देख लिया कि उपनिषदों जैसे
अत्यन्त प्रामाणिक और प्राचीन ग्रन्थों में कैसे स्पष्ट शब्दो
में वृक्षों का जीवधारी होना कहा गया है। जहां क
उपनिषद के प्रमाण से हम लोगों का पशुओं और वृक्षा
शरीरों में जन्म लेना सिद्ध है, वहां छान्दोग्य में स्पष्ट ह
जीवात्मा का वृक्ष की एक एक शाखा को छोड़ते हुये इस
मुरदा शरीर का त्याग देना आया है। फिर जहां एक
प्रमाण से वृक्ष में जीव होना सिद्ध है, वहां दूसरे (बृहदार
राय के) से मनुष्य के शरीर के अवयवों (मांस
रुधिर) आदि की भी वृक्ष-शरीर से तुलना कर दी गई
है इत्यादि २।

निदान उपनिषदों को सत्य-ज्ञान भण्डार मानने वाल
वृक्षों के जीवधारी होने से कदापि इन्कारी नहीं हो सकता

इतने *पर भी जो लोग न मानें उनकी हठधर्मी पर आश्चर्य !!! ॥

* और भी कई प्रमाण उपनिषदों के इस विषय में हैं, जिन्हें हमने विस्तार-भय से नहीं लिखा- जो लोग चाहें निम्न प्रकार खोज कर पढ़ लें :-

१- छान्दोग्य ३।२।१।
२- ,, ६।३।१।
३- बृहदारण्यक ८।४।१

पन्द्रहवां अध्याय।

वेद।

पहिला अनुवाक।

—:o:—

यह बात ध्यान देने योग्य है कि उपनिषदों, दर्शनों आ के आचार्यों ने जो बातें प्रकट की हैं, उनका आधार वे ही है; इस लिये उन ग्रँथों के प्रमाणों को उपस्थित कर चुकने प अगर हम वेदों के कोई प्रमाण न भी उपस्थित करें, तो हमा पक्ष की कोई हानि नहीं हो सकती। अस्तु अब वेदों व प्रमाण सुनियेः—

पहिला प्रमाणा।

सूर्यं चक्षुर्गच्छतु वातमात्मा द्यां च गच्छ पृथिवीं च धर्मणा। अपो वा गच्छ यदि तत्र ते हितमोषधीषु प्रतितिष्ठा शरीरैः।

(ऋग्वेद १०।१६।३)

अर्थ-(सायण भाष्य का हिन्दी)

हे प्रेत (मुर्दा शरीर)! तेरा चक्षु इन्द्रिय सूर्य में जावे। आत्मा प्राण वायु में जावे और तू भी अपने धर्म और सुकृत (अच्छे कर्मों) से उनके अनुसार फलों को भोगने

के लिए द्युलोक (स्वर्ग) में जा, या (अगर कर्म स्वर्ग में जाने योग्य न हों तो) पृथिवी में जा, चाहे तू जल में जा। या अन्तरिक्ष लोक में जा, अगर उसमें तेरा कुछ हित होना सम्भव हो। या तू अपने कर्मों के फलों को भोगने के लिए **औषधियों** में अपने शरीर के अवयवों सहित निवास कर"।

यहां आवागमन का वर्णन है। शरीर छोड़ कर जीव कहां २ जा सकता है, यह बात यहां कही गई है।

इस मन्त्र का अन्तिम भाग "यदि तत्र ते हितमोषधीषु प्रतितिष्ठा शरीरैः" हमारे प्रस्तुत विषय से सम्बन्धित है, अतः उतने भाग का संस्कृत सायण भाष्य भी हम यहां उद्धृत किये देते हैं:-

"ते(तव) कर्मफलमोषधीषु शरीरैः शरीरावयवैः प्रतितिष्ठ"।

स्वामी दयानन्द का भाष्य ऋग्वेद के इस दसवें मण्डल पर नहीं है। हां यह मन्त्र संस्कार विधि के मृतक-दाह में प्रथम ही आया है, अतः संस्कार चन्द्रिका में इस का भावार्थ देख सकते हैं, जो ऊपरी अर्थ के समान ही है।

इस मंत्र का अंग्रेजी अनुवाद भी हम विलसन((H.H. Wilson)साहब का सुनाये देते हैं:—

3 Let the eye repair to the sun, the breath to the wind; go thou to the heaven or to the earth, according to thy merit, or go to the waters if it suits thee (to be there) or abide with thy members in the plants "—

इसका हिंदी अर्थ उपर्युक्त अनुसार ही है।

दूसरा अनुवाक ।

—:o:—

प्रश्न—यहां "वृक्ष में तेरा निवास हो" ऐसा कहा है। इस से वृक्ष योनि में जन्म लेना सिद्ध नहीं होता, अलबत्ता इसका यह तात्पर्य्य निकलता है कि वह जीवात्मा किसी पक्षी आदि की योनि धारण करके उस वृक्ष को अपना घर बनाकर निवास करे ?

उत्तर—यहां पर वृक्ष योनि का अभिप्राय इस लिए है कि शरीर को छोड़ कर जीवात्मा अपने कर्मानुसार जैसे स्वर्ग में जाता है या पृथ्वी पर थलचर या जलचर बनता है, इसी प्रकार वृक्ष योनि में भी प्रवेश करता है।

२ प्रश्न—यह मन्त्र आवागमन विषयक नहीं है ?

उत्तर—इस मन्त्र में जीव के अन्य शरीर धारण करने का ही विषय है, यह बात यूरोपियन संस्कृतज्ञों के कथन से भी प्रत्यक्ष है. सुनो :—

(क)-विलसन साहब एक टिप्पिणी में लिखते हैं :—

The scholiast no doubt understands here the doctrine of transmigration,

(ख)-फिर म्यूर साहब भी ऐसाही कह रहे हैं, देखो।—

" A funeral hymn addressed to Agn X, (6) also contains some verses which llustrate the views of the writer regarding a future life.—

(see muir's original Sanskrit text volume V. page 298).

(ग)—इसी प्रकार मैक्डानेल Macdonell साहब कहते हैं :—

One passage of the Rig veda however in which the soul is spoken of as deporting to the waters or the plants may contain the germs of the theory".

हरणों से यह सिद्ध हो रहा है कि इस मन
रे सूक्त में आवागमन का विषय है। इस लि
यही अर्थ होता है कि जीवात्मा शरीर छो
नेक योनियों में जाता है उन में से एक वृत्त
।

—:o:—

चौथा अनुवाक।

(तीसरा प्रमाण)

—:o:—

वेद का तीसरा प्रमाण, जिसे बहुत परिश्रम
निकाला है, सुनाते हैं:—

अपो यदोषधीर्मनो जगाम दूरकम्।
आवर्तयामसीह क्षयाय जीवसे॥

{ ऋग्वेद मंण्डल १०।५८।७
,, अष्टक ८।१।२१।७ }

ाचार्य ने मन्त्र लिख कर छोड़ दिया है,
वल यूरोपियन विद्वान् ग्रिफिथ साहब का
द सुनाते हैं:—

spirit, that went far away, went
ers and the plants, We cause to

come to thee again that thou mayst live and sojourn here :—

भावार्थ—तेरा जीवात्मा जो दूर २ चला गया, जो जल में और **पौधों** (औषधियों) में चला गया; उसे हम फिर से तुझ (शरीर) में वापस बुलाते हैं; कि जिससे तू इस संसार में चिर काल तक जीवित रहे।"

इस मन्त्र में और इस सूक्त के १२ मन्त्रों में यही वर्णन आया है कि शरीर छोड़ कर जीवात्मा कहां कहां जाया करता है, इस सिलसिले में यहां यह कहा गया है कि; जीवात्मा "औषधियों" में भी जाता है।

ऐसे स्पष्ट कथन पर भी जो लोग न मानें उनका क्या इलाज है!

चौथा अनुवाक।

(तीसरा प्रमाण)

—o—

अब हम एक ऐसा प्रमाण उपस्थित करते हैं, जिस में स्पष्ट वृक्ष में हमारे सदृश गर्भ धारण करने और सन्तान उपजाने का वर्णन आया है—

इन उद्धरणों से यह सिद्ध हो रहा है कि इस म
और इस सारे सूक्त में आवागमन का विषय है। इस लि
इस मन्त्र का यही अर्थ होता है कि जीवात्मा शरीर छो
कर जिन अनेक योनियों में जाता है उन में से एक वृक्ष
योनि भी है।

—:o:—

चौथा अनुवाक।

(तीसरा प्रमाण)

—:o:—

अब हम वेद का तीसरा प्रमाण, जिसे बहुत परिश्रम
से खोज कर निकाला है, सुनाते हैं :—

यत्ते अपो यदोषधीर्मनो जगाम दूरकम्।
तत्त आवर्तयामसीह क्षयाय जीवसे॥

{ ऋग्वेद मंण्डल १०।५८।७
,, अष्टक ८।१।२१।७ }

श्री सायणाचार्य ने मन्त्र लिख कर छोड़ दिया है,
अतः हम केवल यूरोपियन विद्वान् ग्रिफिथ साहब का
अङ्गरेजी अनुवाद सुनाते हैं :—

Griffith:—

7—Thy spirit, that went far away, went
to the waters and the plants, We cause to

come to thee again that thou mayst live and sojourn here :—

भावार्थ—तेरा जीवात्मा जो दूर २ चला गया, जो जल में और **पौधों** (औषधियों) में चला गया; उसे हम फिर से तुझ (शरीर) मे वापस बुलाते हैं; कि जिससे तू इस संसार में चिर काल तक जीवित रहे।"

इस मन्त्र में और इस सूक्त के १२ मन्त्रों में यही वर्णन आया है कि शरीर छोड़ कर जीवात्मा कहां कहां जाया करता है, इस सिलसिले में यहां यह कहा गया है कि जीवात्मा "औषधियों" में भी जाता है।

ऐसे स्पष्ट कथन पर भी जो लोग न मानें उनका क्या इलाज है!

चौथा अनुवाक।
(तीसरा प्रमाण)

—o—

अब हम एक ऐसा प्रमाण उपस्थित करते हैं, जिस में स्पष्ट वृक्ष में हमारे सदृश गर्भ धारण करने और सन्तान उपजाने का वर्णन आया है—

"अहं गर्भमदधामोषधीष्वहं विश्वेषु भुवनेष्वन्तः ।
अहं प्रजा अजनयं पृथिव्यामहं जनिभ्यो अपरीषु पुत्रान् ॥
(ऋ० १० । १८३ । ३)

अर्थ (सायण-भाष्य का हिन्दी)

३—मैं (होता) ओषधियों अर्थात् धान्य आदिकों में फलों की उत्पत्ति) के लिये गर्भ धारण कराता हूं । और अन्य सभी भुवनों (उत्पन्न हुये भूतों अर्थात् प्राणियों) के मध्य में मैं ही गर्भ धारण कराता हूं । तथा पृथिवी में प्रजाओं अर्थात् सब मनुष्यों को मैं पैदा करता हूं । मैं दूसरी स्त्रियों में भी पुत्रों को पैदा करता हूं । मैं सब की उत्पति का हेतु हूं, क्योंकि मुझ से किये जाने वाले यज्ञ से ही सब की उत्पत्ति होती है । ३ ।

प्रश्न—"ओषधियों में गर्भ धारण कराता हूं" इस वाक्य से वृक्ष का जीव धारी होना सिद्ध नहीं होता, यह एक अलंकारिक भाषा हो सकती है ?

उत्तर—लीजिये हम अपने पक्ष की पुष्टि में एक बड़ा जबरदस्त प्रमाण प्रस्तुत किये देते हैं:—

पुस्तक मानव गृह्य * सूत्र (वेद प्रकाश प्रेस इटावा की

---

* यह मूल पुस्तक रूस देश के सेण्ट पीटर्स वर्ग स्थान में छापी गई थी जो अजमेर के दयानन्द पुस्तकालय में विद्यमान है ; इस में इसका पूरा नाम यों अंकित है:—

छपी हुई) के पृष्ठ २७ पर गर्भाधान प्रकरण में यों लिखा है कि इस मंत्र (अहं गर्भ०) को पति समागम काल मे पढ़े । इस प्रमाण से प्रकट हो रहा है कि मानव-गृह्य सूत्र जैसे प्राचीन ग्रन्थ के आचार्य ने भी वेद के इस मंत्र का यही आशय समझा था कि इस मंत्र के शब्द (अहं गर्भ-अदधाम) से संतान उत्पत्ति का ही अभिप्राय है। तभी तो उन्होंने गर्भाधान के निमित्त इस मंत्र को जप करने का विधान किया था।

अब विचार का स्थान है कि जब इस मंत्र में यह वर्णन भी आया है कि मैं ओषधी में गर्भ धारण करता हूं तो इस से सिवाय इसके और क्या अर्थ हो सकता है कि जैसे पुरुष संतान उत्पत्ति के लिये गर्भ धारण करता है उसी प्रकार वृक्ष योनि की संतान के लिये भी उस में गर्भ धारण कराया जाता है ।

निदान इस प्रमाण से वृक्ष का जीव धारी होना अवश्य सिद्ध हो रहा है ।

मैत्रायणी शाखायां मानव गृह्य सूत्रम् सन् १८९७ ई० में डाक्टर फ्रेडरिक कनर ने छपवाया (इसके पृष्ठ २४ पर यह प्रमाण १।१४।१६) आया है।

पाचवां अनुवाक ।

(चौथा प्रमाण)

—:०:—

अब हम वह मन्त्र उपस्थित करते हैं, जिसे पं० गणपति शर्मा जी ने उस शास्त्रार्थ में, जो स्वामी दर्शनानन्द जी के साथ हुआ था, प्रकट किया है :—

इदं जनासो विदथ महद्ब्रह्मवदिष्यति ।
न तत् पृथिव्यां नो दिवियेन प्राणान्ति वीरुधः॥१॥
(अथर्व वेद काण्ड १।अनुवाक ६।सूक्त३२।मन्त्र १)

इस मन्त्र पर श्री पण्डित क्षेमकरण दास त्रिवेदी जी का भष्य इस प्रकार है·

भाषार्थ—हे मनुष्यो ! इस बात को तुम जानते हो, वह [ब्रह्मज्ञानी] पूजनीय परम ब्रह्म का कथन करेगा। वह ब्राह्म न तो पृथ्वी में और न सूर्य लोक में है जिसके सहारे से (वीरुधः) यह उगती हुई जड़ी बूटी [लता रूप सृष्टि के पदार्थ] (प्राणन्ति) श्वास लेती है ॥१॥

इस मन्त्र का अङ्गरेजी अनुवाद ग्रिफ़िथ साहब का निम्न प्रकार है।

Griffith :—

ye people ! hear and mark this well

he will pronounce a mighty prayer; that which *gives breathing to the plants* is not on earth nor in the heaven.

इस का अर्थ वही है जो हिन्दी में ऊपर आचुका है इस मन्त्र का अन्तिक भाग "वीरुधः प्राणन्ति" हमारे विषय से सम्बन्ध रखता है, जिसका अर्थ श्री सायणाचार्य जी यों करते हैं:—

(वीरुधः) विरोहण शीलाश्च कौशिकेनोक्ताश्चित्ताद्या अन्याश्चौषधयः (प्राणन्ति) जीवन्ति

पाठक ! आपने देख लिया कि अथर्ववेद के इस प्रमाण वृक्षों का श्वास लेना स्पष्ट कहा गया है ।

छठवां अनुवाक ।

(पाँचवाँ प्रमाण) ।

—:o:—

अब हम वेद का पाँचवाँ प्रमाण उपस्थित करते हैं— है भी उसी शास्त्रार्थ में कहा गया था:—

जीवलां न घारिषां जीवन्तीमोषधी महम् ।

अरुन्धती, मुन्नयन्ती पुष्पां मधुमती मिहहुवे ऽस्मा अरिष्टतातये ॥

इस मन्त्र से औषधियों अर्थात् वृक्षों को स्पष्ट ही जीवन्तीम् अर्थात् जीवधारी कहा गया है, इसलिये इस प्रमाण से भी वृक्ष का जीवधारी होना सिद्ध है।

पाठक! हमने वेदों में से भी पांच मन्त्रों को निकाल कर उपस्थित कर दिया है अतः वृक्षों का जीवधारी होना वैदिक धर्म के ग्रंथों से सिद्ध हो रहा है। इतने पर भी जो लोग हठधर्मी करें और न मानें उनके लिये क्या उपाय हो सकता है!!

(अथर्व का० ८ अ० ४। सू० ७। मं० ६)

सायणाचार्य ने इस मन्त्र का भाष्य नहीं किया।

श्री० पं० क्षेमकरण दास त्रिवेदी जी का भाष्य (हिन्दी) इस प्रकार है—

(जीवलाम्) जीवन देने वाली (नघारिषाम्) न कभी हानि करने वाली (जीवन्तीम्) जीवरखनेवाली। (अरुन्धतीम्) रोक न डालने वाली (उन्नयन्तीम्) उन्नति करने वाली (पुष्पाम्) बहुत पुष्प वाली (मधुमतीम्) मधुर रस वाली (ओषधीम्) ताप नाशक (अन्न आदि ओषधि) को (इह) यहां (अस्मै) इस (पुरुष) को (अरिष्टतातये) शुभ करने के लिये (अहम्) मैं (हुवे) बुलाता हूं॥

(देखो उनका अथर्व पृष्ठ १८९७)

इस मन्त्र का अङ्गरेजी अनुवाद ग्रिफिथ साहब का इस प्रकार है:—

(Griffith)

The living plant that gives life, that driveth malady away, Arundhati, the rescuer strengthening, rich in sweets, I call to free this man from scath and harm.

इस का हिन्दी अर्थ वही है जो ऊपर आ चुका है।

इस मन्त्र से औषधियों अर्थात् वृक्षों को स्पष्ट ही **जीवन्तीम्** अर्थात् जीवधारी कहा गया है, इसलिये इस प्रमाण से भी वृक्ष का जीवधारी होना सिद्ध है।

पाठक! हमने वेदों में से भी पांच मन्त्रों को निकाल कर उपस्थित कर दिया है अतः वृक्षों का जीवधारी होना वैदिक धर्म के ग्रंथों से सिद्ध हो रहा है। इतने पर भी जो लोग हठधर्मी करें और न मानें उनके लिये क्या उपाय हो सकता है!!

सोलहवां अध्याय ।

वेदों सम्बन्धी प्रश्नोत्तर

पहिला अनुवाक ।
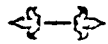
हमने पिछले अध्याय में वेदों से ५ प्रमाण उपस्थित कर दिये हैं । अब इस अध्याय में उन वेद-मन्त्रों पर विचार करेंगे, जिन्हें विपक्षी लोग निषेधात्मक मान कर प्रस्तुत किया करते हैं ।

प्रश्न—वेदों में तो वृक्षों का जड़ होना पाया जाता है, देखो:—

"द्वा सुपर्णा० ।

(ऋग्वेद १।१६४।४६)
(मुण्डक उ०३।१।१)
(श्वेताश्वतर उ०४।६)

अर्थ—दो पक्षी आपस में मिले हुए एक दूसरे के सखा एक ही वृक्ष पर बैठे हैं, उन में से एक उस पीपल के फल को खाता है और दूसरा न खाता हुआ (उसे) देखता है ।

यहां वृक्ष का दृष्टांत प्रकृति से दिया गया है। प्रकृति "जड़" है, इसलिए वृक्ष भी जड़ ही ठहरा। अगर वृक्ष को जड़ न मानते तो "प्रकृति" के लिए उस का दृष्टान्त क्यों दे देते।

(यह कथन स्वा० दर्शनानन्द जी का है)

उत्तर—यह कोई नियम नहीं है कि दृष्टान्त चेतन का जड़ से या जड़ का चेतन से न दिया जाय. देखो "चन्द्र मुखी" में मनुष्य "चेतन" का दृष्टान्त "जड़" चन्द्रमा से दिया गया है, फिर कमल नयनी, पद्मनाभ आदि में भी ऐसा ही है।

सब लोग भली प्रकार जानते हैं कि इस मन्त्र से वृक्षों के जड़ या चेतन होने का कोई भी सम्बन्ध नहीं है। इस मन्त्र में यह अलङ्कार है कि जैसे किसी वृक्ष पर दो पक्षी बैठे हों, वैसे इस शरीर रूपी वृक्ष पर जीव और ब्रह्म रूपी दो पक्षी बैठे हैं, बस इसका इतना ही मात्र आशय है, क्योंकि दृष्टान्त का केवल एक अंश लिया जाता है, सर्वांश में तो कोई दृष्टान्त कभी दार्ष्टान्त में घट ही नहीं सकता। *और इस मन्त्र में जो "वृक्ष" शब्द आया है, उस से "प्रकृति" का तात्पर्य लेना शास्त्र से प्रतिकूल है। देखो श्वेताश्वतर उपनिषत् में भी यह मन्त्र आया है जहां शङ्कर भाष्य में ऐसा लिखा है:—

समानमेकं वृक्षं वृतमिवोच्छेद्य सामान्याद्वृत्तं शरीरः

अर्थ—उस एक ही वृक्ष पर—वृक्ष के सदृश कट सकने वाले अर्थात् **शरीर** –

यहां स्पष्ट ही वृक्ष से दृष्टान्त शरीर का दिया जाना स्वामी शक० जी मानते हैं । और यह जो हमारे विपक्षी कहते हैं कि जड़ प्रकृति का दृष्टान्त जड़ वृक्ष से दिया गया है, तो लीजिए हम ऐसा वाक्य भी सुनाये देते हैं, जहां वृक्ष का दृष्टान्त जड़ प्रकृति से नहीं बल्कि चेतन से दिया गया है, सुनिये:—

"ऊर्ध्वमूलमधः शाखमश्वत्थं प्राहुरव्ययं ।
छन्दांसि यस्य पर्णानि यस्तं वेद स वेदवित ॥

(भगवद्गी० १५।१)

अर्थ—"एक ऐसा वृक्ष है जिस की जड़ ऊपर और शाखायें नीचें हैं, जो कभी नाश नहीं होता और न घटता बढ़ता है और वेद उसके पत्ते हैं, जो कोई उस (वृक्ष) को जान लेता है वही पूरा ज्ञानी माना जा सकता है—"

अवश्य ही यहां वृक्ष का दृष्टान्त परमात्मा के लिए आया है । अतः विपक्षियों का दावा बेदलील ठहर गया, अब उन्हें उचित है कि पक्षपात छोड़ कर यह स्वीकार लें कि चेतन परमात्म का दृष्टान्त होने से वृक्ष भी चेतन ही है ।

दूसरा अनुवाक।

—:o:—

पूश्न—देखो स्वामी जी ने एक मन्त्र के भाष्य में वृक्षों को जड़ मान लिया है, सुनों

" त्रिपादूर्ध्व उदैत......साशनाशने अभि ॥

(यजुः ३१।४ ,

इस मन्त्र में जो "**अशना**"और "**अनशंना**" शब्द आय हैं, उन में पृथम का अर्थ "जङ्गम जीव चेतनादि" है और दूसरे का अर्थ "पृथिव्यादिक जड़ पदार्थ" हैं। यहां पर जो स्वामी जो ने "पृथिवी आदि" लिखा है सो "आदि" शब्द से पृथिवी के कार्य वृक्ष आदि भी पृथिवी के अन्तर्गत होने से जीव रहित हैं?........"

उत्तर—यह तो बिलकुल व्यर्थ का भलाप है। भला पृथिवी शब्द के साथ "आदि" लगने से क्यों न शेष चार तत्व "जल, वायु, अग्नि, आकाश" का अभिप्राय माना जाय? अच्छा अगर आप "आदि" से पृथिवी कारण के कार्य रूप वृक्षों के शरीरों को मानते हुए उन्हें जड़ पूकट करते हैं तो इसी न्याय से फिर आप का मानुषी शरीर भी पृथिवी का कार्य रूप होने से क्यों न जड़ ही मान लिया जाय? वाह जी वाह !! आप के बुद्धि की बलिहारी है

कि वृक्षों को जड़ बनाने के धून में स्वयं मनुष्य को ही जड़ बनाये डालते हैं !!!

प्रश्न—अच्छा देखो इसी मन्त्र पर हम एक बात और प्रकट करते हैं कि इसका जो अर्थ श्री स्वामी जी ने अपनी ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका के पृष्ठ १२२ पर लिखा है वह यों है:—

" (साशना न०) सो दो प्रकार का है, एक चेतन जो कि भोजनादि के लिए चेष्टा करता और जीव संयुक्त है और दूसरा अनशन अर्थात् जो जड़ और भोजन के लिए बना है क्यों कि उसमें ज्ञान ही नहीं है और अपने आप चेष्टा भी नही कर सकता ।

अब देखो यहां स्वामी जी " भोजन के लिये " बने हुओं अर्थात् वृक्षों को जड़ तथा ज्ञान से रहित बतलाते हैं, फिर किस प्रकार तुम स्वामी जी के विरुद्ध यह पक्ष सिद्ध करना चाहते हो कि वृक्ष में जीव है ?

उत्तर—प्रथम तो इस अर्थ में भी वृक्ष शब्द नहीं है, परन्तु वस्तुतः श्री स्वामी जी की संस्कृत का भाषा अर्थ यहां पर निस्सन्देह अशुद्ध है । स्वामी जी ने संस्कृत मात्र स्वयं लिखा है, भाषा अर्थ करने का भार अन्यों पर ही था । सुनिये मूल संस्कृत और उस का ठीक भाषार्थः—

(साशनानशने०) यदेकमशनेन भोजन करणेन सह [illegible]र्त्तमानं, अन्नम जीव चेतनादि सहितं जगत् द्वितीय मन[illegible]शनम् विद्यमानं मशनं भाजनं यस्मिंस्तत् पृथिव्यादिकं च[illegible] जड़ जीव सम्बन्ध रहित जगद्वर्तते तदुभयं०

अर्थ—(यत्) जो (एकम्) एकप्रकार (अशनेनभोजन[illegible] करणेन) भोजन करने की चेष्टा के (सह) साथ (वर्त्तमानं[illegible]) विद्यमान (जीव चेतनादि) जीव चेतन आदि के (सहितं) सहित (जगत्) रचना है। (द्वितीयम्) और दूसरा प्रकार (अन[illegible]शनम्) अनशन कहलाता है अर्थात (अविद्यमानम्) अशनं भोजन [illegible] यस्मिन् जिसमें भोजन करने की चेष्टा विद्यमान नहीं है (तत्) वह (पृथिव्यादिकं) पृथिवी आदि (च) और (यत) जो (जड़ [illegible]) जड़ पदार्थ (जीव सम्बन्धरहित) अर्थात् जीव के संबध से [illegible]हित (जगत) रचना (वर्तते) है वह दूसरा प्रकार है (तत्[illegible]भयं) उन दोनों प्रकारों की (चेतन और जड़) रचनाओं [illegible] (रच कर परमात्मा उन में व्याप रहे हैं)॥

यह है ठीक शब्दार्थ स्वामी जी के सँस्कृत भाष्य का जिसे [illegible]न्हों ने इस मन्त्र में आये एक शब्द (साशनानशने) पर [illegible]क्या है। इस सँस्कृत का भाषानुवाद करने वाले पण्डितों ने [illegible]वल एक छोटी सी भूल कर डाली थी वह यह है कि उन्हों ने भोजन के लिये ऐसा अर्थ लिख दिया था

यद्यपि संस्कृत का एक साधारण विद्यार्थी भी भली प्रकार यह जानता है कि सँस्कृत में जहाँ ४ चतुर्थी विभक्ति (सम्प्रदान) होती है; केवल वहाँ ही "के लिये" भाषा मे लाया जाता है परन्तु यहाँ पर श्री स्वामी जी ने दोनें में से एक जगह भी चतुर्थी विभक्ति नहीं लिखी — प्रथम में तृतीया और दूसरे जगह द्वितीया है। इस कारण निस्सन्देह इस स्थल पर ऋगवेदादि भाष्य भूमिका में जो भाषार्थ साथ छपा है उसी में उक्त भूल हो गई थी जिस से धोखा खाकर हमारे वादियों ने ज़मीन आसमान एक कर डाला।

इस मन्त्र का आशय स्वामी जी के शब्दों में यों है कि संसार में दो प्रकार की रचनायें हैं, एक चेतन है जो खाने की चेष्टा करता है और दूसरा जड़ है जो उस के विरोध चेष्टा रहित है बतलाइये इस में वृक्षों की क्या बात आई? । स्वामी जी ने अपने विषय को स्पष्ट करने के लिये पृथिवी आदि और दूसरे जड़ पदार्थ यह भी कह दिया है किन्तु वृक्ष आदि तो नहीं कहा।

सच तो यह है कि यह प्रमाण हमारे ही पक्ष की पुष्ट करता है क्योंकि यहाँ जीव धारी को यह परिभाषा बतलाई गई है कि जो भोजन करने की चेष्टा करता हो वह जीव-धारी है यतः वृक्षों में हम लोगों के सदृश

खाने की चेष्टा विद्यमान है जैसा कि हम अन्यत्र कह आये हैं इसलिये वह जीवधारी ही हैं।

तीसरा अनुवाक।

—:०:—

प्रश्न—हम और भी वेद मंत्र उपस्थित करते हैं जिन से वृक्षों का जड़ होना सिद्ध होगा।

तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पति (यजु० २५। १८)

२—चित्रं देवानां सूर्य्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च स्वाहा।

(यजु, ७।४२)

इन मन्त्रों में जो "जगतः तस्थुषः" ये दो शब्द आये हैं, इन का अर्थ यह है:—

जगतः = जङ्गमस्य=जंगम प्राणी।

तस्थुषः स्थावरस्य=स्थावरस्य, संसारी पदार्थों का उक्त अर्थ स्वामी जी यजुर्वेद भाष्य में आया है। यहां चेतन के लिये "जगतः जङ्गम और जड़ के लिये तस्थुषः स्थावर आया है, इस लिये अवश्य ही स्थावर याने वृक्षों को जड़ कहा गया है ?

उत्तर—जरा आंखें खोल कर स्वामी जी का संस्कृत भाष्य तो पढ़ लो। दयानन्द भाष्य के हिन्दी की सनद नहीं है। देखो वहां यों आया है:—

यद्यपि संस्कृत का एक साधारण विद्यार्थी भी भली प्रकार यह जानता है कि सँस्कृत में जहाँ ४ चतुर्थी विभक्ति (सम्प्रदान) होती है; केवल वहाँ ही "के लिये" भाषा मे लाया जाता है परन्तु यहाँ पर श्री स्वामी जी ने दोनों में से एक जगह भी चतुर्थी विभक्ति नहीं लिखी — प्रथम में तृतीया और दूसरे जगह द्वितीया है। इस कारण निस्सन्देह इस स्थल पर ऋगवेदादि भाष्य भूमिका में जो भाषार्थ साथ छपा है उसी में उक्त भूल हो गई थी जिस से धोखा खाकर हमारे पक्षियों ने ज़मीन आसमान एक कर डाला।

इस मन्त्र का आशय स्वामी जी के शब्दों में यों है कि संसार म दो प्रकार की रचनायें हैं, एक चेतन है जो खाने की चेष्टा करता है और दूसरा जड़ है जो उस के विरोध चेष्टा रहित है बतलाइये इस में वृक्षों की क्या बात आई ? । स्वामी जी ने अपने विषय को स्पष्ट करने के लिये पृथिवी आदि और दूसरे जड़ पदार्थ यह भी कह दिया है किन्तु वृक्ष आदि तो नहीं कहा।

सच तो यह है कि यह प्रमाण हमारे ही पक्ष की पुष्ट करता है क्योंकि यहाँ जीव धारी को यह परिभाषा बतलाई गई है कि जो भोजन करने की चेष्टा करता हो वह जीव-धारी है यतः वृक्षों में हम लोगों के सदृश

खाने की चेष्टा विद्यमान है जैसा कि हम अन्यत्र कह आये हैं इसलिये वह जीवधारी ही हैं।

तीसरा अनुवाक।

—:o:—

प्रश्न—हम और भी वेद मंत्र उपस्थित करते हैं जिन से वृक्षों का जड़ होना सिद्ध होगा।

तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं (यजु० २५। १८)

२—चित्रं देवानां सूर्य्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च स्वाहा।

(यजु, ७।४२)

इन मन्त्रों में जो "जगतः तस्थुषः" ये दो शब्द आये हैं, इन का अर्थ यह है:—

जगतः = जङ्गमस्य=जंगम प्राणी।

तस्थुषः स्थावरस्य=स्थावरस्य, संसारी पदार्थों का उक्त अर्थ स्वामी जी यजुर्वेद भाष्य में आया है। यहां चेतन के लिये "जगतः जङ्गम और जड़ के लिये तस्थुषः स्थावर आया है, इस लिये अवश्य ही स्थावर याने वृक्षों को जड़ कहा गया है।

उत्तर—ज़रा आंखें खोल कर स्वामी जी का संस्कृत भाष्य तो पढ़ लो। दयानन्द भाष्य के हिन्दी की सनद नहीं है। देखो वहां यों आया है:—

"(जगतः) जङ्गमस्य (तस्थुषः) स्थावरस्य (चं
जीवानां समुच्चये ० ।"

अर्थात् स्वामी जी ने जङ्गम और स्थावर दोनो के साथ "**जीवों का समुच्चय**" ऐसा वाक्य के अर्थ में निकाल कर लिख दिया है; जिससे यह निर्णय होता है, कि वे "स्थावर" को भी जीवों से युक्त वर्णन कर गये हैं।

प्रश्न—परन्तु "स्थावर" तो सब भाष्यकारों ने लिखा है और इसका आशय जड़ ही माना है ?"

उत्तर—"स्थावर" का शव्दार्थ स्थिर रहने वाला है। वृक्ष स्थिर है और पर्वत भी स्थिर है, इस लिये दोनो को स्थावर कहा जाता है। आपटे के संस्कृत अंगरेज़ी कोष पृ० ११४९ पर यह शव्द आया है और यही अर्थ (fixed to one spot) लिखा है। वहां "स्थावर" की व्युत्पत्ति [स्था वरच] से बतलाई गई है, इसके सिवाय एक शव्द के कई अर्थ होते हैं,जो प्रसंगानुसार लगाये जाते हैं, स्थावर का अर्थ जहां पर्वत होगा, वहां वह जड़ वाचक होगा और दूसरे अर्थ चैतन्य वृक्ष से सरोकार न रक्खेगा। देखोभगवद्गीता १०। २५ में **स्थावराणां हिमालयः** कहा गया है। अर्थात् पर्वतों में परमात्मा की विभूति हिमालय है। अवश्य ही यहां वृक्ष का अर्थ नहीं लग सकता। इस लिये जहां

कहीं स्थावर का अर्थ वृक्ष होगा । केवल वही चेतन कहलायेगा ।

प्रश्न—पहाड़ और वृक्ष दोनों अर्थ "स्थावर" के होने से ही तो हम यह कहते हैं कि स्थावर जड़ है ?

उत्तर—"स्थावर" शब्द का अर्थ तो जड़ नहीं है, सके वाच्य दो हैं—एक वृक्ष दूसरा पर्वत, अतः इन दोनों से एक चैतन्य और दूसरा जड़ है ।

प्रश्न—हम ऐसा नहीं मान सकते, स्थावर शब्द से जो कुछ अर्थ होगा वह सब जड़ ही होगा ?

उत्तर—देखो सैन्धव शब्द के भी दो अर्थ हैं, एक घोड़ा, दूसरा लवण (नमक), अब बतलाओ क्या इन दोनों को भी जड़ ही मान लोगे ? वाह जी वाह !! अच्छा हमारी आपकी यही शर्त रही कि सैन्धव शब्द के वाच्य दोनो वस्तुओं (घोड़ा, नमक), को जिस दिन आप जड़ मान लेंगे, उसी दिन हम भी "स्थावर" शब्द के वाच्य दोनो वस्तुओं (वृक्ष, पर्वत) को जड़ मान लेंगे ।

चौथा अनुवाक ।

—:o:—

ऊपरी तीन अनुवाकों से पाठकों ने यह जान लिया गा कि वेदों में वृक्ष-जीव के निषेध के नाम से हमारे

विपत्ती लोग कैसे २ कुतर्क चला रहे हैं। अब उनका अन्तिम प्रयत्न भी देख लें।

प्रश्न– देखो ऋग्वेद अ० १।७।१२।५ (या म० १।१० १।०५) में यों आया है:–

"यो विश्वस्य जगतः प्राणतस्पतिः०"

अर्थ– जो परमात्मा प्राण धारण करने वाले समस्त जगत का या गति शील संसार का पति है"

यहां जगत को "प्राण धारण करने वाला"– विशेषण देने से यह सिद्ध होता है कि जो गतिमान् नहीं है वह प्राण धारण भी नहीं करता, या जो प्राण धारण करता है वह गतिमान् है। वृक्ष गतिमान् नहीं है, अतएव प्राणी भी नहीं है, और सजीव भी नहीं है।

(यह स्वामी दर्शनानन्द जी का कथन है)

उत्तर— इस मन्त्र से भी वृक्षों में जीव का न होना कदापि सिद्ध नहीं हो सकता। मन्त्र में आये दो शब्दों "१ जगतः २ प्राणतः" को स्वामी दर्श० जी जबरदस्त एक करके अपनी पुष्टि करना चाहते हैं, पर ऐसे व्यर्थ कार्यों से सिवाय मूर्खों (वेद न जानने वालों) के दूसरे कदापि भ्रम में नहीं पड़ सकते।

"जगतः प्राणतः" ये एक दूसरे के विशेष्य विशेषण नहीं हैं, किन्तु दोनों ही स्वतंत्र शब्द हैं, और अर्थ यह है

कि जगतः (गति वालों) (और) प्राणतः (प्राण वालों) इन दोनों प्रकार की सृष्टि का वह ब्रह्म परमात्मा पति है।

यहां प्राणतः (प्राण लेने वाले) आने से समस्त जीवधारी मनुष्य, पशु, पक्षी, वृक्ष आदि सब ही का अभिप्राय है।

इस पर सायण भाष्य देखिये :-।

य इन्द्रो विश्वस्य जगतो गच्छतः प्राणतः प्रश्वसतः प्राणि जातस्य पतिः स्वामी॥

जगतः = गम्लृ स्दृप्लृ गतौ......

प्राणतः = श्वस प्राण

(सायण भाष्य पृष्ठ ९०६ छापा लन्दन)

अर्थ- (यः) जो (इन्द्रः) इन्द्र देवता (विश्वस्य) सब (जगतः) गमन शील चलने फिरने वालों का (प्राणतः) श्वास लेने वालों अर्थात् उत्पन्न हुये प्राणियों का (पति) स्वामी है।

इस भाष्य में उन दोनों शब्दों के अर्थ यों हुए कि:—

१ जगतः = गमन शील, चलने फिरने वाले।

२ प्राणतः-श्वास लेने वाले।

यहां केवल देखना यह था कि जो स्वामी दर्शनानन्द जी ने इन दोनों शब्दों को विशेष्य-विशेषण (सिफ़त मौसूफ़) बनाना चाहा है, यह उनकी बात कहां तक ठीक है। सायण भाष्य में तो ये दोनों शब्द पृथक २ ही आये हैं,

अब देखिये स्वामी दयानन्द महाराज ने क्या लिखा

ऋग्वेद (दयानन्द) भाष्य पृष्ट १७१६ पर यह
आया है, जहां इन दोनों शब्दों के अर्थ इस प्रकार
हैं:—

(जगतः) जङ्गमस्य ॥

(प्राणतः) प्राणतो जीवतः ॥

जगतः का अर्थ "जङ्गम" लिखा है, और जङ्गम
आशय अन्यत्र (यजु ७।४२) "जङ्गम प्राणी" अर्थ लिखा
और "प्राणतः" का "जीवते जीव समूह"- अर्थ भाषा
लिखा है।

इस से स्पष्ट है कि स्वामी दयानन्द भी वि
विशेषण नहीं मानते।

अच्छा अब जरा अङ्गरेज विद्वान् की भी सुन लीजि

प्रोफ़ेसर विलसन् साहब अपने प्रथम जिल्द (ऋ
के पृष्ठ २६१ पर इसका अर्थ यों करते हैं:—

5 Who is the lord of all moving and b
thing creatures–

यहां "जगतः" का अर्थ moving चलने फिरने
किया है, और "प्राणतः का Breathing श्वासा लेने
परन्तु खास बात ध्यान देने योग्य यह है कि इन

शब्दों के बीच में एक शब्द And "और" भी लिख दिया है, जिससे यह स्पष्ट हो गया कि वस्तुतः इन दोनों शब्द पृथक २ स्वतन्त्र ही हैं, अर्थात् एक दूसरे का विशेषण नहीं है। क्योंकि व्याकरणज्ञ भली पूकार यह जानते हैं कि कहीं भी विशेष्य-विशेषण के बीच में "और" नहीं लाया जाता।

जैसे अगर हम कहें - "एक अच्छा लड़का" तो ऐसा कोई नहीं लिख सकता कि "एक अच्छा और लड़का" हां अलबत्ता यों कह सकते हैं कि "एक लड़का और बूढ़ा" सो जहां पूथम दशा में एक व्यक्ति (लड़का अकेला) था, वहां इस दूसरे वाक्य में दो व्यक्ति होगये (लड़का और बूढ़ा.) अतः सिद्ध हुआ कि इस मन्त्र में and और शब्द के आने से ये दोनों "जगतःप्राणतः शब्द आपस में विशेष्य विशेषण (सिफ़त मौसूफ़) कदापि नहीं हैं। फिर क्या उनके मनमाने अर्थ को अनर्थ न कहा जाय, जिस के आधार पर वे अपना यह हवाई किला तैयार कर रहे हैं, कि वेद वृक्षों के जीवधारी होने से इन्कारी है?

प्रश्न—स्वामी दर्शनानन्द जी का इस में "अनर्थ" क्या है। यह माना कि दो शब्द पृथक पृथक थे, उन्होंने एक को दूसरे का विशेषण बतलाने में भाष्य कारों से